सूरतुन्निसा

तम्हीदी कलिमात

क़ुरान मजीद में मक्की और मदनी सूरतों के जो ग्रुप हैं उनमें से पहला ग्रुप पाँच सूरतों पर मुश्तमिल है। इस ग्रुप में मक्की सूरत सिर्फ़ सूरतुल फ़ातिहा है, जो हुज्म में बहुत छोटी मगर मायने व मफ़हूम और अज़मत व फ़ज़ीलत में बहुत बड़ी है। इसके बाद चार सूरतें मदनी हैं: अल् बक़रह, अन्निसा, आले इमरान और अल् मायदा। यह चार सूरतें दो-दो सूरतों के दो जोड़ों की शक्ल में हैं। पहला जोड़ा सूरतुल बक़रह और सूरह आले इमरान का है, और इन्हें खुद रसूल अल्लाह ﷺ ने एक मुश्तरक नाम दिया है "अज्ज़हरावैन"। इन दो सूरतों में जो मुनास्बतें और मुशाबहतें हैं वह वह तर्जुमे के दौरान तफ़सील के साथ हमारे सामने आती रही हैं। इनमें निस्बते ज़ौजियत किस ऐतबार से है और यह एक-दूसरे की तकमील किस पहलु से करती हैं, यह बात भी सामने आ चुकी है।

अब दो सूरतें सूरतुन्निसा और सूरतुल मायदा जोड़े की शक्ल में आ रही हैं। इन दो जोड़ों में एक नुमाया फ़र्क़ (contrast) यह नज़र आयेगा कि साबक़ा (पिछली) दो सूरतों में पहले हुरूफ़े मुक़त्तआत हैं और फिर दोनों में क़ुराने मजीद कुतबे समाविया की अज़मत का बयान है, जबकि इन दोनों सूरतों में इस तरह की कोई तम्हीदी गुफ्तुगू नहीं है, बल्कि बराहे रास्त ख़िताब हो रहा है। अलबत्ता निस्बते ज़ौजियत के ऐतबार से इनमें यह फ़र्क़ है कि सूरतुन्निसा के आगाज़ में सीगा-ए-ख़िताब "يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ" (ऐ लोगों) है, यानि ख़िताब आम है, और सूरतुल मायदा का आगाज़ होता है "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" के सीगे से, यानि वहाँ ख़िताब ख़ास तौर पर इंसानों में से उन लोगों से है जो ईमान के दावेदार हैं। बाक़ी जिस तरह सूरतुल बक़रह और आले इमरान निस्फ़ैन में मुन्क़सिम हैं इस तरह का मामला इन दोनों सूरतों का नहीं है।

अपने असलूब के ऐतबार से यह दोनों सूरतें सूरतुल बक़रह के निस्फ़े सानी के मुशाबेह हैं। यानि चंद मज़ामीन की लड़ियाँ चल रही हैं, लेकिन एक रस्सी की तरह आपस में इस तरह बटी हुई और गुथी हुई हैं कि वह लड़ियाँ मुसलसल नहीं बल्कि कटवाँ नज़र आती हैं। अगर आप चार मुख्तलिफ़ रंगों की लड़ियों को आपस में बट कर रस्सी की शक्ल दे दें तो उनमें से कोई सा रंग भी मुसलसल नज़र नहीं आयेगा, बल्कि बारी-बारी चारों रंग नज़र आते रहेंगे। अब अगर आप उस रस्सी को खोल देंगे तो हर एक लड़ी अलग हो जायेगी और चारों रंग अलग-अलग नज़र आयेंगे। सूरतुल बक़रह के निस्फ़े सानी के मज़ामीन के बारे में मैंने बताया था कि यह गोया चार लड़ियाँ हैं, जिनमें दो का ताल्लुक़ शरीअत से है और दो का जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह से। शरीअत की दो लड़ियों में से एक इबादात की और दूसरी मामलात की है, जबकि जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह की लड़ियों में से एक जिहाद बिल माल यानि इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह और दूसरी जिहाद बिल नफ्स की आखरी शक्ल यानि क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह है।

यहाँ सूरतुन्निसा में भी आप देखेंगे कि तीन लड़ियाँ इसी तरह आपस में गुथी हुई हैं और इनके रंग कटवाँ नज़र आते हैं, लेकिन अगर आप इन सबको अलैहदा-अलैहदा कर लें तो इनमें से हर एक अपनी जगह एक अलग मज़मून बन जायेगा। यह तीन लड़ियाँ ख़िताब के ऐतबार से हैं। चुनाँचे एक लड़ी तो वह है जिसमें ख़िताब अहले ईमान से है, और सूरतुल बक़रह की तरह इसके ज़ेल में वही चार चीज़ें आ रही हैं: क़िताल, इन्फ़ाक़, अहकामे शरीअत और इबादात। दूसरी लड़ी में ख़िताब अहले किताब से है और इसमें नसारा और यहूद दोनों शामिल हैं। पहली दो सूरतों में यहूद व नसारा का मामला अलैहदा-अलैहदा था, जबकि इस सूरत में अहले किताब के ज़ेल में यह दोनों मिले-जुले हैं। तीसरी लड़ी इस सूरह मुबारका का वह सबसे बड़ा हिस्सा है जो मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब पर मुश्तमिल है, लेकिन अक्सर व बेशतर लोग वहाँ बात समझ नहीं पाते। इसलिये कि सीगा-ए-ख़िताब वहाँ भी "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" होता है। वाज़ेह रहे कि पूरे क़ुरान में कहीं भी "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ نَافَقُوْا" के अल्फ़ाज़ नहीं आये। सीगा-ए-ख़िताब "يٰٓاَيُّهَا الْكٰفِرُوْنَ" भी है, "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا" भी है और "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" भी, लेकिन "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ نَافَقُوْا"

कहीं नहीं है। इसलिये कि मुनाफ़िक़ भी क़ानूनन तो मुस्लमान ही होते थे। तो असल में यह पहचानने के लिये बड़ी गहरी नज़र की ज़रूरत है कि किसी मक़ाम पर "يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" के अल्फ़ाज़ में रुए सुखन मोमिनीन सादिक़ीन की तरफ़ है या मुनाफ़िक़ीन की तरफ़। अगर यह फ़र्क़ ना किया जाये तो बाज़ मक़ामात पर बड़ी गलतफ़हमी हो जाती है। मसलन सूरह अत्तौबा का यह मक़ाम मुलाहिज़ा कीजिये: (आयत:38) {يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَا لَكُمْ اِذَا قِيْلَ لَكُمُ انْفِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اثَّاقَلْتُمْ اِلَى الْاَرْضِ ۭ} "ऐ अहले ईमान! तुम्हें क्या हो जाता है जब तुम्हें कहा जाता है कि निकलो अल्लाह की राह में तो तुम ज़मीन में धँसे जाते हो?" इस अन्दाज़े तखातब से एक आम सूए ज़न पैदा हो सकता है कि शायद यह आम मुसलमानों का हाल था। हालाँकि इस तर्ज़े अमल का मुज़ाहिरा मुसलमानों की तरफ़ से नहीं बल्कि मुनाफ़िक़ीन की तरफ़ से होता था और वहाँ यह आम मुसलमानों का नहीं, मुनाफ़िक़ीन का मसला था। चुनाँचे रुए सुखन मुनाफ़िक़ीन ही की तरफ़ है। मोमिनीन सादिक़ीन तो हर वक़्त खुले दिल से माल व जान की क़ुर्बानी के लिये आमादा रहते थे। गोया:

वापस नहीं फेरा कोई फ़रमान जूनून का
तन्हा नहीं लौटी कभी आवाज़ जरस की!

तो असल में देखना यह होता है कि किस आयत में रुए सुखन किसकी तरफ़ है।

मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब के ऐतबार से यह सूरह मुबारका अहमतरीन है। सूरतुल बक़रह में तो कहीं लफ्ज़ निफ़ाक़ आया ही नहीं। यह हिकमते खुदावन्दी है कि इस मर्ज़ को पहले छुपा कर रखा और इसकी सिर्फ़ अलामात बयान कर दीं कि जो कोई भी अपने अन्दर इन अलामात को देखे वह मुतनब्बा (सावधान) हो जाये और अपने इलाज की तरफ़ मुतवज्जा हो जाये। लेकिन जो लोग इस तरह मुतवज्जा नहीं होते तो मालूम हुआ कि उनको अब ज़रा नुमाया करना ज़रूरी है और बात ज़रा उरिया अंदाज़ से करनी पड़ेगी। चुनाँचे सूरह आले इमरान में एक-दो जगह निफ़ाक़ का लफ्ज़ आ गया। लेकिन अब यहाँ सूरतुन्निसा में सबसे बड़ा हिस्सा मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब पर मुश्तमिल है। मेरा तजज़िया यह है कि इस सूरत की 176 आयात में से 55 आयात में रुए सुखन मोमिनीन सादिक़ीन की तरफ़ है, सिर्फ़ 37 आयात में अहले किताब यानि यहूद व नसारा से मुश्तरक तौर पर ख़िताब है, जबकि 84 आयात में ख़िताब मुनाफ़िक़ीन से है। लेकिन याद रहे कि जहाँ भी उनसे बात होगी "يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" के हवाले से होगी। इसलिये कि ईमान के दावेदार तो वह भी थे। मुनाफ़िक़ वही तो होता है जो ईमान का दावा करता है मगर हक़ीक़त में ईमान से तही दामन होता है, चाहे वह शऊरी तौर पर मुनाफ़िक़ हो चाहे ग़ैर शऊरी तौर पर।

सूरतुन्निसा और सूरतुल मायदा के माबैन एक फ़र्क़ नोट कर लीजिये। इंसानी तमद्दुन में सबसे बुनियादी चीज़ मआशरा है, और मआशरे में बुनियादी अहमियत औरत और मर्द के ताल्लुक़ को हासिल है। दूसरे यह कि मआशरे में कुछ कमज़ोर तबक़ात होते हैं, जिनके हुक़ूक़ का लिहाज़ करना ज़रूरी है। यह मज़मून आपको सूरतुन्निसा में मिलेगा। आइली क़वानीन सूरतुल बक़रह में तफ़सील से आ चुके हैं। एक मर्द और एक औरत के दरमियान अज़्दवाज का जो रिश्ता जुड़ता है जिससे फिर खानदान वजूद में आता है, जो मआशरे की बुनियादी इकाई (unit) और उसकी जड़ और बुनियाद है, इससे मुताल्लिक़ तफ़सीली हिदायात सूरतुल बक़रह में आ चुकी हैं। सूरह आले इमरान इस ऐतबार से मुनफ़रिद है कि उसमें शरीअत के अहकाम नहीं हैं, सिवाये उस एक हुक्म के जो सूद के बारे में आया है (आयत:130): {يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوا الرِّبٰوٓا اَضْعَافًا مُّضٰعَفَةً ۠}। लेकिन अब यहाँ सूरतुन्निसा में तमद्दुन की मआशरती सतह पर मज़ीद हिदायात दी जा रही हैं। ख़ास तौर पर उस मआशरे के जो दबे हुए और पिसे हुए तबक़ात थे उनकी हुर्रियत व आज़ादी, उनके बेहतर मक़ाम और उनके हुक़ूक़ की तरफ़ मुतवज्जा किया जा रहा है।

मआशरे में जिन्स (sex) का मामला भी बहुत अहम है। किसी मआशरे में अगर जिन्सी मामलात पर क़दग़नें (control) ना हों और वह जिन्सी फ़साद का शिकार हो जाये तो वहाँ तबाही फैल जायेगी। इस ज़िमन में इब्तदाई अहकाम इस सूरत में आये हैं कि एक इस्लामी मआशरे में जिन्सी नज़्म व ज़ब्त (sex-discipline) कैसे क़ायम किया जाये और जिन्सी बेराहरवी से कैसे निबटा जाये। तो इस तरीक़े से तमद्दुन की बुनियादी

मंज़िल पर गुफ्तुगू हो रही है। सूरतुल मायदा में तमद्दुन की बुलन्दतरीन मंज़िल रियासत ज़ेरे बहस आयेगी और आला सतह पर अदालती निज़ाम के लिये हिदायात दी जाएँगी कि चोरी, डाका वगैरह का सद्दे बाब कैसे किया जायेगा। इस ज़िमन में हुदूद व ताज़ीरात (सज़ाएँ) भी बयान की जाएँगी। बाक़ी सूरतुन्निसा की तरह सूरतुल मायदा में भी अहले किताब से फ़ैसलाकुन ख़िताब है।

मैंने आगाज़ में अर्ज़ किया था कि पहले ग्रुप की इन चार मदनी सूरतों में दो मज़मून मुतावाज़ी चलते हैं। पहला मज़मून शरीअते इस्लामी का है और सूरतुल बक़रह में अहकामे शरीअत का इब्तदाई ख़ाका दे दिया गया है, जबकि शरीअत के तकमीली अहकाम सूरतुल मायदा में हैं। इन सूरतों में दूसरा मज़मून अहले किताब से ख़िताब है और वह भी तदरीजन आगे बढ़ते हुए सूरतुल मायदा में अपनी तकमीली सूरत को पहुँचता है। चुनाँचे अहले किताब से आखरी और फ़ैसलाकुन बातें सूरतुल मायदा में मिलती हैं। इन तम्हीदी कलिमात के बाद अब हम इस सूरह मुबारका का मुताअला शुरू करते हैं।

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

आयात 1 से 10 तक

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمُ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا
وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيْرًا وَّنِسَآءً ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْ تَسَآءَلُوْنَ بِهٖ وَالْاَرْحَامَ ۭ اِنَّ
اللّٰهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيْبًا ۝١ وَاٰتُوا الْيَتٰمٰٓى اَمْوَالَهُمْ وَلَا تَتَبَدَّلُوا الْخَبِيْثَ
بِالطَّيِّبِ ۠ وَلَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَهُمْ اِلٰٓى اَمْوَالِكُمْ ۭ اِنَّهٗ كَانَ حُوْبًا كَبِيْرًا ۝٢ وَاِنْ خِفْتُمْ
اَلَّا تُقْسِطُوْا فِي الْيَتٰمٰى فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَآءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ ۚ
فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تَعْدِلُوْا فَوَاحِدَةً اَوْ مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ۭ ذٰلِكَ اَدْنٰٓى اَلَّا تَعُوْلُوْا ۝٣

وَاٰتُوا النِّسَآءَ صَدُقٰتِهِنَّ نِحْلَةً ۭ فَاِنْ طِبْنَ لَكُمْ عَنْ شَيْءٍ مِّنْهُ نَفْسًا فَكُلُوْهُ هَنِيْۗـــًٔا
مَّرِيْۗـــًٔا ۝٤ وَلَا تُؤْتُوا السُّفَهَاۗءَ اَمْوَالَكُمُ الَّتِيْ جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ قِيٰمًا وَّارْزُقُوْھُمْ
فِيْهَا وَاكْسُوْھُمْ وَقُوْلُوْا لَھُمْ قَوْلًا مَّعْرُوْفًا ۝٥ وَابْتَلُوا الْيَتٰمٰى حَتّٰٓي اِذَا بَلَغُوا
النِّكَاحَ ۚ فَاِنْ اٰنَسْتُمْ مِّنْھُمْ رُشْدًا فَادْفَعُوْٓا اِلَيْهِمْ اَمْوَالَھُمْ ۚ وَلَا تَاْكُلُوْھَآ اِسْرَافًا
وَّبِدَارًا اَنْ يَّكْبَرُوْا ۭ وَمَنْ كَانَ غَنِيًّا فَلْيَسْتَعْفِفْ ۚ وَمَنْ كَانَ فَقِيْرًا فَلْيَاْكُلْ
بِالْمَعْرُوْفِ ۭ فَاِذَا دَفَعْتُمْ اِلَيْهِمْ اَمْوَالَھُمْ فَاَشْهِدُوْا عَلَيْهِمْ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ حَسِيْبًا
۝٦ لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ ۠ وَلِلنِّسَاۗءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ
الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ مِمَّا قَلَّ مِنْهُ اَوْ كَثُرَ ۭ نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا ۝٧ وَاِذَا حَضَرَ
الْقِسْمَةَ اُولُوا الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنُ فَارْزُقُوْھُمْ مِّنْهُ وَقُوْلُوْا لَھُمْ قَوْلًا
مَّعْرُوْفًا ۝٨ وَلْيَخْشَ الَّذِيْنَ لَوْ تَرَكُوْا مِنْ خَلْفِھِمْ ذُرِّيَّةً ضِعٰفًا خَافُوْا عَلَيْھِمْ ۠
فَلْيَتَّقُوا اللّٰهَ وَلْيَقُوْلُوْا قَوْلًا سَدِيْدًا ۝٩ اِنَّ الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى ظُلْمًا
اِنَّمَا يَاْكُلُوْنَ فِيْ بُطُوْنِھِمْ نَارًا ۭ وَسَيَصْلَوْنَ سَعِيْرًا ۝١٠

आयत 1

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمُ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ

"ऐ लोगों अपने उस रब का तक़वा इख़्तियार करो जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया"

देखिये मआशरती मसाइल के ज़िमन में गुफ्तुगू इस बुनियादी बात से शुरू की गयी है कि अपने खालिक़ व मालिक का तक़वा इख़्तियार करो।

وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا

"और उसी से उसका जोड़ा बनाया"

नोट कीजिये की यहाँ यह अल्फ़ाज़ नहीं हैं कि "उसने तुम्हें एक आदम से पैदा किया और उसी (आदम) से उसका जोड़ा बनाया", बल्कि "نَّفۡسٍ وَّاحِدَةٍ" (एक जान) का लफ्ज़ है। गोया इससे यह भी मुराद हो सकती है कि ऐन आदम (अलै०) ही से उनका जोड़ा बनाया गया हो, जैसा की बाज़ रिवायात से भी इशारा मिलता है, और यह भी मुराद हो सकती है कि आदम की नौअ से उनका जोड़ा बनाया गया, जैसा की बाज़ मुफ़स्सिरीन का ख्याल है। इसलिये कि नौअ एक है, जिन्सें दो हैं। इन्सान (Human Beings) नौअ (Species) एक है, लेकिन उसके अन्दर ही से जो जिन्सी तफ़रीक़ (Sexual differentiation) हुई है, उसके हवाले से उसका जोड़ा बनाया है।

وَبَثَّ مِنۡهُمَا رِجَالًا كَثِيۡرًا وَّنِسَآءً

"और उन दोनों से फैला दिये (ज़मीन में) कसीर तादाद में मर्द और औरतें।"

"مِنۡهُمَا" से मुराद यक़ीनन आदम व हव्वा हैं। यानि अगर आप इस तमद्दुने इंसानी का सुराग लगाने के लिये पीछे से पीछे जाएँगे तो आगाज़ में एक इंसानी जोड़ा (आदम व हव्वा) पाएँगे। इस रिश्ते से पूरी नौए इंसानी इस सतह पर जाकर रिश्ता-ए-अख़ुवत में मुन्सलिक (बंधन) हो जाती है। एक तो सगे बहन-भाई हैं। दादा-दादी पर जाकर cousins का हल्क़ा बन जाता है। इससे ऊपर परदादा-परदादी पर जाकर एक और वसीअ हल्क़ा बन जाता है। इसी तरह चलते जाइये तो मालूम होगा कि पूरी नौए इंसानी बिलआखिर एक जोड़े (आदम व हव्वा) की औलाद है।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِىۡ تَسَآءَلُوۡنَ بِهٖ وَالۡاَرۡحَامَ

"और तक़वा इख़्तियार करो उस अल्लाह का जिसका तुम एक-दूसरे को वास्ता देते हो, और रहमी रिश्तों का लिहाज़ रखो।"

तक़वा की ताकीद मुलाहिज़ा कीजिये कि एक ही आयत में दूसरी मर्तबा फिर तक़वा का हुक्म है। फ़रमाया कि उस अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो जिसका तुम एक-दूसरे को वास्ता देते हो। आपको मालूम है कि फ़क़ीर भी माँगता है तो अल्लाह के नाम पर माँगता है, अल्लाह के वास्ते माँगता है, और अक्सर व बेशतर जो तमद्दुनी मामलात होते हैं उनमें भी अल्लाह का वास्ता दिया जाता है। घरेलू झगड़ों को जब निबटाया जाता है तो आखिरकार कहना पड़ता है कि अल्लाह का नाम मानो और अपनी इस ज़िद से बाज़ आ जाओ! तो जहाँ आखरी अपील अल्लाह ही के हवाले से करनी है तो अगर उसका तक़वा इख़्तियार करो तो यह झगड़े होंगे ही नहीं। उसने इस मआशरे के मुख्तलिफ़ तबक़ात के हुक़ूक़ मुअय्यन कर दिये हैं, मसलन मर्द और औरत के हुक़ूक़, रब्बुल माल और आमिल के हुक़ूक़, फ़र्द और इज्तमाइयत के हुक़ूक़ वगैरह। अगर अल्लाह के अहकाम की पैरवी की जाये और उसके आयद करदा हुक़ूक़ व फ़राइज़ की पाबन्दी की जाये तो झगड़ा नहीं होगा।

मज़ीद फ़रमाया की रहमी रिश्तों का लिहाज़ रखो! जैसा की अभी बताया गया कि रहमी रिश्तों का अव्वलीन दायरा बहन-भाई हैं, जो अपने वालिदैन की औलाद हैं। फिर दादा-दादी पर जाकर एक बड़ी तादाद पर मुश्तमिल दूसरा दायरा वजूद में आता है। यह रहमी रिश्ते हैं। इन्हीं रहमी रिश्तों को फैलाते जाइये तो कुल बनी आदम और कुल बिनाते हव्वा सब एक ही नस्ल से हैं, एक ही बाप और एक ही माँ की औलाद हैं।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيۡكُمۡ رَقِيۡبًا ①

"यक़ीनन अल्लाह तुम पर निगरान है।"

यह तक़वा की रूह है। अगर हर वक़्त यह ख्याल रहे कि कोई मुझे देख रहा है, मेरा हर अमल उसकी निगाह में है, कोई अमल उससे छुपा हुआ नहीं है तो इन्सान का दिल अल्लाह के तक़वे से मामूर हो जायेगा। अगर यह इस्तेहज़ार (ध्यान) रहे कि चाहे मैंने सब दरवाज़े और खिड़कियाँ बंद कर दीं और परदे गिरा दिये हैं लेकिन एक आँख से मैं नहीं छुप सकता तो यही तक़वा है। और अगर तक़वा होगा तो फिर अल्लाह के हर हुक्म की पाबन्दी की जायेगी।

यह हिकमते नबवी है कि इस आयत को नबी अकरम ﷺ ने ख़ुत्बा-ए-निकाह में शामिल फ़रमाया। निकाह का मौक़ा वह होता है कि एक मर्द

और एक औरत के दरमियान रिश्ता-ए-अज़्द्वाज क़ायम हो रहा है। यानि आदम का एक बेटा और हव्वा की एक बेटी फिर उसी रिश्ते में मुन्सलिक हो रहे हैं जिसमें आदम और हव्वा थे। जिस तरह उन दोनों से नस्ल फैली है उसी तरह अब इन दोनों से नस्ल आगे बढ़ेगी। लेकिन इस पूरे मआशरती मामले में, खानदानी मामलात में, आइली मामलात में अल्लाह का तक़वा इन्तहाई अहम है। जैसे हमने सूरतुल बक़रह में देखा कि बार-बार { وَاتَّقُوا اللّٰهَ } की ताकीद फ़रमायी गयी। इसलिये कि अगर तक़वा नहीं होगा तो फिर खाली क़ानून मौअस्सर नहीं होगा। क़ानून को तो तख़्ता-ए-मश्क़ भी बनाया जा सकता है कि बज़ाहिर क़ानून का तक़ाज़ा पूरा हो रहा हो लेकिन उसकी रूह बिल्कुल ख़त्म होकर रह जाये। सूरतुल बक़रह में इसी तर्ज़े अमल के बारे में फ़रमाया गया कि: { وَلَا تَتَّخِذُوْٓا اٰيٰتِ اللّٰهِ هُزُوًا ۡ } (आयत:231) "और अल्लाह की आयात को मज़ाक़ ना बना लो।"

आयत 2

وَاٰتُوا الْيَتٰمٰٓى اَمْوَالَهُمْ

"और यतीमों के माल उनके हवाले कर दो"

मआशरे के दबे हुए तबक़ात में से यतीम एक अहम तबक़ा था। दौरे जाहिलियत में उनके कोई हुक़ूक़ नहीं थे और उनके माल हड़प कर लिये जाते थे। वह बहुत कमज़ोर थे।

وَلَا تَتَبَدَّلُوا الْخَبِيْثَ بِالطَّيِّبِ ۪

"और (अपने) बुरे माल को (उनके) अच्छे माल से ना बदलो"

ऐसा हरगिज़ ना हो कि यतीमों के माल में से अच्छा-अच्छा ले लिया और अपना रद्दी माल उसमें शामिल कर दिया।

وَلَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَهُمْ اِلٰٓى اَمْوَالِكُمْ ۭ

"और उनके माल अपने मालों में शामिल करके हड़प ना करो।"

اِنَّهٗ كَانَ حُوْبًا كَبِيْرًا ②

"यक़ीनन यह बहुत बड़ा गुना है।"

यतीमों के बाज़ सरपरस्त जो तक़वा और खौफ़-ए-ख़ुदा से तही दामन होते हैं, अव्वल तो उनका माल हड़प कर जाते हैं, और अगर ऐसा ना भी करें तो उनका अच्छा माल ख़ुर्द-बर्द (गबन) करके अपना रद्दी और बेकार माल उसमें शामिल कर देते हैं और इस तरह तादाद पूरी कर देते हैं। फिर ऐसा भी होता है कि उनके माल को अपने माल के साथ मिला लेते हैं ताकि उसे बाआसानी हड़प कर सकें। उनको ऐसे सब हथकण्डों से रोक दिया गया।

आयत 3

وَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوْا فِي الْيَتٰمٰى

"और अगर तुम्हें अन्देशा हो कि तुम यतीम बच्चियों के बारे में इन्साफ़ नहीं कर सकोगे"

فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَاۗءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ ۚ

"तो (उन्हें अपने निकाह में ना लाओ बल्कि) जो औरतें तुम्हें पसंद हों उनसे निकाह कर लो दो-दो, तीन-तीन, चार-चार तक।"

इस आयत में "यतामा" से मुराद यतीम बच्चियाँ और ख़्वातीन हैं। यतीम लड़के तो उम्र की एक ख़ास हद को पहुँचने के बाद अपनी आज़ाद मर्ज़ी से ज़िन्दगी गुज़ार लेते थे, लेकिन यतीम लड़कियों का मामला यह होता था कि उनके वली और सरपरस्त उनके साथ निकाह भी कर लेते थे। इस तरह यतीम लड़कियों के माल भी उनके क़ब्ज़े में आ जाते थे, और यतीम लड़कियों के पीछे उनके हुक़ूक़ की निगहदाश्त करने वाला भी कोई नहीं होता था। अगर माँ-बाप होते तो ज़ाहिर है कि वह बच्ची के हुक़ूक़ के बारे में भी कोई बात करते। लिहाज़ा उनका कोई परसाने हाल नहीं होता था। चुनाँचे फ़रमाया गया कि अगर तुम्हें अन्देशा हो कि तुम उनके बारे में

इन्साफ़ नहीं कर सकोगे तो फिर तुम उन यतीम बच्चियों से निकाह मत करो, बल्कि दूसरी औरतें जो तुम्हें पसंद हों उनसे निकाह करो। अगर ज़रूरत हो तो दो-दो, तीन-तीन, चार-चार की हद तक निकाह कर सकते हो, इसकी तुम्हें इजाज़त है। लेकिन तुम यतीम बच्चियों के वली बन कर उनकी शादियाँ कहीं और करो ताकि तुम उनके हुक़ूक़ के पासबान बन कर खड़े हो सको। वरना अगर तुमने उनको अपने घरों में डाल लिया तो कौन होगा जो उनके हुक़ूक़ के बारे में तुमसे बाज़पुर्स कर सके? मुन्करीन सुन्नत और मुन्करीन हदीस ने इस आयत की मुख्तलिफ़ ताबीरात की हैं, जो यहाँ बयान नहीं की जा सकतीं। इसका सही मफ़हूम यही है जो सलफ़ से चला आ रहा है और जो हज़रत आयशा सिद्दीक़ा (रज़ि०) से मरवी है। मज़ीद बराँ तादादे अज़द्वाज के बारे में यही एक आयत क़ुरान मजीद में है। इस आयत की रू से तादादे अज़द्वाज को महदूद किया गया है और चार से ज़्यादा बीवियाँ रखने को ममनूअ (prohibited) कर दिया गया है।

فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً

"लेकिन अगर तुम्हें अन्देशा हो कि उनके दरमियान अद्ल ना कर सकोगे तो फिर एक ही पर बस करो"

यह जो हमने इजाज़त दी है कि दो-दो, तीन-तीन, चार-चार औरतों से निकाह कर लो, इसकी शर्ते लाज़िम यह है कि बीवियों के दरमियान अद्ल करो। अगर तम्हें अन्देशा हो कि इस शर्त को पूरा नहीं कर सकोगे और उनमें बराबरी ना कर सकोगे तो फिर एक ही शादी करो, इससे ज़्यादा नहीं। बीवियों के माबैन अद्ल व इन्साफ़ में हर उस चीज़ का ऐतबार होगा जो शुमार में आ सकती है। मसलन हर बीवी के पास जो वक़्त गुज़ारा जाये उसमें मसावात होनी चाहिये। नान-नफ्क़ा, ज़ेवरात, कपड़े और दीगर माल व असबाब, गर्ज़ यह कि तमाम माद्दी चीज़ें जो देखी-भाली जा सकती हैं उनमें इन्साफ़ और अद्ल लाज़िम है। अलबत्ता दिली मैलान और रुझान जिस पर इन्सान को क़ाबू नहीं होता, उसमें गिरफ़्त नहीं है।

أَوْ مَا مَلَكَتْ أَيْمَانُكُمْ

"या वह औरतें जो तुम्हारी मिल्के यमीन हों।"

यानि वह औरतें जो जंगों में गिरफ़्तार होकर आईं और हुकूमत की तरफ़ से लोगों में तक़सीम कर दी जायें। वह एक अलैहदा मामला है और उनकी तादाद पर कोई तहदीद नहीं है।

ذَٰلِكَ أَدْنَىٰ أَلَّا تَعُولُوا ۝٣

"यह इससे क़रीबतर है कि तुम एक ही तरफ़ को ना झुक पड़ो।"

कि बस एक ही बीवी की तरफ़ मैलान है और, जैसा कि आगे आयेगा, मुअल्लक़ होकर रह गयी हैं कि ना वह शौहर वालियाँ हैं और ना आज़ाद हैं कि कहीं और निकाह कर लें।

आयत 4

وَآتُوا النِّسَاءَ صَدُقَاتِهِنَّ نِحْلَةً

"और औरतों को उनके महर खुशदिली के साथ दिया करो।"

औरतों के महर तावान समझ कर ना दिया करो, बल्कि फ़र्ज़ जानते हुए अदा किया करो। صَدُقَاتٌ صِدَاقٌ की जमा है, जबकि صَدَقَةٌ की जमा صَدَقَاتٌ आती है।

فَإِنْ طِبْنَ لَكُمْ عَنْ شَيْءٍ مِنْهُ نَفْسًا

"फिर अगर वह ख़ुद अपनी रज़ामंदी से उसमें से कोई चीज़ तुम्हें छोड़ दें"

तुमने जो महर मुक़र्रर किया था वह उन्हें अदा कर दिया, अब वह तुम्हें उसमें से कोई चीज़ हदिया कर रही हैं, तोहफ़ा दे रही हैं तो कोई हर्ज नहीं।

“तो तुम उसको खाओ मज़े से ख़ुशग्वारी से।” فَكُلُوْهُ هَنِيْٓـًٔا مَّرِيْٓـًٔا ۝

तुम उसे बेखटके इस्तेमाल में ला सकते हो, इसमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन यह हो उनकी मर्ज़ी से, ज़बरदस्ती और ज़बर करके ना ले लिया जाये।

आयत 5

“और मत पकड़ा दो नासमझों को अपने वह माल जिनको अल्लाह ने तुम्हारे गुज़रान का ज़रिया बनाया है” وَلَا تُؤْتُوا السُّفَهَاۗءَ اَمْوَالَكُمُ الَّتِىْ جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ قِيٰمًا

मआशरे में एक तबक़ा ऐसा भी होता है जो नादानों और नासमझ लोगों (سُفَهاء) पर मुश्तमिल होता है। इनमें बच्चे भी शामिल हैं जो अभी सन शऊर को नहीं पहुँचे। ऐसे बच्चे अगर यतीम हो जायें तो वह विरासत में मिलने वाले माल को अलल्लो-तलल्लो में उड़ा सकते हैं। लिहाज़ा यहाँ हिदायत की गयी है कि ऐसे माल के बेजा इस्तेमाल की मआशरती सतह पर रोकथाम होनी चाहिये। यह तसव्वुर नाक़ाबिले क़ुबूल है कि मेरा माल है, मैं जैसे चाहूँ ख़र्च करूँ! चुनाँचे इस माल को “اَمْوَالَكُمْ” कहा गया कि यह असल में मआशरे की मुश्तरिक बहबूद (कल्याण) के लिये है। अगरचे इन्फ़रादी मिल्कियत है, लेकिन फिर भी इसे मआशरे की मुश्तरिक बहबूद में ख़र्च होना चाहिये।

“हाँ उन्हें उसमें से खिलाते और पहनाते रहो” وَّارْزُقُوْھُمْ فِيْهَا وَاكْسُوْھُمْ

“और उनसे बात किया करो अच्छे अंदाज़ में।” وَقُوْلُوْا لَھُمْ قَوْلًا مَّعْرُوْفًا ۝

इसी उसूल के तहत बिरतानवी दौर के हिन्दुस्तान में Court of wards मुक़र्रर कर दिये जाते थे। अगर कोई बड़ा जागीरदार या नवाब फ़ौत हो जाता और यह अन्देशा महसूस होता कि उसका बेटा आवारा है और वह सब कुछ उड़ा देगा, ख़त्म कर देगा तो हुकूमत उस मीरास को अपनी हिफ़ाज़त में ले लेती और वुरसा के लिये उसमें से सालाना वज़ीफ़ा मुक़र्रर कर देती। बाक़ी सब माल व असबाब जमा रहता था ताकि यह उनकी आइन्दा नस्ल के काम आ सके।

आयत 6

“और यतीमों की जाँच-परख करते रहो यहाँ तक कि वह निकाह की उम्र को पहुँच जायें।” وَابْتَلُوا الْيَتٰمٰى حَتّٰٓي اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ ۚ

“फिर अगर तुम उनके अन्दर सूझ-बूझ पाओ” فَاِنْ اٰنَسْتُمْ مِّنْھُمْ رُشْدًا

तुम महसूस करो कि अब यह बाशऊर हो गये हैं, समझदार हो गये हैं।

“तो उनके अमवाल उनके हवाले कर दो।” فَادْفَعُوْٓا اِلَيْھِمْ اَمْوَالَھُمْ ۚ

“और तुम उसे हड़प ना कर जाओ इसराफ़ और जल्दीबाज़ी करके (इस डर से) कि वह बड़े हो जाएँगे।” وَلَا تَاْكُلُوْهَاۤ اِسْرَافًا وَّبِدَارًا اَنْ يَّكْبَرُوْا ؕ

ऐसा ना हो कि तुम यतीमों का माल ज़रूरत से ज़्यादा और जल्दबाज़ी में ख़र्च करने लगो, इस ख्याल से कि बच्चे जवान हो जाएँगे तो यह माल उनके हवाले करना है, लिहाज़ा इससे पहले-पहले हम इसमें से जितना हड़प कर सकें कर जायें।

“और जो कोई ग़नी हो उसको चाहिये कि वह परहेज़ करे।” وَمَنْ كَانَ غَنِيًّا فَلْيَسْتَعْفِفْ ۚ

यतीम का वली अगर ख़ुद ग़नी है, अल्लाह ने उसको दे रखा है, उसके पास कशाइश है तो उसे यतीम के माल में से कुछ भी लेने का हक़ नहीं है। फिर उसे यतीम के माल से बचते रहना चाहिये।

“और जो कोई मोहताज हो तो खाये दस्तूर के मुताबिक़।” وَمَنْ كَانَ فَقِيْرًا فَلْيَاْكُلْ بِالْمَعْرُوْفِ ؕ

अगर कोई ख़ुद तंगदस्त है, मोहताज है और वह यतीम की निगहदाश्त भी कर रहा है, उसका कुछ वक़्त भी उस पर सर्फ़ हो रहा है तो मारूफ़ तरीक़े से अगर वह यतीम के माल में से कुछ खा भी ले तो कुछ हर्ज नहीं है। इस्लाम की तालीम बड़ी फ़ितरी है, इसमें ग़ैरफ़ितरी बन्दिशें नहीं हैं जिन पर अमल करना नामुमकिन हो जाये।

“फिर जब तुम उनके माल उनके हवाले करो तो इस पर गवाह ठहरा लो।” فَاِذَا دَفَعْتُمْ اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ فَاَشْهِدُوْا عَلَيْهِمْ ؕ

उनका माल व मताअ गवाहों की मौजूदगी में उनके हवाले किया जाये कि उनकी यह-यह चीज़ें आज तक मेरी तहवील में थीं, अब मैंने इनके हवाले कर दीं।

“और अल्लाह काफ़ी है हिसाब लेने के लिये।” وَكَفٰى بِاللّٰهِ حَسِيْبًا ۝

यह दुनिया का मामला है कि इसके लिये लिखत-पढ़त और शहादत है। बाक़ी असल हिसाब तो तुम्हें अल्लाह के यहाँ जाकर देना है।

आयत 7

“मर्दों के लिये भी हिस्सा है उसमें से जो तरका छोड़ा हो वालिदैन ने और रिश्तेदारों ने” لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ ۠

“और औरतों का भी हिस्सा है उसमें से जो तरका है वालिदैन और रिश्तेदारों का” وَلِلنِّسَاۤءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ

यहाँ अब पहली मरतबा औरतों को विरासत का हक़ दिया जा रहा है, वरना क़ब्ल अज़ इस्लाम अरब मआशरे में औरत का कोई हक़ विरासत नहीं था।

“चाहे वह विरासत थोड़ी हो या ज़्यादा हो।” مِمَّا قَلَّ مِنْهُ اَوْ كَثُرَ ؕ

अल्लाह तआला का क़ानून इस पर हर सूरत में पूरी तरह नाफ़िज़ होना चाहिये।

“यह हिस्सा है (अल्लाह की तरफ़ से) फ़र्ज़ किया गया।” نَصِيبًا مَّفْرُوضًا ۝

आगे आप देखेंगे कि इस क़ानूने विरासत की किस तरह बार-बार ताकीद आ रही है। साथ ही आप यह भी देखते रहें कि हमारे मआशरे के अन्दर अल्लाह तआला के इस हुक्म की किस तरह धज्जियाँ बिखरती हैं। ख़ास तौर पर हमारे शिमाली इलाक़े में वैसे तो नमाज़ रोज़े का बहुत अहतमाम होता है, लेकिन वहाँ के लोग बेटियों को विरासत में हिस्सा देने को किसी सूरत तैयार नहीं होते, बल्कि अपने रिवाज की पैरवी करते हैं। शरीअत की कुछ चीज़ें बहुत अहम हैं और क़ुरान में उनका हुक्म इन्तहाई ताकीद के साथ आता है।

आयत 8

“और जब हाज़िर हो तक़सीम के वक़्त क़राबतदार और यतीम और मोहताज” وَإِذَا حَضَرَ الْقِسْمَةَ أُولُوا الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسَاكِينُ

जब विरासत की तक़सीम हो रही हो तो अब अगर वहाँ कुछ क़राबतदार, कुछ यतीम और कुछ मोहताज भी आ जायें।

“तो उन्हें भी कुछ दे दिला दो उसमें से और उनसे माक़ूल अंदाज़ में बात करो।” فَارْزُقُوهُم مِّنْهُ وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَّعْرُوفًا ۝

वह देख रहे हैं कि इस वक़्त विरासत तक़सीम हो रही है और वह बिल्कुल मोहताज हैं, तो उनके अहसासे महरूमियत का जो भी मदावा हो सकता है करो, और उनसे बड़े अच्छे अंदाज़ में बात करो। उन्हें झिड़को नहीं कि हमारी विरासत तक़सीम हो रही है और यहाँ तुम कौन आ गये हो?

आयत 9

“और डरते रहना चाहिये उन लोगों को कि अगर उन्होंने भी छोड़े होते अपने पीछे ना तवाँ (कमज़ोर) बच्चे तो उनके बारे में उन्हें कैसे-कैसे अन्देशे होते।” وَلْيَخْشَ الَّذِينَ لَوْ تَرَكُوا مِنْ خَلْفِهِمْ ذُرِّيَّةً ضِعَافًا خَافُوا عَلَيْهِمْ

“तो उन्हें चाहिये कि अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करें” فَلْيَتَّقُوا اللَّهَ

उन्हें यह ख्याल करना चाहिये कि यह यतीम जो इस वक़्त आ गये हैं यह भी किसी के बच्चे हैं, जिनके सर पर बाप का साया नहीं रहा। लिहाज़ा वह उनके सर पर शफक्क़त का हाथ रखें।

“और सीधी-सीधी (हक़ पर मब्नी) बात करें।” وَلْيَقُولُوا قَوْلًا سَدِيدًا ۝

आयत 10

“यक़ीनन वह लोग जो यतीमों का माल हड़प करते हैं नाहक़” إِنَّ الَّذِينَ يَأْكُلُونَ أَمْوَالَ الْيَتَامَىٰ ظُلْمًا

“वह तो अपने पेटों में आग ही भर रहे हैं।” إِنَّمَا يَأْكُلُونَ فِي بُطُونِهِمْ نَارًا

“और वह अनक़रीब भड़कती आग में दाख़िल होंगे।” وَسَيَصْلَوْنَ سَعِيرًا ۝

अन्दर की आग तो वह ख़ुद अपने पेटों में डाल रहे हैं और वह ख़ुद भी समूचे दोज़ख़ की भड़कती आग में डाल दिये जाएँगे। गोया एक आग उनके अन्दर होगी और एक वसीअ व अरीज़ आग उनके बाहर होगी। यह दस आयतें बड़ी जामेअ हैं, जिनमें उस मआशरे के पसमान्दा तबक़ात में से एक-एक का ख्याल करके निहायत बारीक बीनी और हिकमत के साथ अहकाम दिये गये हैं।

आयात 11 से 14 तक

يُوْصِيْكُمُ اللّٰهُ فِيْٓ اَوْلَادِكُمْ ۤ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۚ فَاِنْ كُنَّ نِسَاۗءً فَوْقَ
اثْنَتَيْنِ فَلَهُنَّ ثُلُثَا مَا تَرَكَ ۚ وَاِنْ كَانَتْ وَاحِدَةً فَلَهَا النِّصْفُ ۭ وَلِاَبَوَيْهِ لِكُلِّ
وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ مِمَّا تَرَكَ اِنْ كَانَ لَهٗ وَلَدٌ ۚ فَاِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهٗ وَلَدٌ وَّوَرِثَهٗٓ اَبَوٰهُ
فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ ۚ فَاِنْ كَانَ لَهٗٓ اِخْوَةٌ فَلِاُمِّهِ السُّدُسُ مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصِيْ بِهَآ اَوْ
دَيْنٍ ۭ اٰبَاۗؤُكُمْ وَاَبْنَاۗؤُكُمْ لَا تَدْرُوْنَ اَيُّهُمْ اَقْرَبُ لَكُمْ نَفْعًا ۭ فَرِيْضَةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ اِنَّ
اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا حَكِيْمًا (11) وَلَكُمْ نِصْفُ مَا تَرَكَ اَزْوَاجُكُمْ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهُنَّ وَلَدٌ ۚ
فَاِنْ كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْنَ مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصِيْنَ بِهَآ اَوْ
دَيْنٍ ۭ وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْتُمْ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّكُمْ وَلَدٌ ۚ فَاِنْ كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ
الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُمْ مِّنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ تُوْصُوْنَ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۭ وَاِنْ كَانَ رَجُلٌ يُّوْرَثُ
كَلٰلَةً اَوِ امْرَاَةٌ وَّلَهٗٓ اَخٌ اَوْ اُخْتٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ ۚ فَاِنْ كَانُوْٓا اَكْثَرَ مِنْ
ذٰلِكَ فَهُمْ شُرَكَاۗءُ فِي الثُّلُثِ مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصٰى بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۙ غَيْرَ مُضَاۗرٍّ ۚ وَصِيَّةً
مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَلِيْمٌ (12) تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ ۭ وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ يُدْخِلْهُ
جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ (13) وَمَنْ
يَّعْصِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَتَعَدَّ حُدُوْدَهٗ يُدْخِلْهُ نَارًا خَالِدًا فِيْهَا ۠ وَلَهٗ عَذَابٌ مُّهِيْنٌ
(14)

सूरतुन्निसा का दूसरा रुकूअ बड़ा मुख़्तसर है और इसमें सिर्फ़ चार आयात हैं, लेकिन मानवी तौर पर इनमें एक क़यामत मुज़मर है। यह क़ुरान हकीम का ऐजाज़ है कि चार आयतों के अन्दर इस्लाम का पूरा क़ानूने विरासत बयान कर दिया गया है जिस पर पूरी-पूरी जिल्दें लिखी गयी हैं। गोया जामिअत की इन्तहा है।

आयत 11

يُوْصِيْكُمُ اللّٰهُ فِيْٓ اَوْلَادِكُمْ ۤ	*"अल्लाह तआला तुम्हें वसीयत करता है तुम्हारी औलाद के बारे में"*
لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۚ	*"कि लड़के के लिये हिस्सा है दो लड़कियों के बराबर"*
فَاِنْ كُنَّ نِسَاۗءً فَوْقَ اثْنَتَيْنِ فَلَهُنَّ ثُلُثَا مَا تَرَكَ ۚ	*"फिर अगर लड़कियाँ ही हों (दो या) दो से ज़्यादा तो उनके लिये तरके का दो तिहाई है।"*
وَاِنْ كَانَتْ وَاحِدَةً فَلَهَا النِّصْفُ ۭ	*"और अगर एक ही लड़की है तो उसके लिये आधा है।"*

ज़ाहिर है अगर एक ही बेटा है तो वह पूरे तरके का वारिस हो जायेगा। लिहाज़ा जब बेटी का हिस्सा बेटे से आधा है तो अगर एक ही बेटी है तो उसे आधी विरासत मिलेगी, आधी दूसरे लोगों को जायेगी। वह एक अलैहदा मामला है।

وَلِاَبَوَيْهِ لِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ مِمَّا تَرَكَ اِنْ كَانَ لَهٗ وَلَدٌ

“और मय्यत के वालिदैन में से हर एक के लिये छठा हिस्सा है जो उसने छोड़ा अगर मय्यत के औलाद हो।”

अगर कोई शख़्स फ़ौत हो जाये और उसके वालिदैन या दोनों में से कोई एक ज़िन्दा हो तो उसकी विरासत में से उनका भी मुअय्यन हिस्सा है। अगर वफ़ात पाने वल शख़्स साहिबे औलाद है तो उसके वालिदैन में से हर एक के लिये विरासत में छठा हिस्सा है। यानि मय्यत के तरके में से एक तिहाई वालिदैन को चला जायेगा और दो तिहाई औलाद में तक़सीम होगा।

فَاِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهٗ وَلَدٌ وَّوَرِثَهٗٓ اَبَوٰهُ فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ

“और अगर उसके औलाद ना हो और उसके वारिस माँ-बाप ही हों तो उसकी माँ का एक तिहाई है।”

अगर कोई शख़्स लावलद फ़ौत हो जाये तो उसके तरके में से उसकी माँ को एक तिहाई और बाप को दो तिहाई मिलेगा। यानि बाप का हिस्सा माँ से दो गुना हो जायेगा।

فَاِنْ كَانَ لَهٗٓ اِخْوَةٌ فَلِاُمِّهِ السُّدُسُ

“फिर अगर मय्यत के बहन-भाई हों तो उसकी माँ का छठा हिस्सा है”

अगर मरने वाला बेऔलाद हो लेकिन उसके बहन-भाई हों तो इस सूरत में माँ का हिस्सा मज़ीद कम होकर एक तिहाई के बजाये छठा हिस्सा रह जायेगा और बाक़ी बाप को मिलेगा, लेकिन बहन-भाइयों को कुछ ना मिलेगा। वह बाप की तरफ़ से विरासत के हक़दार होंगे। लेकिन साथ ही फ़रमा दिया:

مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصِيْ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ

“बाद उस वसीयत की तकमील के जो वह कर जाये या बाद अदाये क़र्ज़ के।”

विरासत की तक़सीम से पहले दो काम कर लेने ज़रूरी हैं। एक यह कि अगर उस शख़्स के ज़िम्मे कोई क़र्ज़ है तो वह अदा किया जाये। और दूसरे यह कि अगर उसने कोई वसीयत की है तो उसको पूरा किया जाये। फिर विरासत तक़सीम होगी।

اٰبَاۗؤُكُمْ وَاَبْنَاۗؤُكُمْ لَا تَدْرُوْنَ اَيُّهُمْ اَقْرَبُ لَكُمْ نَفْعًا

“तुम्हारे बाप और तुम्हारे बेटे, तुम नहीं जानते कि उनमें से कौन तुम्हारे लिये ज़्यादा नाफ़ेअ है।”

فَرِيْضَةً مِّنَ اللّٰهِ

“यह अल्लाह की तरफ़ से मुक़र्रर किया हुआ फ़रीज़ा है।”

तुम अपनी अक़्लों को छोड़ो और अल्लाह की तरफ़ से मुक़र्रर करदा हिस्सों के मुताबिक़ विरासत तक़सीम करो। कोई आदमी यह समझे कि मेरे बूढ़े वालिदैन हैं, मेरी विरासत में ख्वाह मा ख्वाह उनके लिये हिस्सा क्यों रख दिया गया है? यह तो खा पी चुके, ज़िन्दगी गुज़र चुके, विरासत तो अब मेरी औलाद ही को मिलनी चाहिये, तो यह सोच बिल्कुल ग़लत है। तुम्हें बस अल्लाह का हुक्म मानना है।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ⑪

“यक़ीनन अल्लाह तआला इल्म व हिकमत वाला है।”

उसका कोई हुक्म इल्म और हिकमत से खाली नहीं है।

आयत 12

وَلَكُمْ نِصْفُ مَا تَرَكَ أَزْوَاجُكُمْ إِن لَّمْ يَكُن لَّهُنَّ وَلَدٌ

"और तुम्हारा हिस्सा तुम्हारी बीवियों के तरके में से आधा है अगर उनके कोई औलाद ना हो।"

बीवी फ़ौत हो गयी है और उसके कोई औलाद नहीं है तो जो वह छोड़ गयी है उसमें से निस्फ़ शौहर का हो जायेगा। बाक़ी जो निस्फ़ है वह मरहूमा के वालिदैन और बहन-भाइयों में हस्बे क़ायदा तक़सीम होगा।

فَإِن كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْنَ

"और अगर उनके औलाद है तो तो तुम्हारे लिये चौथाई है उसमें से जो उन्होंने छोड़ा"

مِن بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُوصِينَ بِهَا أَوْ دَيْنٍ

"बाद उस वसीयत की तामील के जो वह कर जायें या बाद अदाये क़र्ज़ के।"

अगर मरने वाली ने औलाद छोड़ी है तो मौजूदा शौहर को मरहूमा के माल से अदाये देन व इन्फ़ाज़े वसीयत के बाद कुल माल का चौथाई हिस्सा मिलेगा और बाक़ी तीन चौथाई दूसरे वुरसा में तक़सीम होगा।

وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْتُمْ إِن لَّمْ يَكُن لَّكُمْ وَلَدٌ

"और उनके लिये चौथाई है तुम्हारे तरके का अगर तुम्हारे औलाद नहीं है।"

فَإِن كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُم

"और अगर तुम्हारे औलाद है तो उनके लिये आठवाँ हिस्सा है तुम्हारे तरके में से"

مِّن بَعْدِ وَصِيَّةٍ تُوصُونَ بِهَا أَوْ دَيْنٍ

"उस वसीयत की तामील के बाद जो तुमने की हो या क़र्ज़ अदा करने के बाद।"

अगर मरने वाले ने कोई औलाद नहीं छोड़ी तो अदाये देन व इन्फ़ाज़े वसीयत के बाद उसकी बीवी को उसके तरके का चौथाई मिलेगा, और अगर उसने कोई औलाद छोड़ी है तो इस सूरत में बाद अदाये देन व वसीयत के बीवी को आठवाँ हिस्सा मिलेगा। अगर बीवी एक से ज़्यादा हैं तो भी मज़कूरा हिस्सा सब बीवियों में तक़सीम हो जायेगा।

وَإِن كَانَ رَجُلٌ يُورَثُ كَلَالَةً أَوِ امْرَأَةٌ

"और अगर कोई शख़्स जिसकी विरासत तक़सीम हो रही है कलाला हो, या औरत हो ऐसी ही"

"कलाला" वह मर्द या औरत है जिसके ना तो वालिदैन ज़िन्दा हों और ना उसकी कोई औलाद हो।

وَلَهُ أَخٌ أَوْ أُخْتٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ

"और उसका एक भाई या एक बहन हो तो उनमें से हर एक के लिये छठा हिस्सा है।"

فَإِن كَانُوا أَكْثَرَ مِن ذَٰلِكَ فَهُمْ شُرَكَاءُ فِي الثُّلُثِ

"और अगर वह इससे ज़्यादा हों तो वह सब एक तिहाई में शरीक होंगे"

मुफ़स्सिरीन का इज्माअ है कि यहाँ कलाला की मीरास के हुक्म में भाई और बहनों से मुराद अख़्याफ़ी (माँ शरीक) भाई और बहन हैं। रहे ऐनी और अलाती भाई-बहन तो उनका हुक्म इसी सूरत के आखिर में इरशाद हुआ है। अरबों में दरअसल तीन क़िस्म के बहन-भाई होते हैं। एक "ऐनी" जिनका बाप भी मुश्तरिक हो और माँ भी, जिन्हें हमारे यहाँ हक़ीक़ी कहते हैं। दूसरे "अलाती" बहन-भाई, जिनका बाप एक और माँयें जुदा हों। अहले अरब के यहाँ यह भी हक़ीक़ी बहन-भाई होते हैं और इनका हुक्म वही है जो "ऐनी" बहन-भाइयों का है। वह इन्हें "सौतेल" नहीं समझते। उनके यहाँ सौतेला वह कहलाता है जो एक माँ से हो लेकिन उसका बाप दूसरा हो। यह

"अख्याफ़ी" बहन-भाई कहलाते हैं। एक शख्स की औलाद थी, वह फ़ौत हो गया। उसके बाद उसकी बीवी ने दूसरी शादी कर ली। तो अब उस दूसरे खाविन्द से जो औलाद है वह पहले खाविन्द की औलाद के अख्याफ़ी बहन-भाई हैं। तो कलाला की मीरास के हुक्म में यहाँ अख्याफ़ी भाई-बहन मुराद हैं।

मِنۢ بَعۡدِ وَصِيَّةٍ يُّوۡصٰى بِهَاۤ اَوۡ دَيۡنٍ	*"उस वसीयत की तामील के बाद जो की गयी या अदाये क़र्ज़ के बाद"*

यह दो शर्तें हर सूरत बाक़ी रहेंगी। मरने वाले की ज़िम्मे अगर कोई क़र्ज़ है तो पहले वह अदा किया जायेगा, फिर उसकी वसीयत की तामील की जायेगी, उसके बाद मीरास वारिसों में तक़सीम की जायेगी।

غَيۡرَ مُضَآرٍّ	*"बगैर किसी को ज़रर पहुँचाये।"*

यह सारा काम ऐसे होना चाहिये कि किसी को ज़रर (नुक़सान) पहुँचाने की नीयत ना हो।

وَصِيَّةً مِّنَ اللّٰهِ	*"यह ताकीद है अल्लाह की तरफ़ से।"*
وَاللّٰهُ عَلِيۡمٌ حَلِيۡمٌ ؕ﴿۱۲﴾	*"और अल्लाह तआला सब कुछ जानने वाला कमाले हिल्म वाला है।"*

उसके हुक्म और बुर्दबारी पर धोखा ना खाओ कि वह तुम्हें पकड़ नहीं रहा है। *"ना जा उसके तहम्मुल पर कि है बेढब गिरफ़्त उसकी!"* उसकी पकड़ जब आयेगी तो उससे बचना मुमकिन नहीं होगा: {اِنَّ بَطۡشَ رَبِّكَ لَشَدِيۡدٌ} (अल बुरूज:12) "यक़ीनन तुम्हारे रब की पकड़ बड़ी सख्त है।"

आयत 13

تِلۡكَ حُدُوۡدُ اللّٰهِ ؕ	*"यह अल्लाह की मुक़र्रर की हुई हुदूद हैं।"*
وَمَنۡ يُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوۡلَهٗ يُدۡخِلۡهُ جَنّٰتٍ تَجۡرِىۡ مِنۡ تَحۡتِهَا الۡاَنۡهٰرُ	*"और जो अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करेगा वह दाख़िल करेगा उसे उन बाग़ात में जिसके दामन में नदियाँ बहती होंगी"*
خٰلِدِيۡنَ فِيۡهَا ؕ	*"उनमें वह हमेशा-हमेश रहेंगे।"*
وَذٰلِكَ الۡفَوۡزُ الۡعَظِيۡمُ ﴿۱۳﴾	*"और यही है बहुत बड़ी कामयाबी।"*

आयत 14

وَمَنۡ يَّعۡصِ اللّٰهَ وَرَسُوۡلَهٗ وَيَتَعَدَّ حُدُوۡدَهٗ	*"और जो कोई नाफ़रमानी करेगा अल्लाह और उसके रसूल की और तजावुज़ करेगा उसकी हुदूद से"*
يُدۡخِلۡهُ نَارًا خَالِدًا فِيۡهَا	*"वह दाख़िल करेगा उसको आग में जिसमें वह हमेशा रहेगा।"*
وَلَهٗ عَذَابٌ مُّهِيۡنٌ ﴿۱۴﴾	*"और उसके लिये अहानत आमेज़ अज़ाब होगा।"*

आयात 15 से 22 तक

وَالّٰتِيْ يَاْتِيْنَ الْفَاحِشَةَ مِنْ نِّسَآىِٕكُمْ فَاسْتَشْهِدُوْا عَلَيْهِنَّ اَرْبَعَةً مِّنْكُمْ ۚ فَاِنْ
شَهِدُوْا فَاَمْسِكُوْهُنَّ فِي الْبُيُوْتِ حَتّٰى يَتَوَفّٰىهُنَّ الْمَوْتُ اَوْ يَجْعَلَ اللّٰهُ لَهُنَّ
سَبِيْلًا ﴿١٥﴾ وَالَّذٰنِ يَاْتِيٰنِهَا مِنْكُمْ فَاٰذُوْهُمَا ۚ فَاِنْ تَابَا وَاَصْلَحَا فَاَعْرِضُوْا عَنْهُمَا
ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا ﴿١٦﴾ اِنَّمَا التَّوْبَةُ عَلَى اللّٰهِ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السُّوْٓءَ بِجَهَالَةٍ ثُمَّ
يَتُوْبُوْنَ مِنْ قَرِيْبٍ فَاُولٰٓىِٕكَ يَتُوْبُ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ﴿١٧﴾
وَلَيْسَتِ التَّوْبَةُ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السَّيِّاٰتِ ۚ حَتّٰٓى اِذَا حَضَرَ اَحَدَهُمُ الْمَوْتُ قَالَ
اِنِّيْ تُبْتُ الْـٰٔنَ وَلَا الَّذِيْنَ يَمُوْتُوْنَ وَهُمْ كُفَّارٌ ؕ اُولٰٓىِٕكَ اَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا
﴿١٨﴾ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا يَحِلُّ لَكُمْ اَنْ تَرِثُوا النِّسَآءَ كَرْهًا ؕ وَلَا تَعْضُلُوْهُنَّ
لِتَذْهَبُوْا بِبَعْضِ مَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اِلَّآ اَنْ يَّاْتِيْنَ بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ ۚ وَعَاشِرُوْهُنَّ
بِالْمَعْرُوْفِ ۚ فَاِنْ كَرِهْتُمُوْهُنَّ فَعَسٰٓى اَنْ تَكْرَهُوْا شَيْـًٔا وَّيَجْعَلَ اللّٰهُ فِيْهِ خَيْرًا
كَثِيْرًا ﴿١٩﴾ وَاِنْ اَرَدْتُّمُ اسْتِبْدَالَ زَوْجٍ مَّكَانَ زَوْجٍ ۙ وَّاٰتَيْتُمْ اِحْدٰىهُنَّ قِنْطَارًا
فَلَا تَاْخُذُوْا مِنْهُ شَيْـًٔا ؕ اَتَاْخُذُوْنَهٗ بُهْتَانًا وَّاِثْمًا مُّبِيْنًا ﴿٢٠﴾ وَكَيْفَ تَاْخُذُوْنَهٗ
وَقَدْ اَفْضٰى بَعْضُكُمْ اِلٰى بَعْضٍ وَّاَخَذْنَ مِنْكُمْ مِّيْثَاقًا غَلِيْظًا ﴿٢١﴾ وَلَا تَنْكِحُوْا مَا
نَكَحَ اٰبَآؤُكُمْ مِّنَ النِّسَآءِ اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ ؕ اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً وَّمَقْتًا ؕ وَسَآءَ سَبِيْلًا
﴿٢٢﴾ ع

अब इस्लामी मआशरे की तहरीर के लिये अहकाम दिये जा रहे हैं। मुस्लमान जब तक मक्का में थे तो वहाँ कुफ़्फ़ार का गलबा था। अब मदीना में अल्लाह तआला ने मुसलमानों को वह हैसियत दी है कि अपने मामलात को सँवारना शुरू करें। चुनाँचे एक-एक करके उन मआशरती मामलात और समाजी मसाइल को ज़ेरे बहस लाया जा रहा है। इस्लामी मआशरे में इफ़्फ़त व अस्मत को बुनियादी अहमियत हासिल होती है। लिहाज़ा अगर मआशरे में जिन्सी बेराहरवी मौजूद है तो उसकी रोकथाम कैसे हो? उसके लिये इब्तदाई अहकाम यहाँ आ रहे हैं। इस ज़िमन में तकमीली अहकाम सूरह अल नूर में आएँगे। मआशरती मामलात के ज़िमन में अहकाम पहले सूरतुन्निसा, फिर सूरतुल अहज़ाब, फिर सूरह अल नूर और फिर सूरतुल मायदा में बतदरीज आये हैं। यह अल्लाह तआला की हिकमत का तक़ाज़ा है कि सूरतुल अहज़ाब और सूरह अल नूर को मुसहफ़ में काफ़ी आगे रखा गया है और यहाँ पर सूरतुन्निसा के बाद सूरतुल मायदा आ गयी है।

आयत 15

"और तुम्हारी औरतों में से जो किसी बेहयाई का इरतकाब करें"	وَالّٰتِيْ يَاْتِيْنَ الْفَاحِشَةَ مِنْ نِّسَآىِٕكُمْ
"तो उन पर अपने में से चार गवाह लाओ।"	فَاسْتَشْهِدُوْا عَلَيْهِنَّ اَرْبَعَةً مِّنْكُمْ ۚ
"पस अगर वह गवाही दे दें तो उन औरतों को घरों में बंद कर दो"	فَاِنْ شَهِدُوْا فَاَمْسِكُوْهُنَّ فِي الْبُيُوْتِ
"यहाँ तक कि मौत उनको ले जाये"	حَتّٰى يَتَوَفّٰىهُنَّ الْمَوْتُ

इसी हालत में उनकी ज़िन्दगी का ख़ात्मा हो जाये।

"या अल्लाह उनके लिये कोई और रास्ता निकाल दे।"	اَوْ يَجْعَلَ اللّٰهُ لَهُنَّ سَبِيْلًا ﴿١٥﴾

बदकारी के मुताल्लिक़ यह इब्तदाई हुक्म था। बाद में सूरह अल नूर में हुक्म आ गया कि बदकारी करने वाले मर्द व औरत दोनों को सौ-सौ कोड़े लगाये जायें। मालूम होता है कि यहाँ ऐसी लड़कियों या औरतों का तज़किरा है जो मुसलमानों में से थीं मगर उनका बदकारी का मामला

किसी ग़ैर मुस्लिम मर्द से हो गया जो इस्लामी मआशरे के दबाव में नहीं है। ऐसी औरतों के मुताल्लिक़ यह हिदायत फ़रमायी गयी कि उन्हें ता हुक्म सानी घरों के अन्दर महबूस (क़ैदी) रखा जाये।

आयत 16

وَالَّذٰنِ يَاْتِيٰنِهَا مِنْكُمْ فَاٰذُوْهُمَا

"और जो दोनों तुम में से इस (बदकारी) का इरतकाब करें तो उन दोनों को ईज़ा (तकलीफ़) पहुँचाओ।"

अगर बदकारी का इरतकाब करने वाले मर्द व औरत दोनों मुसलमानों में से ही हों तो दोनों को अज़ियत दी जाये। यानि उनकी तौहीन व तज़लील की जाये और मारा-पीटा जाये।

فَاِنْ تَابَا وَاَصْلَحَا فَاَعْرِضُوْا عَنْهُمَا

"फिर अगर वह तौबा कर लें और इस्लाह कर लें तो उनको छोड़ दो।"

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا

"यक़ीनन अल्लाह तआला बहुत तौबा क़ुबूल फ़रमाने वाला और रहम फ़रमाने वाला है।"

वाज़ेह रहे कि यह बिल्कुल इब्तदाई अहकाम हैं। इसी लिये इनकी वज़ाहत में तफ़सीरों में बहुत से अक़वाल मिल जाएँगे। इसलिये कि जब हुदूद नाफ़िज़ हो गईं तो यह उबूरी और आरज़ी अहकाम मनसूख क़रार पाये। जैसा की सूरतुन्निसा में क़ानूने विरासत नाज़िल होने के बाद सूरतुल बक़रह में वारिद शुदा वसीयत का हुक्म साक़ित हो गया।

आयत 17

اِنَّمَا التَّوْبَةُ عَلَى اللّٰهِ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السُّوْٓءَ بِجَهَالَةٍ

"अल्लाह के ज़िम्मे है तौबा क़ुबूल करना ऐसे लोगों की जो कोई बुरी हरकत कर बैठते हैं जहालत और नादानी में"

ثُمَّ يَتُوْبُوْنَ مِنْ قَرِيْبٍ

"फिर जल्दी ही तौबा कर लेते हैं"

एक साहिबे ईमान पर कभी ऐसा वक़्त भी आ सकता है कि खारजी असरात इतने शदीद हो जायें या नफ्स के अन्दर का हैजान उसे जज़्बात से मग़लूब कर दे और वह कोई गुनाह का काम कर गुज़रे। लेकिन इसके बाद उसे जैसे ही होश आयेगा उस पर शदीद नदामत तारी हो जायेगी और वह अल्लाह के हुज़ूर तौबा करेगा। ऐसे शख्स के बारे में फ़रमाया गया है कि उसकी तौबा क़ुबूल करना अल्लाह के ज़िम्मे है।

فَاُولٰٓئِكَ يَتُوْبُ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ

"तो यही हैं जिनकी तौबा अल्लाह क़ुबूल फ़रमायेगा।"

وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا

"और अल्लाह तआला बाख़बर है और हकीम व दाना है।"

आयत 18

وَلَيْسَتِ التَّوْبَةُ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السَّيِّاٰتِ

"और ऐसे लोगों का कोई हक़ नहीं है तौबा का जो बुरे काम किये चले जाते हैं।"

मुसलसल हरामखोरियाँ करते रहते हैं, ज़िन्दगी भर ऐश उड़ाते रहते हैं।

"यहाँ तक कि जब उनमें से किसी की मौत का वक़्त आ जाता है तो उस वक़्त वह कहता है कि अब मैं तौबा करता हूँ"

حَتّٰۤى اِذَا حَضَرَ اَحَدَهُمُ الْمَوْتُ قَالَ اِنِّیْ تُبْتُ الْـٰٔنَ

"और ना उन लोगों की तौबा है जो कुफ़्र की हालत में ही मर जाते हैं।"

وَلَا الَّذِيْنَ يَمُوْتُوْنَ وَهُمْ كُفَّارٌ

उनकी तौबा का कोई सवाल ही नहीं।

"ऐसे लोगों के लिये तो हमने दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है।"

اُولٰٓئِكَ اَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا۝۱۸

आयत 19

"ऐ अहले ईमान! तुम्हारे लिये जायज़ नहीं कि तुम औरतों को ज़बरदस्ती विरासत में ले लो।"

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا يَحِلُّ لَكُمْ اَنْ تَرِثُوا النِّسَآءَ كَرْهًا

यह भी अरब जाहिलियत की एक मकरूह रस्म थी जिसमें औरतों के तबक़े पर शदीद ज़ुल्म होता था। होता यूँ था कि एक शख़्स फ़ौत हुआ है, उसकी चार-पाँच बीवियाँ हैं, तो उसका बड़ा बेटा वारिस बन गया है। अब उसकी हक़ीक़ी माँ तो एक ही है, बाक़ी सौतेली माँयें हैं, तो वह उनको विरासत में ले लेता था कि यह मेरे क़ब्ज़े में रहेंगी, बल्कि उनसे शादियाँ भी कर लेते थे या बगैर निकाह अपने घरों में डाले रखते थे, या फिर यह कि इख़्तियार अपने हाथ में रख कर उनकी शादियाँ कहीं और करते थे तो महर ख़ुद ले लेते थे। चुनाँचे फ़रमाया कि ऐ अहले ईमान, तुम्हारे लिये जायज़ नहीं है कि तुम औरतों के ज़बरदस्ती वारिस बन बैठो! जिस औरत का शौहर फ़ौत हो गया वह आज़ाद है। इद्दत गुज़ार कर जहाँ चाहे जाये और जिससे चाहे निकाह कर ले।

"और ना यह जायज़ है कि तुम उन्हें रोके रखो ताकि उनसे वापस ले लो उसका कुछ हिस्सा जो कुछ तुमने उनको दिया है"

وَلَا تَعْضُلُوْهُنَّ لِتَذْهَبُوْا بِبَعْضِ مَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ

निकाह के वक़्त तो बड़े चाव थे, बड़े लाड़ उठाये जा रहे थे और क्या-क्या दे दिया था, और अब वह सब वापस हथियाने के लिये तरह-तरह के हथकंडे इस्तेमाल हो रहे हैं, उन्हें तंग किया जा रहा है, ज़हनी तौर पर तकलीफ़ पहुँचाई जा रही है।

"हाँ अगर वह सरीह बदकारी की मुरतकिब हुई हों (तो तुम्हें उनको तंग करने का हक़ है)।"

اِلَّآ اَنْ يَّاْتِيْنَ بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ

अगर किसी से सरीह हरामकारी का फ़अल सरज़द हो गया और उस पर उसे कोई सज़ा दी जाये (जैसा कि ऊपर आ चुका है فَاٰذُوْهُمَا) इसकी तो इजाज़त है। इसके बगैर किसी पर ज़्यादती करना जायज़ नहीं है। ख़ास तौर पर अगर नीयत यह हो कि मैं इससे अपना महर वापस ले लूँ, यह इन्तहाई कमीनगी है।

"और औरतों के साथ अच्छे तरीक़े पर मआशरत इख़्तियार करो।"

وَعَاشِرُوْهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ

उनके साथ भले तरीक़े पर, ख़ुश अस्लूबी से, नेकी और रास्ती के साथ गुज़र-बसर करो।

"अगर वह तुम्हें नापसन्द हों तो बईद नहीं कि एक चीज़ तुम्हें नापसन्द हो और उसमें अल्लाह ने तुम्हारे लिये बहुत कुछ बेहतरी रख दी हो।"

فَاِنْ كَرِهْتُمُوْهُنَّ فَعَسٰٓى اَنْ تَكْرَهُوْا شَيْـًٔا وَّيَجْعَلَ اللّٰهُ فِيْهِ خَيْرًا كَثِيْرًا۝۱۹

अगर तुम्हें किसी वजह से अपनी औरतें नापसन्द हो गयी हों तो हो सकता है कि किसी शय को तुम नापसन्द करो, दर हालाँकि अल्लाह ने उसी में तुम्हारे लिये ख़ैरे कसीर रख दिया हो। एक औरत किसी एक ऐतबार से

आपके दिल से उतार गयी है, तबीयत का मैलान नहीं रहा है, लेकिन पता नहीं उसमें और कौन-कौन सी खूबियाँ हैं और वह किस-किस ऐतबार से आपके लिये खैर का ज़रिया बनती है। तो इस मामले को अल्लाह के हवाले करो, और उनके हुक़ूक़ अदा करते हुए, उनके साथ ख़ुश अस्लूबी से गुज़र-बसर करो। अलबत्ता अगर मामला ऐसा हो गया है कि साथ रहना मुमकिन नहीं है तो तलाक़ का रास्ता खुला है, शरीअते इस्लामी ने इसमें कोई तंगी नहीं रखी है। यह मसीहियत की तरह का कोई गैर माक़ूल निज़ाम नहीं है कि तलाक़ हो ही नहीं सकती।

आयत 20

وَاِنْ اَرَدْتُّمُ اسْتِبْدَالَ زَوْجٍ مَّكَانَ زَوْجٍ

"और अगर तुम्हारा इरादा एक बीवी की जगह दूसरी बीवी ले आने का हो"

अगर तुमने फ़ैसला कर ही लिया हो कि एक बीवी की जगह दूसरी बीवी लानी है।

وَّاٰتَيْتُمْ اِحْدٰىهُنَّ قِنْطَارًا

"और उनमें से किसी एक को तुमने ढ़ेरों माल दिया हो"

فَلَا تَاْخُذُوْا مِنْهُ شَيْـًٔا

"तो उसमें से कोई भी शय वापस ना लो।"

औरतों को तुमने जो महर दिया था वह उनका है, अब उसमें से कुछ वापस नहीं ले सकते।

اَتَاْخُذُوْنَهٗ بُهْتَانًا وَّاِثْمًا مُّبِيْنًا۝۲۰

"क्या तुम उसे वापस लोगे बोहतान लगा कर और सरीह गुनाह के मुरतकिब होकर?"

आयत 21

وَكَيْفَ تَاْخُذُوْنَهٗ وَقَدْ اَفْضٰى بَعْضُكُمْ اِلٰى بَعْضٍ

"और तुम उसे कैसे वापस ले सकते हो जबकि तुम एक-दूसरे के साथ सोहबत कर चुके हो?"

कुछ अक़्ल के नाखुन लो, कुछ शऊर और शराफ़त का सबूत दो। तुम उनसे वह माल किस तरह वापस लेना चाहते हो जबकि तुम्हारे माबैन दुनिया का इन्तहाई क़रीबी ताल्लुक़ क़ायम हो चुका है।

وَّاَخَذْنَ مِنْكُمْ مِّيْثَاقًا غَلِيْظًا۝۲۱

"और वह तुमसे मज़बूत क़ौल व क़रार ले चुकी हैं।"

यह क़ौल व क़रार निकाह के वक़्त होता है जब मर्द औरत के महर व नफ़क़ा की पूरी ज़िम्मेदारी लेता है।

आयत 22

وَلَا تَنْكِحُوْا مَا نَكَحَ اٰبَاۗؤُكُمْ مِّنَ النِّسَاۗءِ

"और जिन औरतों से तुम्हारे बाप निकाह कर चुके हों उनसे तुम निकाह मत करो"

जैसा कि पहले ज़िक्र हुआ, अय्यामे जाहिलियत में सौतेली माँओं को निकाह करके या बगैर निकाह के घर में डाल लिया जाता था। ऐसे निकाह को उस मआशरे में भी "निकाहे मक़्त" कहा जाता था। यानि यह बहुत ही बुरा निकाह है। ज़ाहिर है फ़ितरते इंसानी तो ऐसे ताल्लुक़ से इबा करती है, मगर उनके यहाँ यह रिवाज था। क़ुरान मजीद ने इस मक़ाम पर इसका सख्ती से सद्दे बाब किया है।

اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ

"सिवाये इसके जो हो चुका।"

اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً وَّمَقْتًا ۭ

“यक़ीनन यह बड़ी बेहयाई की बात है और अल्लाह तआला के ग़ज़ब को भड़काने वाली है।”

وَسَاۗءَ سَبِيْلًا ۝٢٢ۧ

“और बहुत ही बुरा रास्ता है।”

अगली आयत में मुहर्रमाते अब्दिया का बयान है कि किन रिश्तों में निकाह का मामला नहीं हो सकता। यानि एक मर्द अपनी किन-किन रिश्तेदार ख्वातीन से शादी नहीं कर सकता।

आयात 23 से 25 तक

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ اُمَّهٰتُكُمْ وَبَنٰتُكُمْ وَاَخَوٰتُكُمْ وَعَمّٰتُكُمْ وَخٰلٰتُكُمْ وَبَنٰتُ الْاَخِ
وَبَنٰتُ الْاُخْتِ وَاُمَّهٰتُكُمُ الّٰتِيْٓ اَرْضَعْنَكُمْ وَاَخَوٰتُكُمْ مِّنَ الرَّضَاعَةِ وَاُمَّهٰتُ
نِسَاۗىِٕكُمْ وَرَبَاۗىِٕبُكُمُ الّٰتِيْ فِيْ حُجُوْرِكُمْ مِّنْ نِّسَاۗىِٕكُمُ الّٰتِيْ دَخَلْتُمْ بِهِنَّ ۡ فَاِنْ لَّمْ
تَكُوْنُوْا دَخَلْتُمْ بِهِنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ ۡ وَحَلَاۗىِٕلُ اَبْنَاۗىِٕكُمُ الَّذِيْنَ مِنْ
اَصْلَابِكُمْ ۙ وَاَنْ تَجْمَعُوْا بَيْنَ الْاُخْتَيْنِ اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا
۝٢٣ۙ وَّالْمُحْصَنٰتُ مِنَ النِّسَاۗءِ اِلَّا مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ۚ كِتٰبَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ ۚ وَاُحِلَّ
لَكُمْ مَّا وَرَاۗءَ ذٰلِكُمْ اَنْ تَبْتَغُوْا بِاَمْوَالِكُمْ مُّحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ ۭ فَمَا
اسْتَمْتَعْتُمْ بِهٖ مِنْهُنَّ فَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ فَرِيْضَةً ۭ وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيْمَا تَرٰضَيْتُمْ
بِهٖ مِنْۢ بَعْدِ الْفَرِيْضَةِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ۝٢٤ وَمَنْ لَّمْ يَسْتَطِعْ مِنْكُمْ طَوْلًا
اَنْ يَّنْكِحَ الْمُحْصَنٰتِ الْمُؤْمِنٰتِ فَمِنْ مَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِّنْ فَتَيٰتِكُمُ
الْمُؤْمِنٰتِ ۭ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاِيْمَانِكُمْ ۭ بَعْضُكُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ ۚ فَانْكِحُوْهُنَّ بِاِذْنِ اَهْلِهِنَّ
وَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ مُحْصَنٰتٍ غَيْرَ مُسٰفِحٰتٍ وَّلَا مُتَّخِذٰتِ اَخْدَانٍ ۚ
فَاِذَآ اُحْصِنَّ فَاِنْ اَتَيْنَ بِفَاحِشَةٍ فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَي الْمُحْصَنٰتِ مِنَ الْعَذَابِ ۭ
ذٰلِكَ لِمَنْ خَشِيَ الْعَنَتَ مِنْكُمْ ۭ وَاَنْ تَصْبِرُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٢٥ۧ

आयत 23

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ اُمَّهٰتُكُمْ وَبَنٰتُكُمْ وَاَخَوٰتُكُمْ

“हराम कर दी गयीं तुम पर तुम्हारी माँएं और तुम्हारी बेटियाँ और तुम्हारी बहनें”

وَعَمّٰتُكُمْ وَخٰلٰتُكُمْ

“और तुम्हारी फूफियाँ और तुम्हारी खालाएँ”

وَبَنٰتُ الْاَخِ وَبَنٰتُ الْاُخْتِ

“और तुम्हारी भतीजियाँ और भन्जियाँ”

وَاُمَّهٰتُكُمُ الّٰتِيْٓ اَرْضَعْنَكُمْ

“और तुम्हारी वह माँएं जिन्होंने तुम्हें दूध पिलाया है”

وَاَخَوٰتُكُمْ مِّنَ الرَّضَاعَةِ

“और तुम्हारी दूध शरीक बहनें”

وَاُمَّهٰتُ نِسَاۗىِٕكُمْ

“और तुम्हारी बीवियों की माँएं”

जिनको हम सास या ख़ुशदामन कहते हैं।

وَرَبَاۗىِٕبُكُمُ الّٰتِيْ فِيْ حُجُوْرِكُمْ

“और तुम्हारी रबीबाएँ जो तुम्हारी गोदों में पली-बढ़ी हों”

“तुम्हारी उन बीवियों से जिनके साथ तुमने मुक़ारबत की हो” مِّنۡ نِّسَآٮِٕكُمُ الّٰتِىۡ دَخَلۡتُمۡ بِهِنَّ

“और अगर तुमने उन बीवियों से मुक़ारबत ना की हो तो तुम पर कुछ गुनाह नहीं” فَاِنۡ لَّمۡ تَكُوۡنُوۡا دَخَلۡتُمۡ بِهِنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيۡكُمۡ

“रबीबा” बीवी की उस लड़की को कहा जाता है जो उसके साबिक़ शौहर से हो। अगर मौजूदा शौहर उस बीवी से ताल्लुक़ ज़नो शो क़ायम होने के बाद उसको तलाक़ दे दे तो रबीबा को अपने निकाह में नहीं ला सकता, यह उसके लिये हराम है। लेकिन अगर उस बीवी के साथ ताल्लुक़ ज़नो शो क़ायम नहीं हुआ और उसे तलाक़ दे दी तो फिर रबीबा के साथ निकाह हो सकता है। चुनाँचे फ़रमाया कि अगर तुमने उन बीवियों के साथ मुक़ारबत ना की हो तो फिर (उन्हें छोड़ कर उनकी लड़कियों से निकाह कर लेने में) तुम पर कोई गुनाह नहीं।

“और तुम्हारे उन बेटों की बीवियाँ जो तुम्हारी सल्ब से हों” وَحَلَاۗٮِٕلُ اَبۡنَآٮِٕكُمُ الَّذِيۡنَ مِنۡ اَصۡلَابِكُمۡ

जिनको हम बहुएँ कहते हैं। अपने सुल्बी बेटे की बीवी से निकाह हराम है। अलबत्ता मुँह बोले बेटे की मुतल्लक़ा बीवी से निकाह में कोई हर्ज नहीं।

“और यह (भी तुम पर हराम कर दिया गया है) कि तुम बयक वक़्त दो बहनों को एक निकाह में जमा करो” وَاَنۡ تَجۡمَعُوۡا بَيۡنَ الۡاُخۡتَيۡنِ

“सिवाय इसके कि जो गुज़र चुका।” اِلَّا مَا قَدۡ سَلَفَ

“यक़ीनन अल्लाह गफ़ूर और रहीम है।” اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوۡرًا رَّحِيۡمًا ۝۲۳

जो पहले हो गया सो हो गया। अब गड़े मुर्दे तो उखाड़े नहीं जा सकते। लेकिन आइन्दा के लिये यह मुहर्रमाते अब्दिया हैं। इसमें रसूल अल्लाह ﷺ ने इज़ाफ़ा किया है कि जिस तरह दो बहनों को बयक वक़्त निकाह में नहीं रख सकते इसी तरह खाला भांजी को और फूफी भतीजी को भी बयक वक़्त निकाह में नहीं रख सकते। यह मुहर्रमाते अब्दिया हैं कि जिनके साथ किसी हाल में, किसी वक़्त शादी नहीं हो सकती। अब वह मुहर्रमात बयान हो रहे हैं जो आरज़ी हैं।

आयत 24

“और वो औरतें (भी तुम पर हराम हैं) जो किसी और के निकाह में हों” وَّالۡمُحۡصَنٰتُ مِنَ النِّسَآءِ

चूँकि वह किसी और के निकाह में हैं इसलिये आप पर हराम हैं। एक औरत को अगर उसका शौहर तलाक़ दे दे तो आप उससे निकाह कर सकते हैं। चुनाँचे यह हुरमत अब्दी नौइयत की नहीं है। “مُحۡصَنٰتُ” उन औरतों को कहा जाता है जो किसी की क़ैद निकाह में हों। “حِصن” क़िले को कहते हैं और “اِحصان” के मायने किसी शय को अपनी हिफ़ाज़त में लेने के भी और किसी के हिफ़ाज़त में होने के भी। चुनाँचे “مُحۡصَنٰتُ” वह औरतें हैं जो एक ख़ानदान के क़िले के अंदर महफ़ूज़ हैं और शौहर वालियाँ हैं। नेज़ यह लफ़्ज़ लौंडियों के मुक़ाबले आज़ाद ख़ानदानी शरीफ़ ज़ादियों के लिये भी इस्तेमाल होता है।

“सिवाय उसके कि जो तुम्हारी मिल्के यमीन बन जायें।” اِلَّا مَا مَلَكَتۡ اَيۡمَانُكُمۡ

यानि जंग के नतीजे में तुम्हारे यहाँ कनीज़ें बन कर आ जायें। यह औरतें अगरचे मुशरिकों की बीवियाँ हैं लेकिन वह लौंडियों की हैसियत से आपके लिये जायज़ होंगी।

كِتٰبَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ

“यह तुम पर अल्लाह का लिखा हुआ फ़रीज़ा है।”

यह अल्लाह का क़ानून है जिसकी पाबंदी तुम पर लाज़िम कर दी गई है।

وَاُحِلَّ لَكُمْ مَّا وَرَآءَ ذٰلِكُمْ

“इनके सिवा जो औरतें हैं वह तुम्हारे लिये हलाल हैं।”

आपने देखा कि कितनी थोड़ी सी तादाद में मुहर्रमात हैं, जिनसे निकाह हराम क़रार दे दिया गया है, बाक़ी कसीर तादाद हलाल है। यानि मुबाहात का दायरा बहुत वसीअ है जबकि मुहर्रमात का दायरा बहुत महदूद है।

اَنْ تَبْتَغُوْا بِاَمْوَالِكُمْ

“कि तुम अपने माल के ज़रिये उनके तालिब बनो”

यानि उनके महर अदा करके उनके साथ निकाह करो।

مُّحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ

“बशर्ते कि हिसारे निकाह में उनको महफ़ूज़ करो, ना कि आज़ाद शहवतरानी करने लगो।”

यानि नीयत घर बसाने की हो, सिर्फ़ मस्ती निकालने की नहीं। इसको महज़ एक खेल और मशग़ला ना बना लो।

فَمَا اسْتَمْتَعْتُمْ بِهٖ مِنْهُنَّ فَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ فَرِيْضَةً

“बस जो भी तुमने उनसे तमत्तो (भोग-विलास) किया हो तो उसके बदले उनके महर अदा करो, जो मुक़र्रर हुए थे।”

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيْمَا تَرٰضَيْتُمْ بِهٖ مِنْۢ بَعْدِ الْفَرِيْضَةِ

“अलबत्ता इसका तुम पर कोई गुनाह नहीं है कि महर मुक़र्रर होने के बाद बाहमी रज़ामंदी से कोई कमी पेशी कर लो।”

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ۝۲۴

“यक़ीनन अल्लाह तआला अलीम और हकीम है।”

आयत 25

وَمَنْ لَّمْ يَسْتَطِعْ مِنْكُمْ طَوْلًا اَنْ يَّنْكِحَ الْمُحْصَنٰتِ الْمُؤْمِنٰتِ

“और जो कोई तुममें से इतनी मुक़दरत ना रखता हो कि ख़ानदानी मुसलमान औरतों से शादी कर सकें”

فَمِنْ مَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِّنْ فَتَيٰتِكُمُ الْمُؤْمِنٰتِ

“तो वह तुम्हारी उन लौंडियों में से किसी के साथ निक़ाह कर ले जो तुम्हारे क़ब्ज़े में हों और मोमिना हों।”

यहाँ “مُحصنٰت” दूसरे मायने में आया है, यानि शरीफ़ ज़ादियाँ, आज़ाद मुसलमान औरतें। और ज़ाहिर है आज़ाद मुसलमान औरतों का तो महर अदा करना पड़ेगा। इस हवाले से अगर कोई बेचारा मुफ़लिस है, एक ख़ानदानी औरत का महर अदा नहीं कर सकता तो वह क्या करे? ऐसे

लोगों को हिदायत की जा रही है कि वह मआशरे में मौजूद मुसलमान लौंडियों से निकाह कर लें।

وَاللّٰهُ اَعۡلَمُ بِاِيۡمَانِكُمۡ

“अल्लाह तुम्हारे ईमानों का हाल ख़ूब जानता है।”

यह अल्लाह बेहतर जानता है कि कौन मोमिन है और कौन नहीं है। मुराद यह है कि जो भी क़ानूनी ऐतबार से मुसलमान है दुनिया में वह मोमिन समझा जायेगा।

بَعۡضُكُمۡ مِّنۡۢ بَعۡضٍ

“तुम सब एक-दूसरे ही में से हो।”

فَانۡكِحُوۡهُنَّ بِاِذۡنِ اَهۡلِهِنَّ

“सो उनसे निकाह कर लो उनके मालिकों की इजाज़त से”

किसी लौंडी का मालिक उससे जिन्सी ताल्लुक़ क़ायम कर सकता है। लेकिन जब एक शख़्स उसकी इजाज़त से उसकी लौंडी से निकाह कर ले तो अब लौंडी के मालिक का यह ताल्लुक़ मुन्क़ता हो जायेगा। अब वह लौंडी इस ऐतबार से उसके काम में नहीं आ सकती, बल्कि अब वह एक मुसलमान की मन्कूहा हो जायेगी। इसी लिये उस निकाह के लिये “بِاِذۡنِ اَهۡلِهِنَّ” की हिदायत फ़रमाई गई है। वाज़ेह रहे की उस वक़्त के मआशरे में बिल् फ़अल यह शक्लें मौजूद थीं। यह नहीं कहा जा रहा कि यह शक्लें पैदा करो। गुलाम और लौंडियों का मामला उस वक़्त के बैनुल अक़वामी हालात और असीराने जंग के मसले के एक हल के तौर पर पहले से मौजूद था। हमें यह देखना है कि जिस मआशरे में क़ुरान ने इस्लाह का अमल शुरू किया उसमें फ़िल वाक़ेअ क्या सूरते हाल थी और उसमें किस-किस ऐतबार से तदरीजन बेहतरी पैदा की गई।

وَاٰتُوۡهُنَّ اُجُوۡرَهُنَّ بِالۡمَعۡرُوۡفِ

“और उन्हें उनके महर अदा करो मारूफ़ तरीक़े पर”

مُحۡصَنٰتٍ غَيۡرَ مُسٰفِحٰتٍ

“उनको हिसारे निकाह में लाकर, ना कि आज़ाद शहवतरानी करने वालियाँ हों”

उनसे निकाह का ताल्लुक़ होगा, जिसमें नीयत घर में बसाने की होनी चाहिये, महज़ मस्ती निकालने की और शहवतरानी की नीयत ना हो। यह हिसारे निकाह में महफ़ूज़ होकर रहें, आज़ाद शहवतरानी ना करती फिरें।

وَّلَا مُتَّخِذٰتِ اَخۡدَانٍ

“और ना ही चोरी-छिपे आशनाइयाँ करें।”

किसी की लौंडी से किसी का निकाह हो तो ख़ुल्लम-ख़ुल्ला हो। मालूम हो कि फलाँ की लौंडी अब फलाँ के निकाह में है। जैसे हज़रत सुमय्या रज़ि० से हज़रत यासिर रज़ि० ने निकाह किया था। हज़रत सुमय्या रज़ि० अबु जहल के चचा की लौंडी थीं, जो एक शरीफ़ इंसान था। हज़रत यासिर जब यमन से आकर मक्का में आबाद हुए तो उन्होंने अबु जहल के चचा से इजाज़त लेकर उनकी लौंडी सुमय्या रज़ि० से शादी कर ली। उनसे हज़रत अम्मार रज़ि० पैदा हुए। यह तीन अफ़राद का एक कुन्बा था। यासिर, अम्मार बिन यासर और अम्मार की वालिदा सुमय्या रज़ि०। अबु जहल का शरीफ़ुल नफ्स चचा जब फ़ौत हो गया तो अबु जहल को इस कुन्बे पर इख़्तियार हासिल हो गया और उसने इस ख़ानदान को बद्तरीन ईज़ाएँ दी।

فَاِذَاۤ اُحۡصِنَّ فَاِنۡ اَتَيۡنَ بِفَاحِشَةٍ

“पस जब वह क़ैदे निकाह में आ जाएँ तो फिर अगर वह बेहयाई का काम करें”

"तो उन पर उस सज़ा की बनिस्बत आधी सज़ा है जो आज़ाद औरतों के लिये है।"	فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَى الْمُحْصَنٰتِ مِنَ الْعَذَابِ

लौंडियाँ अगर क़ैदे निकाह में आने के बाद बदचलनी की मुरतकिब हों तो बदकारी की जो सज़ा आज़ाद औरतों को दी जायेगी उन्हें उसकी निस्फ़ सज़ा दी जायेगी। वाज़ेह रहे कि यह इब्तदाई अहकामात हैं। अभी तक ना तो सौ कोड़ों की सज़ा का हुक्म आया था और ना रजम का। चुनाँचे "اٰذُوْهُمَا" के हुक्म की तामील में बदकारी की जो सज़ा अभी आज़ाद ख़ानदानी औरतों को दी जाती थी एक मन्कूहा लौंडी को उससे निस्फ़ सज़ा देने का हुक्म दिया गया। इसलिये कि एक शरीफ़ ख़ानदान की औरत जिसे हर तरह का तहफ़्फ़ुज़ हासिल हो उसका मामला और है और एक बेचारी गरीब लौंडी का मामला और है।

"यह इजाज़त तुममें से उनके लिये है जिनको गुनाह में पड़ने का अंदेशा हो।"	ذٰلِكَ لِمَنْ خَشِيَ الْعَنَتَ مِنْكُمْ

मुसलमान लौंडियों से निकाह कर लेने की इजाज़त तुममें से उन लोगों के लिये है जो अपनी शहवत और जिन्सी जज़्बे को रोक ना सकते हों और उन्हें फ़ितने में मुब्तला हो जाने और गुनाहों में मुलव्विस हो जाने का अंदेशा हो।

"और अगर तुम सब्र करो तो यह तुम्हारे हक़ में बेहतर है।"	وَاَنْ تَصْبِرُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ

चूँकि आमतौर पर उस मआशरे में जो बांदियाँ थीं वह बुलन्द किरदार नहीं थीं, लिहाज़ा फ़रमाया कि बेहतर यह है कि तुम उनसे निकाह करने से बचो और तअफ़्फ़ुफ़ (संयम) इख़्तियार करो।

"और अल्लाह ग़फ़ूर और रहीम है।"	وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٢٥

आयात 26 से 28 तक

يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمْ وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَيَتُوْبَ عَلَيْكُمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ
حَكِيْمٌ ۝٢٦ وَاللّٰهُ يُرِيْدُ اَنْ يَّتُوْبَ عَلَيْكُمْ ۣ وَيُرِيْدُ الَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الشَّهَوٰتِ اَنْ تَمِيْلُوْا مَيْلًا
عَظِيْمًا ۝٢٧ يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّخَفِّفَ عَنْكُمْ ۚ وَخُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيْفًا ۝٢٨

इन तीन आयात में अहकामे शरीअत के ज़िमन में फ़लसफ़ा व हिकमत का बयान हो रहा है। अहकामे शरीअत को इंसान अपने ऊपर बोझ समझने लगता है। उसे जब हुक्म दिया जाता है कि यह करो और यह मत करो तो आदमी की तबियत नागवारी महसूस करती है। यही वजह है कि ईसाईयों ने शरीअत का तौक़ अपने गले से उतार फेंका है। 1970 ईस्वी में क्रिसमस के मौक़े पर मैं लंदन में था। वहाँ मैने एक ईसाई दानिशवर की तक़रीर सुनी थी, जिसने कहा था कि शरीअत लानत है। ख़्वाह मख़्वाह एक इंसान को यह बावर कराया जाता है कि यह हलाल है, यह हराम है। जब वह हराम से रुक नहीं सकता तो उसका दिल मैला हो जाता है। वह अपने आपको ख़ताकार समझने लगता है और मुजरिम ज़मीर (guilty conscience) हो जाता है। इस अहसास के तहत वह मन्फ़ी नफ़्सियात का शिकार हो जाता है। उनके नज़दीक इस सारी ख़राबी का सबब यह है कि आपने हराम और हलाल का फ़लसफ़ा छेड़ा। अगर सब काम हलाल समझ लिये जाएँ तो कोई हराम काम करते हुए ज़मीर पर कोई बोझ नहीं होगा। दुनिया में ऐसे-ऐसे फ़लसफ़े भी मौजूद हैं। लेकिन अल्लाह तआला के नज़दीक फ़लसफ़ा-ए-अहकाम यह है:

आयत 26

"अल्लाह चाहता है कि तुम्हारे लिये अपने अहकाम वाज़ेह कर दे"	يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمْ

"और तुम्हें हिदायत बख़्शे उन रास्तों की जो तुमसे पहले के लोगों के थे"	وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ

पहले गुज़रे हुए लोगों में नेकोकार भी थे और बदकार भी। अल्लाह तआला चाहता है कि तुम अम्बिया व सुल्हा और नेकोकारों का रास्ता इख़्तियार करो {صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ} और तुम दूसरे रास्तों से बच सको।

"और तुम पर नज़रे इनायत फ़रमाये।"	وَيَتُوْبَ عَلَيْكُمْ ۭ
"और अल्लाह सब कुछ जानने वाला कमाले हिकमत वाला है।"	وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۲۶

आयत 27

"अल्लाह तो यह चाहता है कि तुम पर रहमत के साथ तवज्जो फ़रमाये।"	وَاللّٰهُ يُرِيْدُ اَنْ يَّتُوْبَ عَلَيْكُمْ ۣ
"और वह लोग जो शहवात की पैरवी करते हैं वह चाहते हैं कि तुम राहे हक़ से भटक कर दूर निकल जाओ।"	وَيُرِيْدُ الَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الشَّهَوٰتِ اَنْ تَمِيْلُوْا مَيْلًا عَظِيْمًا ۲۷

वह चाहते हैं कि तुम्हारा रुझान सिराते मुस्तक़ीम के बजाय ग़लत रास्तों की तरफ़ हो जाये और उधर ही तुम भटकते चले जाओ। आज भी औरत की आज़ादी (Women Lib) की बुनियाद पर और हुक़ूके निसवाँ के नाम पर दुनिया में जो तहरीकें बरपा हैं यह दरहक़ीक़त अल्लाह तआला की आयद करदा हुदूद व क़ुयूद को तोड़ कर जिन्सी बेराहरवी फैलाने की एक अज़ीम साज़िश है जो दुनिया में चल रही है।

आयत 28

"अल्लाह चाहता है कि तुम पर से बोझ को हल्का करे।"	يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّخَفِّفَ عَنْكُمْ ۚ

तुम यह ना समझो कि अल्लाह तुम पर बोझ डाल रहा है। अल्लाह तो तुम पर तख़फ़ीफ़ चाहता है, तुमसे बोझ को हल्का करना चाहता है। अगर तुम इन चीज़ों पर अमल नहीं करोगे तो मआशरे में गंदगियाँ फैलेंगी, फ़साद बरपा होगा, झगड़े होंगे, बद्‌गुमानियाँ होंगी। अल्लाह तआला इस सबकी रोकथाम चाहता है, वह तुम्हारे लिये आसानी चाहता है।

"और इंसान कमज़ोर पैदा किया गया है।"	وَخُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيْفًا ۲۸

उसके अंदर कमज़ोरी के पहलु भी मौजूद हैं। जहाँ एक बहुत ऊँचा पहलु है कि उसमें रूहे रब्बानी फूँकी गई है, वहाँ उसके अंदर नफ़्स भी तो है, जिसमें ज़ौफ़ के पहलु मौजूद हैं।

आयात 29 से 35 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ
تَرَاضٍ مِّنْكُمْ ۣ وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُمْ رَحِيْمًا ۲۹ وَمَنْ يَّفْعَلْ
ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَّظُلْمًا فَسَوْفَ نُصْلِيْهِ نَارًا ۭ وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَي اللّٰهِ يَسِيْرًا ۳۰ اِنْ
تَجْتَنِبُوْا كَبَاۗىِٕرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَنُدْخِلْكُمْ مُّدْخَلًا
كَرِيْمًا ۳۱ وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰي بَعْضٍ ۭ لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا
اكْتَسَبُوْا ۭ وَلِلنِّسَاۗءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا اكْتَسَبْنَ ۭ وَسْـَٔـلُوا اللّٰهَ مِنْ فَضْلِهٖ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ

بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمًا ۝٣٢ وَلِكُلٍّ جَعَلْنَا مَوَالِيَ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ ۭ وَالَّذِيْنَ
عَقَدَتْ اَيْمَانُكُمْ فَاٰتُوْهُمْ نَصِيْبَهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ شَهِيْدًا ۝٣٣ۧ
اَلرِّجَالُ قَوّٰمُوْنَ عَلَي النِّسَاۗءِ بِمَا فَضَّلَ اللّٰهُ بَعْضَهُمْ عَلٰي بَعْضٍ وَّبِمَآ اَنْفَقُوْا مِنْ
اَمْوَالِهِمْ ۭ فَالصّٰلِحٰتُ قٰنِتٰتٌ حٰفِظٰتٌ لِّلْغَيْبِ بِمَا حَفِظَ اللّٰهُ ۭ وَالّٰتِيْ تَخَافُوْنَ
نُشُوْزَهُنَّ فَعِظُوْهُنَّ وَاهْجُرُوْهُنَّ فِي الْمَضَاجِعِ وَاضْرِبُوْهُنَّ ۚ فَاِنْ اَطَعْنَكُمْ فَلَا
تَبْغُوْا عَلَيْهِنَّ سَبِيْلًا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيًّا كَبِيْرًا ۝٣٤ وَاِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا
فَابْعَثُوْا حَكَمًا مِّنْ اَهْلِهٖ وَحَكَمًا مِّنْ اَهْلِهَا ۚ اِنْ يُّرِيْدَآ اِصْلَاحًا يُّوَفِّقِ اللّٰهُ بَيْنَهُمَا ۭ
اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا خَبِيْرًا ۝٣٥

आयत 29

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ

"ऐ अहले ईमान, अपने माल आपस में बातिल तरीक़े पर हड़प ना करो"

اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ ۣ

"सिवाय इसके कि तिजारत हो तुम्हारी बाहमी रज़ामंदी से।"

तिजारत और लेन-देन की बुनियाद जब हक़ीक़ी बाहमी रज़ामंदी पर हो तो उससे होने वाला मुनाफ़ा जायज़ और हलाल है। फ़र्ज़ कीजिये कि आपकी जूतों की दुकान है। आपने ग्राहक को एक जूता दिखाया और उसके दाम दो सौ रुपये बताये। उसने जूता पसंद किया और दो सौ रुपये में ख़रीद लिया। यह बाहमी रजामंदी से सौदा है जो सीधे-साधे और सही तरीक़े पर हो गया। ज़ाहिर बात है कि इसमें से कुछ ना कुछ नफ़ा तो आपने कमाया है। आपने इसके लिये मेहनत की है, कहीं से ख़रीद कर लाये हैं, उसे स्टोर में महफ़ूज़ किया है, दुकान का किराया दिया है, लिहाज़ा यह मुनाफ़ा आपका हक़ है और ग्राहक को इसमें तायल नहीं होगा। लेकिन अगर आपने यही जूता झूठ बोल कर या झूठी क़सम खाकर फ़रोख़्त किया कि मैंने तो ख़ुद इतने का लिया है तो इस तरह आपने अपनी सारी मेहनत भी ज़ाया की और आपने हराम कमा लिया। इसी तरह मामलात और लेन-देन के वह तमाम तरीक़े जिनकी बुनियाद झूठ और धोखाधड़ी पर हो नाजायज़ और हराम हैं।

وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ ۭ

"और ना अपने आपको क़त्ल करो।"

यानि एक-दूसरे को क़त्ल ना करो। तमद्दुन की बुनियाद दो चीज़ों पर है, एहतरामे जान और एहतरामे माल। मेरे लिये आपका माल और आपकी जान मोहतरम है, मैं उसे कोई गज़ंद (चोट) ना पहुँचाऊँ, और आपके लिये मेरा माल और मेरी जान मोहतरम है, इसे आप गज़ंद ना पहुँचाए। अगर हमारे माबैन यह शरीफ़ाना मुआहिदा (Gentleman's agreemenet) क़ायम रहे तब तो हम एक मआशरे और एक मुल्क में रह सकते हैं, जहाँ इत्मिनान, अमन व सुकून और चैन होगा। और जहाँ यह दोनों एहतराम ख़त्म हो गए, जान का और माल का, तो ज़ाहिर बात है कि फिर वहाँ अमन व सुकून, चैन और इत्मिनान कहाँ से आएगा? इस आयत में बातिल तरीक़े से एक-दूसरे का माल खाने और क़त्ल नफ़्स दोनों को हराम क़रार देकर इन दोनों हुरमतों को एक साथ जमा कर दिया गया है।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُمْ رَحِيْمًا ۝٢٩

"यक़ीक़न अल्लाह तआला तुम पर बहुत मेहरबान है।"

आयत 30

“और जो कोई भी यह काम करेगा ताअद्दी और ज़ुल्म के साथ” وَمَنۡ يَّفۡعَلۡ ذٰلِكَ عُدۡوَانًا وَّظُلۡمًا

यानि यह दोनों काम--- बातिल तरीक़े से एक-दूसरे का माल खाना और क़त्ले नफ़्स।

“तो हम जल्द उसको झोंक देंगे आग में।” فَسَوۡفَ نُصۡلِيۡهِ نَارًا‌ؕ

“और यह चीज़ अल्लाह पर बहुत आसान है।” وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيۡرًا‏ ۝۳۰

यह मत समझना कि अल्लाह तआला नौए इंसानी के बहुत बड़े हिस्से को जहन्नम में कैसे झोंक देगा? यह अल्लाह के लिये कोई मुश्किल नहीं है।

अगली दो आयात में इंसानी तमद्दुन के दो बहुत अहम मसाइल बयान हो रहे हैं, जो बड़े गहरे और फ़लसफ़ियाना अहमियत के हामिल हैं। पहला मसला गुनाहों के बारे में है, जिनमें कबाइर और सग़ाइर की तक़सीम है। बड़े गुनाहों में सबसे बड़ा गुनाह शिर्क और कुफ़्र है। फिर यह कि जो फ़राइज़ हैं उनका तर्क करना और जो हराम चीज़ें हैं उनका इरत्काब कबाइर में शामिल होगा। एक हैं छोटी-छोटी कोताहियाँ जो इंसान से अक्सर हो जाती हैं, मसलन आदाब में या अहकाम की जुज़ायात (विवरण) में कोई कोताही हो गई, या बग़ैर किसी इरादे के कहीं किसी को ऐसी बात कह बैठे कि जो ग़ीबत के हुक्म में आ गई, वग़ैरह-वग़ैरह। इस ज़िमन में सेहतमंदाना रवैय्या यह है कि कबाइर से पूरे अहतमाम के साथ बचा जाये कि इससे इंसान बिल्कुल पाक हो जाये। फ़राइज़ की पूरी अदायगी हो, मुहर्ररमात से मुताल्लिक़ इज्तनाब (बचाव) हो, और यह जो छोटी-छोटी चीज़ें हैं इनके बारे में ना तो एक-दूसरे पर ज़्यादा गिरफ़्त और नकीर की जाये और ना ही ख़ुद ज़्यादा दिल गिरफ़्ता हुआ जाये, बल्कि इनके बारे में तवक़्क़ो रखी जाये कि अल्लाह तआला माफ़ फ़रमा देगा। इनके बारे में इस्तग़फ़ार भी किया जाये और यही सग़ाइर हैं जो नेकियों के ज़रिये से ख़ुद ब ख़ुद भी ख़त्म होते रहते हैं। जैसे हदीस में आता है कि आज़ा-ए-वुज़ू धोते हुए इन आज़ा के गुनाह धुल जाते हैं। रसूल अल्लाह ﷺ का इर्शाद है कि जो शख़्स वुज़ू करता है तो जब वह कुल्ली करता है और नाक में पानी डालता है तो उसके मुँह और नाक से उसके गुनाह निकल जाते हैं। जब वह चेहरा धोता है तो उसके चेहरे और उसकी आँखों से उसके गुनाह निकल जाते हैं। जब वह हाथ धोता है तो उसके हाथों से गुनाह निकल जाते हैं, यहाँ तक कि उसके हाथों के नाखूनों के नीचे से भी गुनाह धुल जाते हैं। जब वह सर का मसह करता है तो उसके सर और कानों से गुनाह झड़ जाते हैं। फिर जब वह पाँव धोता है तो उसके पाँवों से गुनाह निकल जाते हैं, यहाँ तक कि उसके पाँवों के नाखूनों के नीचे से भी गुनाह निकल जाते हैं। फिर उसका मस्जिद की तरफ़ चलना और नमाज़ पढ़ना उसकी नेकियों में इज़ाफ़ा बनता है।(1)

यह सग़ीरा गुनाह हैं जो नेकियों के असर से माफ़ होते रहते हैं, अज़रुए अल्फ़ाज़े क़ुरानी: {اِنَّ الۡحَسَنٰتِ يُذۡهِبۡنَ السَّيِّاٰتِ} (हूद:114) “यक़ीनन नेकियाँ बुराईयों को दूर कर देती हैं।” इन बुराईयों से मुराद कबाइर नहीं, सग़ाइर हैं। कबाइर तौबा के बग़ैर माफ़ नहीं होते (इल्ला माशा अल्लाह) उनके लिये तौबा करनी होगी। और जो अकबरुल कबाइर यानि शिर्क है उसके बारे में तो इस सूरत (आयत 48 और 116) में दो मर्तबा यह अल्फ़ाज़ आये हैं: {اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغۡفِرُ اَنۡ يُّشۡرَكَ بِهٖ وَيَغۡفِرُ مَا دُوۡنَ ذٰلِكَ لِمَنۡ يَّشَآءُ‌ } “बिला शुबह अल्लाह तआला यह बात तो कभी माफ़ नहीं करेगा कि उसके साथ किसी को शरीक ठहराया जाये, और इसके मा-सिवा जिस क़दर गुनाह हैं वह जिसके लिये चाहेगा माफ़ कर देगा।” लेकिन हमारे यहाँ जो मज़हब का मस्ख़शुदा (perverted) तसव्वुर मौजूद है उससे एक ऐसा मज़हबी मिज़ाज वुजूद में आता है कि जो कबाइर हैं वह तो हो रहे हैं, सूदख़ोरी हो रही है, हरामख़ोरी हो रही है, मगर छोटी-छोटी बातों पर नकीर हो रही है। सारी गिरफ़्त इन बातों पर हो रही है कि तुम्हारी दाढ़ी क्यों शरई नहीं है, और तुम्हारा पाहुँचा टखनों से नीचे क्यों है? क़ुरान मजीद में इस मामले को तीन जगह नक़ल किया गया है कि छोटी-छोटी चीजों के बारे में दरगुज़र

से भी काम लो और यह कि बहुत ज़्यादा मुतफ़क्किर भी ना हो। इस मामले में बाहमी निस्बत व तनासब (अनुपात) पेशे नज़र रहनी चाहिये। फ़रमाया:

आयत 31

إِنْ تَجْتَنِبُوا كَبَآئِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ

"अगर तुम इज्तनाब करते रहोगे उन बड़े-बड़े गुनाहों से जिनसे तुम्हें रोका जा रहा है"

نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ

"तो हम तुम्हारी छोटी बुराईयों को तुमसे दूर कर देंगे।"

हम तुम्हें इनसे पाक साफ़ करते रहेंगे। तुम जो भी नेक काम करोगे उनके हवाले से तुम्हारी सय्यिआत ख़ुद ब ख़ुद धुलती रहेगी।

وَنُدْخِلْكُمْ مُّدْخَلًا كَرِيْمًا

"और तुम्हें दाखिल करेंगे बहुत बाइज़्ज़त जगह पर।"

यह मज़मून सूरह अल शौरा में भी आया है और फिर सूरह अल् नज्म में भी। वाज़ेह रहे कि क़ुरान हकीम में अहम मज़ामीन कम से कम दो मर्तबा ज़रूर आते हैं और यह मज़मून क़ुरान में तीन बार आया है।

दूसरा मसला इंसानी मआशरे में फ़ज़ीलत का है। ज़ाहिर है कि अल्लाह तआला ने तमाम इंसानों को एक जैसा तो नहीं बनाया है। किसी को ख़ूबसूरत बना दिया तो किसी को बदसूरत। कोई सही सालिम है तो कोई नाक़िसुल आज़ा है। किसी का क़द ऊँचा है तो कोई ठिगने क़द का है और लोग उस पर हँसते हैं। किसी को मर्द बना दिया, किसी को औरत। अब कोई औरत अंदर ही अंदर कुढती रहे कि मुझे अल्लाह ने औरत क्यों बनाया तो इसका हासिल क्या होगा? इसी तरह कोई बदसूरत इंसान है या ठिगना है या किसी और ऐतबार से कमतर है और वह दूसरे शख़्स को देखता है कि वह तो बड़ा अच्छा है, तो अब उस पर कुढने के बजाय यह होना चाहिये कि अल्लाह तआला ने उसे जो कुछ दिया है उस पर सब्र और शुक्र करे। अल्लाह का फ़ज़्ल किसी और पहलु से भी हो सकता है। लिहाज़ा वह इरादा करे कि मैं नेकी और ख़ैर के कामों में आगे बढ़ जाऊँ, मैं इल्म में आगे बढ़ जाऊँ। इस तरह इंसान दूसरी चीज़ों से इन चीज़ों की तलाफ़ी करले जो उसे मयस्सर नहीं है, बजाय इसके कि एक मन्फ़ी नफ़्सियात परवान चढ़ती चली जाये। इस तरह इंसान अहसासे कमतरी का शिकार हो जाता है और अंदर ही अंदर कुढते रहने से तरह-तरह की ज़हनी बीमारियाँ पैदा होती है। ज़हनी उलझनों, महरूमियों और नाकामियों के अहसासात के तहत इंसान अपना ज़हनी तवाज़ुन तक खो बैठता है। चुनाँचे देखिये इस ज़िमन में किस क़दर उम्दा तालीम दी जा रही है:

आयत 32

وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰى بَعْضٍ

"और तमन्ना ना किया करो उस शय की जिसके ज़रिये से अल्लाह ने तुममें से बाज़ को बाज़ पर फ़ज़ीलत दे दी है।"

अल्लाह तआला ने बाज़ लोगों को उनकी ख़ल्क़ी सिफ़ात के ऐतबार से दूसरों पर फ़ज़ीलत दी है। आदमी की यह ज़हनियत कि जहाँ किसी दूसरे को अपने मुक़ाबले में किसी हैसियत से बढ़ा हुआ देखे बेचैन हो जाये, उसके अंदर हसद, रक़ाबत (विरोध) और अदावत (शत्रुता) के जज़्बात पैदा कर देती है। इस आयत में इसी ज़हनियत से बचने की हिदायत फ़रमाई जा रही है। फ़ज़ीलत का एक पहलु यह भी है कि अल्लाह तआला ने किसी को मर्द बनाया, किसी को औरत। यह चीज़ भी ख़ल्क़ी है और किसी औरत की मर्द बनने या किसी मर्द की औरत बनने की तमन्ना नरी (बिल्कुल) हिमाक़त है। अलबत्ता दुनिया में क़िस्मत आज़माई और जद्दो-जहद के मौक़े सबके लिये मौजूद हैं। चुनाँचे पहली बात यह बताई जा रही है:

"मर्दों के लिये हिस्सा है उसमें से जो वह कमाएँगे।" لِلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا اكْتَسَبُوا

"और औरतों के लिये हिस्सा है उसमें से जो वह कमाएँगी।" وَلِلنِّسَاءِ نَصِيبٌ مِّمَّا اكْتَسَبْنَ

यानि जहाँ तक नेकियों, ख़ैरात और हसनात का मामला है, या सय्यिआत व मुन्करात का मामला है, मर्द व ज़न मे बिल्कुल मुसावात है। मर्द ने जो नेकी कमाई वह उसके लिये है और औरत ने जो नेकी कमाई वह उसके लिये है। मुसाबक़त का यह मैदान दोनों के लिये ख़ुला है। औरत नेकी में मर्द से आगे निकल सकती है। करोड़ों मर्द होंगे जो क़यामत के दिन हज़रत ख़दीजा, हज़रत आयशा और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० के मक़ाम पर रश्क करेंगे और उनकी ख़ाक को भी नहीं पहुँच सकेगें। चुनाँचे आदमी का तर्ज़े अमल तस्लीम व रज़ा का होना चाहिये कि जो भी अल्लाह ने मुझे बना दिया और जो कुछ मुझे अता फ़रमाया उस हवाले से मुझे बेहतर से बेहतर करना है। मेरा "शकिला" तो अल्लाह की तरफ़ से आ गया है, जिससे मैं तजावुज़ नहीं कर सकता: { قُلْ كُلٌّ يَّعْمَلُ عَلٰي شَاكِلَتِهٖ } (बनी इस्राईल:84) और हम सूरतुल बक़रह में पढ़ चुके हैं कि { لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا } (आयत:286) लिहाज़ा मेरी वुसअत जो है वह अल्लाह ने बना दी है।

सूरह निसा की ज़ेरे मुताअला आयत से बाज़ लोग यह मतलब निकालने की कोशिश करते हैं कि औरतें भी माल कमा सकती हैं। यह बात समझ लीजिये कि क़ुरान मजीद में सिर्फ़ एक मक़ाम पर "كسب" का लफ़्ज़ मआशी जद्दो-जहद और मआशी कमाई के लिये आया है: { اَنْفِقُوْا مِنْ طَيِّبٰتِ مَا كَسَبْتُمْ } (अल् बक़रह:267)। बाक़ी पूरे क़ुरान में "कसब" जहाँ भी आया है आमाल के लिये आया है। कसब-ए-हसनात नेकियाँ कमाना है और कसब-ए-सय्यिआत बदियाँ कमाना। आप इस आयत के अल्फ़ाज़ पर दोबारा ग़ौर कीजिये: { لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا اكْتَسَبُوْا ۭ وَلِلنِّسَاۗءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا اكْتَسَبْنَ } "मर्दों के लिये हिस्सा है उसमें से जो उन्होंने कमाया, और औरतों के लिये हिस्सा है उसमें से जो उन्होंने कमाया।" तो क्या एक औरत की तनख़्वाह अगर दस हज़ार है तो उसे उसमें से पाँच हज़ार मिलेंगे? नहीं, बल्कि उसे पूरी तनख़्वाह मिलेगी। लिहाज़ा इस आयत में "कसब" का इत्लाक़ दुनयवी कमाई पर नहीं किया जा सकता। एक ख़ातून कोई काम करती है या कहीं मुलाज़मत करती है तो अगर उसमें कोई हराम पहलु नहीं है, शरीफ़ाना जॉब है, और वह सतर-ए-हिजाब के आदाब भी मल्हूज़ रखती है तो इसमें कोई हर्ज नहीं। लेकिन ज़ाहिर है कि जो भी कमाई होगी वह पूरी उसकी होगी, उसमें उसका हिस्सा तो नहीं होगा। अलबत्ता यह अस्लूब ज़जा-ए-आमाल के लिये आता है कि उन्हें उनकी कमाई में से हिस्सा मिलेगा। इसलिये कि आमाल के मुख़्तलिफ़ मरातिब होते हैं। अल्लाह तआला के यहाँ यह देखा जाता है कि इस अमल में ख़ुलूसे नीयत कितना था और आदाब कितने मल्हूज़ रखे गये। हम सूरतुल बक़रह में हज के ज़िक्र में भी पढ़ चुके हैं कि: { اُولٰۗىِٕكَ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّمَّا كَسَبُوْا ۭ } (आयत:202) यानि जो उन्होंने कमाया होगा उसमें से उन्हें हिस्सा मिलेगा। इस तरह यहाँ पर भी इकतसाब से मुराद अच्छे या बुरे आमाल कमाना है। यानि अख़्लाक़ी सतह पर और इंसानी इज़्ज़त व तकरीम के लिहाज़ से औरत और मर्द बराबर है, लेकिन मआशरती ज़िम्मेदारियों के हवाले से अल्लाह तआला ने जो तक़सीम कर रखी है उसके ऐतबार से फ़र्क़ है। अब अगर औरत इस फ़र्क़ को क़ुबूल करने पर तैयार ना हो, मुफ़ाहमत पर रज़ामन्द ना हो, और वह इस पर कुढ़ती रहे और मर्द के बिल्कुल बराबर होने की कोशिश करे तो ज़ाहिर है कि मआशरे में फ़साद और बिगाड़ पैदा हो जायेगा।

"और अल्लाह से उसका फ़ज़ल तलब करो।" وَسْـَٔلُوا اللّٰهَ مِنْ فَضْلِهٖ

यानि जो फ़ज़ीलत अल्लाह ने दूसरों को दे रखी है उसकी तमन्ना ना करो, अलबत्ता उससे फ़ज़ल की दुआ करो कि ऐ अल्लाह! तूने इस मामले में मुझे कमतर रखा है, तू मुझे दूसरे मामलात के अंदर हिम्मत दे कि मैं तरक्क़ी करूँ। अल्लाह तआला जिस पहलु से मुनासिब समझेगा अपना फ़ज़ल तुम्हें

अता फ़रमा देगा। वह बहुत से लोगों को किसी और पहलु से नुमाया कर देता है।

“यक़ीनन अल्लाह तआला हर शय का इल्म रखता है।” اِنَّ اللّٰہَ کَانَ بِکُلِّ شَیۡءٍ عَلِیۡمًا ﴿۳۲﴾

आयत 33

“और हर एक के लिये हमने वारिस मुक़र्रर कर दिये हैं जो भी वालिदैन और रिश्तेदार छोड़ें।” وَلِکُلٍّ جَعَلۡنَا مَوَالِیَ مِمَّا تَرَکَ الۡوَالِدٰنِ وَالۡاَقۡرَبُوۡنَ ؕ

क़ानूने विरासत की अहमियत को देखिये कि अब आख़िर में एक मर्तबा फिर इसका ज़िक्र फ़रमाया।

“और जिनके साथ तुम्हारे अहद व पैमान हों तो उनको उनका हिस्सा दो।” وَالَّذِیۡنَ عَقَدَتۡ اَیۡمَانُکُمۡ فَاٰتُوۡہُمۡ نَصِیۡبَہُمۡ ؕ

एक नया मसला यह पैदा हो गया था कि जिन लोगों के साथ दोस्ती और भाईचारा है या मुआख़ात का रिश्ता है (मदीना मुनव्वरा में रसूल अल्लाह ﷺ ने एक अंसारी और एक मुहाजिर को भाई-भाई बना दिया था) तो क्या उनका विरासत में भी हिस्सा है? इस आयत में फ़रमाया गया है कि विरासत तो उसी क़ायदे के मुताबिक़ वुरसा में तक़सीम होनी चाहिये जो हमने मुक़र्रर कर दिया है। जिन लोगों के साथ तुम्हारे दोस्ती और भाईचारे के अहद व पैमाने हैं, या जो मुँह बोले भाई या बेटे हैं उनका विरासत में कोई हिस्सा नहीं है, अलबत्ता अपनी ज़िन्दगी में उनके साथ जो भलाई करना चाहो कर सकते हो, उन्हें जो कुछ देना चाहो दे सकते हो, अपनी विरासत में से भी कुछ वसीयत करना चाहो तो कर सकते हो। लेकिन जो क़ानूने विरासत तय हो गया है उसमें किसी तरमीम व तब्दीली की गुँजाईश नही। विरासत में हक़दार कोई और नहीं होगा सिवाय उसके जिसको अल्लाह ने मुक़र्रर कर दिया है।

“यक़ीनन अल्लाह तआला हर चीज़ पर गवाह है।” اِنَّ اللّٰہَ کَانَ عَلٰی کُلِّ شَیۡءٍ شَہِیۡدًا ﴿۳۳﴾

अब आ रही है असल में वह काँटेदार आयत जो औरतों के हलक़ से बहुत मुश्किल से उतरती है, काँटा बन कर अटक जाती है। अब तक इस ज़िमन में जो बाते आईं वह दरअसल उसकी तम्हीद की हैसियत रखती हैं। पहली तम्हीद सूरतुल बक़रह में आ चुकी है: { وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِيْ عَلَيْهِنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ۠ وَلِلرِّجَالِ عَلَيْهِنَّ دَرَجَةٌ} (आयत:228) “औरतों के लिये इसी तरह हुक़ूक़ हैं जिस तरह उन पर जिम्मेदारियाँ हैं दस्तूर के मुताबिक़, अलबत्ता मर्दों के लिये उन पर एक दर्जा फ़ौक़ियत है।” यह कह कर बात छोड़ दी गई। इसके बाद अभी हमने पढ़ा: {وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰي بَعْضٍ ۭ } यह हिदायत औरतों के लिये मज़ीद ज़हनी तैयारी की गर्ज़ से दी गई। और अब दो टूक अंदाज़ में इर्शाद हो रहा है:

आयत 34

“मर्द औरतों पर हाकिम हैं” اَلرِّجَالُ قَوّٰمُوۡنَ عَلَی النِّسَآءِ

यह तर्जुमा मैं ज़ोर देकर कर रहा हूँ। इसलिये कि यहाँ قَامَ ‘عَلٰی’ के सिला के साथ आ रहा है। قَامَ ‘بِ’ के साथ आयेगा तो मायने होंगे “किसी शय को क़ायम करना।” इसी सूरह मुबारका में आगे चल कर यह अल्फ़ाज़ आएँगे: {كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ} अदल को क़ायम करने वाले बन कर खड़े हो जाओ!” जबकि قَامَ عَلٰی का मफ़हूम है कि किसी के ऊपर मुसल्लत होना। यानि हाकिम और मुन्तज़िम होना। चुनाँचे आयत ज़ेरे मुताअला से यह वाज़ेह हिदायत मिलती है कि घर के इदारे में हाकिम होने की हैसियत मर्द को

हासिल है, सरबराहे ख़ानदान मर्द है, औरत नहीं है। औरत को बहरहाल उसके साथ एक वज़ीर की हैसियत से काम करना है। यूँ तो हर इंसान यह चाहता है कि मेरी बात मानी जाये। घर के अंदर मर्द भी यह चाहता है और औरत भी। लेकिन आख़िरकार किसकी बात चलेगी? या तो दोनों बाहमी रज़ामंदी से किसी मसले पर मुत्तफ़िक़ हो जायें, बीवी अपने शौहर को दलील से, अपील से, जिस तरह हो सके क़ायल करले तो मामला ठीक हो गया। लेकिन अग़र मामला तय नहीं हो रहा तो अब किसकी राय फ़ैसलाकुन होगी? मर्द की! औरत की राय जब मुस्तरद (रद्द) होगी तो उसे इससे एक सदमा तो पहुँचेगा। इसी सदमे का असर कम करने के लिये अल्लाह तआला ने औरत में निस्यान का माद्दा ज़्यादा रख दिया है, जो एक safety valve का काम देता है। यही वज़ह है कि क़ानूने शहादत में एक मर्द की जगह दो औरतों का निसाब रखा गया है "ताकि उनमें से कोई एक भूल जाए तो दूसरी याद करा दे।" इस पर हम सूरतुल बक़रह (आयत:282) में भी गुफ़्तगू कर चुके हैं। बहरहाल अल्लाह तआला ने घर के इदारे का सरबराह मर्द को बनाया है। अब यह दूसरी बात है कि मर्द अपनी इस हैसियत का ग़लत इस्तेमाल करता है, औरत पर ज़ुल्म करता है और उसके हुक़ूक़ अदा नहीं करता तो अल्लाह के यहाँ बड़ी सख़्त पकड़ होगी। आपको एक इख़्तियार दिया गया है और आप उसका ग़लत इस्तेमाल कर रहे हैं, उसको ज़ुल्म का ज़रिया बना रहे हैं तो इसकी सज़ा अल्लाह तआला के यहाँ मिल जायेगी।

بِمَا فَضَّلَ اللّٰهُ بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ

"बसबब उस फ़ज़ीलत के जो अल्लाह ने बाज़ को बाज़ पर दी है"

मर्द को बाज़ सिफ़ात में औरत पर नुमाया तफ़व्वुक़ (सर्वोच्चता) हासिल है, जिनकी बिना पर क़व्वामियत की ज़िम्मेदारी उस पर डाली गई है।

وَّبِمَآ اَنْفَقُوْا مِنْ اَمْوَالِهِمْ

"और बसबब इसके कि जो वह ख़र्च करते हैं अपने माल।"

इस्लाम के मआशरती निज़ाम में किफ़ालती ज़िम्मेदारी तमामतर मर्द के ऊपर है। शादी के आग़ाज़ ही से मर्द अपना माल ख़र्च करता है। शादी अग़रचे मर्द की भी ज़रूरत है और औरत की भी, लेकिन मर्द महर देता है, औरत महर वसूल करती है। फिर घर में औरत का नान नफ़्क़ा मर्द के ज़िम्मे है।

فَالصّٰلِحٰتُ قٰنِتٰتٌ

"पस जो नेक बीवियाँ हैं वह इताअत शआर होती हैं"

मर्द को क़व्वामियत के मन्सब पर फ़ाइज़ करने के बाद अब नेक बीवियों का रवैय्या बताया जा रहा है। यूँ समझिये कि क़ुरान के नज़दीक एक ख़ातूने ख़ाना की जो बेहतरीन रविश होनी चाहिये वह यहाँ तीन अल्फ़ाज़ में बयान कर दी गई है: { فَالصّٰلِحٰتُ قٰنِتٰتٌ حٰفِظٰتٌ لِّلْغَيْبِ }

حٰفِظٰتٌ لِّلْغَيْبِ

"ग़ैब में हिफ़ाज़त करने वालियाँ"

वह मर्दों की ग़ैरमौजूदगी में उनके अमवाल और हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त करती हैं। ज़ाहिर है मर्द का माल तो घर में ही होता है, वह काम पर चला गया तो अब वह बीवी की हिफ़ाज़त में है। इसी तरह बीवी की अस्मत दरहक़ीकत मर्द की इज़्ज़त है। वह उसकी ग़ैरमौजूदगी में उसकी इज़्जत की हिफ़ाज़त करती है। इसी तरह मर्द के राज़ होते हैं, जिनकी सबसे ज़्यादा बढ़ कर राज़दान बीवी होती है। तो यह हिफ़ाज़त तीन ऐतबारात से है, शौहर के माल की, शौहर की इज़्ज़त व नामूस की, और शौहर के राज़ों की।

بِمَا حَفِظَ اللّٰهُ

"अल्लाह की हिफ़ाज़त से।"

असल हिफ़ाज़त व निगरानी तो अल्लाह की है, लेकिन इंसान को अपनी ज़िम्मेदारी अदा करनी पड़ती है। जैसे राज़िक़ तो अल्लाह है, लेकिन इंसान को काम करके रिज़्क़ कमाना पड़ता है।

"और वह ख्वातीन जिनके बारे में तुम्हें शरकशी का अंदेशा हो" وَالّٰتِیۡ تَخَافُوۡنَ نُشُوۡزَهُنَّ

अगर किसी औरत के रवैये से ज़ाहिर हो रहा है कि यह सरकशी, सरताबी, ज़िद और हठधर्मी की रविश पर चल रही पड़ी है, शौहर की बात नहीं मान रही बल्कि हर सूरत पर अपनी बात मनवाने पर मसर (ज़िद्दी) है और इस तरह घर की फ़िज़ा ख़राब की हुई है तो यह नशूज़ है। अगर औरत अपनी इस हैसियत को ज़हनन तस्लीम ना करे कि वह शौहर के ताबेअ है तो ज़ाहिर बात है कि मज़ाहमत (friction) होगी और उसके नतीजे में घर के अंदर एक फ़साद पैदा होगा। ऐसी सूरते हाल में मर्द को क़व्वाम होने की हैसियत से बाज़ तादीबी (अनुशासनात्मक) इख़्तियारात दिये गये हैं, जिनके तीन मराहिल हैं:

"पस उनको नसीहत करो" فَعِظُوۡهُنَّ

पहला मरहला समझाने-बुझाने का है, जिसमें डाँट-डपट भी शामिल है।

"और उनको उनके बिस्तरों में तन्हा छोड़ दो" وَاهۡجُرُوۡهُنَّ فِی الۡمَضَاجِعِ

अगर नसीहत व मलामत से काम ना चले तो दूसरा मरहला यह है कि उनसे अपने बिस्तर अलैहदा कर लो और उनके साथ ताल्लुक़ ज़नो-शो कुछ अरसे के लिये मुन्क़तअ कर लो।

"और उनको मारो।" وَاضۡرِبُوۡهُنَّ

अगर अब भी वह अपनी रविश ना बदलें तो मर्द को जिस्मानी सज़ा देने का भी इख़्तियार है। इस ज़िमन में आँहुज़ूर ﷺ ने हिदायत फ़रमाई है कि चेहरे पर ना मारा जाये और कोई ऐसी मार ना हो जिसका मुस्तक़िल निशान जिस्म पर पड़े। मज़कूरा बाला तादीबी हिदायात अल्लाह के कलाम के अंदर बयान फ़रमाई गई हैं और इन्हें बयान करने में हमारे लिये कोई झिझक नहीं होनी चाहिये। मआशरती ज़िन्दगी को दुरुस्त रखने के लिये इनकी ज़रुरत पेश आये तो इन्हें इख़्तियार करना होगा।

"फिर अग़र वह तुम्हारी इताअत करें तो उनके ख़िलाफ़ (ख़्वाह मा ख़्वाह ज़्यादती की) राह मत तलाश करो।" فَاِنۡ اَطَعۡنَكُمۡ فَلَا تَبۡغُوۡا عَلَيۡهِنَّ سَبِيۡلًا

अगर औरत सरकशी व सरताबी की रविश छोड़ कर इताअत की राह पर आ जाये तो पिछली कदूरतें (नफ़रतें) भुला देनी चाहिये उससे इन्तक़ाम लेने के बहाने तलाश नहीं करनी चाहिये।

"यक़ीनन अल्लाह तआला बहुत बुलंद है, बहुत बड़ा है।" اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيًّا كَبِيۡرًا ۝۳۴

आयत 35

"और अग़र तुमको मियाँ-बीवी के दरमियान इफ़तराक़ (विभाजन) का अंदेशा हो" وَاِنۡ خِفۡتُمۡ شِقَاقَ بَيۡنِهِمَا

अब अगर कोई तदबीर नतीजाखेज़ ना हो और उन दोनों के माबैन ज़िद्दम-ज़िद्दा की कैफ़ियत पैदा हो चुकी हो कि औरत भी अकड़ गई है, मर्द भी अकड़ा हुआ है, और अब उनका साथ चलना मुश्किल नज़र आता हो तो इस्लाहे अहवाल के लिये एक दूसरी तदबीर इख़्तियार करने की हिदायत फ़रमाई गई है।

فَابْعَثُوْا حَكَمًا مِّنْ اَهْلِهٖ وَحَكَمًا مِّنْ اَهْلِهَا ۚ

"तो एक हकम मर्द के ख़ानदान से मुक़र्रर करो और एक हकम औरत के ख़ानदान से।"

اِنْ يُّرِيْدَآ اِصْلَاحًا يُّوَفِّقِ اللّٰهُ بَيْنَهُمَا ۭ

"अग़र वह दोनों इस्लाह चाहेंगे तो अल्लाह तआला उनके दरमियान मुवाफ़क़त (समझौता) पैदा कर देगा।"

"اِنْ يُّرِيْدَآ اِصْلَاحًا" में मुराद ज़वजैन भी हो सकते हैं और हकमैन भी। यानि एक तो यह कि अगर वाक़िअतन शौहर और बीवी मुवाफ़क़त चाहते हैं तो अल्लाह उनके दरमियान साज़गारी पैदा फ़रमा देगा। बाज़ अवक़ात ऐसा होता है कि शौहर और बीवी दोनों की ख़्वाहिश होती है कि मामला दुरुस्त हो जाये, लेकिन कोई नफ़्सियाती गिरह ऐसी बंध जाती है जिसे खोलना उनके बस में नहीं होता। अब अगर दोनों के ख़ानदानों में से एक एक सालिस आ जायेगा और वह दोनों मिल बैठ कर ख़ैर-ख़्वाही के जज़्बे से इस्लाहे अहवाल की कोशिश करेंगे तो इस ग़िरह को खोल सकेगें। यह दोनों अस्बाबे इख़्तलाफ़ की तहक़ीक़ करेंगे, मियाँ-बीवी दोनों के गिले-शिकवे और वज़ाहतें सुनेंगे और दोनों को समझा-बुझा कर तस्फ़ीह (समझौते) की कोई सूरत निकालेंगे। "اِنْ يُّرِيْدَآ اِصْلَاحًا" में मुराद हकमैन भी हो सकते हैं कि अगर वह इस्लाह की पूरी कोशिश करेंगे तो अल्लाह तआला उनके माबैन मुवाफ़क़त पैदा फ़रमा देगा। लेकिन मेरा रुझान पहली राय की तरफ़ ज़्यादा है कि इससे मुराद मियाँ-बीवी हैं।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا خَبِيْرًا ۝٣٥

"यक़ीनन अल्लाह तआला सब कुछ जानता है और बा ख़बर है।""

आयात 36 से 43 तक

وَاعْبُدُوا اللّٰهَ وَلَا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْـــًٔا وَّبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا وَّبِذِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى
وَالْمَسٰكِيْنِ وَالْجَارِ ذِي الْقُرْبٰى وَالْجَارِ الْجُنُبِ وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْۢبِ وَابْنِ
السَّبِيْلِ ۙ وَمَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ مُخْتَالًا فَخُوْرَۨا ۝٣٦ۙ الَّذِيْنَ
يَبْخَلُوْنَ وَيَاْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ وَيَكْتُمُوْنَ مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۭ
وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ۝٣٧ۚ وَالَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ رِئَاۗءَ النَّاسِ
وَلَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ وَمَنْ يَّكُنِ الشَّيْطٰنُ لَهٗ قَرِيْنًا فَسَاۗءَ قَرِيْنًا
۝٣٨ وَمَاذَا عَلَيْهِمْ لَوْ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَنْفَقُوْا مِمَّا رَزَقَهُمُ اللّٰهُ ۭ وَكَانَ
اللّٰهُ بِهِمْ عَلِيْمًا ۝٣٩ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَظْلِمُ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ ۚ وَاِنْ تَكُ حَسَنَةً يُّضٰعِفْهَا
وَيُؤْتِ مِنْ لَّدُنْهُ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝٤٠ فَكَيْفَ اِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍۢ بِشَهِيْدٍ وَّجِئْنَا
بِكَ عَلٰي هٰٓؤُلَاۗءِ شَهِيْدًا ۝٤١ۭ يَوْمَىِٕذٍ يَّوَدُّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَعَصَوُا الرَّسُوْلَ لَوْ تُسَوّٰى
بِهِمُ الْاَرْضُ ۭ وَلَا يَكْتُمُوْنَ اللّٰهَ حَدِيْثًا ۝٤٢ۧ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقْرَبُوا الصَّلٰوةَ
وَاَنْتُمْ سُكٰرٰى حَتّٰى تَعْلَمُوْا مَا تَقُوْلُوْنَ وَلَا جُنُبًا اِلَّا عَابِرِيْ سَبِيْلٍ حَتّٰى
تَغْتَسِلُوْا ۭ وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰي سَفَرٍ اَوْ جَاۗءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ الْغَاۗىِٕطِ اَوْ
لٰمَسْتُمُ النِّسَاۗءَ فَلَمْ تَجِدُوْا مَاۗءً فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا طَيِّبًا فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ
وَاَيْدِيْكُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا غَفُوْرًا ۝٤٣

इससे क़ब्ल सूरतुल बक़रह आयत 83 में बनी इस्राईल से लिये जाने वाले मीसाक़ का ज़िक्र आया था। इस मीसाक़ में जो बातें मज़कूर थीं वह गोया उम्मेहाते शरीअत या दीन की बुनियादें हैं। इर्शाद हुआ: "और याद करो जब हमने बनी इस्राईल से अहद लिया था कि तुम नहीं इबादत करोगे किसी की सिवाये अल्लाह के, और वालिदैन के साथ नेक सुलूक करोगे और क़राबत-दारों, यतीमों और मोहताजों के साथ भी, और लोगों से अच्छी

बात कहो, और नमाज़ क़ायम रखो और ज़कात अदा करो।” अब यह दूसरा मक़ाम आ रहा है कि शरीअत के अंदर जो चीज़ें अहमतर हैं और जिन्हें मआशरती सतह पर मुक़द्दम रखना चाहिये वह बयान की जा रही हैं। फ़रमाया:

आयत 36

وَاعْبُدُوا اللّٰهَ وَلَا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْـًٔا

“और अल्लाह ही की बंदगी करो और किसी चीज़ को भी उसके साथ शरीक ना ठहराओ”

सबसे पहला हक़ अल्लाह का है कि उसी की बंदगी और परस्तिश करो, और उसके साथ किसी को शरीक ना ठहराओ।

وَّبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا

“और वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक करो।”

क़ुरान हकीम में ऐसे चार मक़ामात हैं जहाँ अल्लाह के हक़ के फ़ौरन बाद वालिदैन के हक़ का तज़किरा है। यह भी हमारे ख़ानदानी निज़ाम के लिये बहुत अहम बुनियाद है कि वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक हो, उनका अदब व अहतराम हो, उनकी ख़िदमत की जाये, उनके सामने आवाज़ पस्त रखी जाये। यह बात सूरह बनी इस्राईल में बड़ी तफ़सील से आयेगी। हमारे मआशरे में ख़ानदान के इस्तेहकाम (स्थिरता) की यह एक बहुत अहम बुनियाद है।

وَّبِذِی الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ

“और क़राबतदारों, यतीमों और मोहताजों के साथ”

وَالْجَارِ ذِی الْقُرْبٰى وَالْجَارِ الْجُنُبِ

“और क़राबतदार हमसाये और अजनबी हमसाये के साथ”

पहले आमतौर पर मुहल्ले ऐसे ही होते थे कि एक क़बीला एक ही जगह रह रहा है, रिश्तेदारी भी है और हमसायगी भी। लेकिन कोई अजनबी हमसाया भी हो सकता है। जैसे आज-कल शहरों में हमसाये अजनबी होते हैं।

وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْۢبِ وَابْنِ السَّبِيْلِ

“और हमनशीन साथी और मुसाफ़िर के साथ”

एक हमसायगी आरज़ी नौइयत की भी होती है। मसलन आप बस में बैठे हुए हैं, आपके बराबर बैठा हुआ शख़्स आपका हमसाया है। नेज़ जो लोग किसी भी ऐतबार से आपके साथी हैं, आपके पास बैठने वाले हैं, वह सब आपके हुस्ने सुलूक के मुस्तहिक़ हैं।

وَمَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ

“और वह लौंडी गुलाम जो तुम्हारे मिल्के यमीन हैं (उनके साथ भी नेक सुलूक करो)।”

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ مُخْتَالًا فَخُوْرَا ۳۶

“अल्लाह बिल्कुल पसंद नहीं करता उन लोगों को जो शेख़ीख़ोर और अकड़ने वाले हों।”

आयत 37

الَّذِيْنَ يَبْخَلُوْنَ وَيَاْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ

“जो ख़ुद भी बुख्ल (कंजूसी) करते हैं और दूसरे लोगों को भी बुख्ल का मशवरा देते हैं”

जिनमें यह शेख़ीखोरी और अकड़ होती है फिर वह बखील (कंजूस) भी होते हैं। इसलिये की ग़ुरूर व तकब्बुर आमतौर पर दौलत की बिना (बुनियाद) पर होता है। उन्हें मालूम है कि हमारे पास जो दौलत है अगर यह ख़र्च हो गई तो हमारा वह मक़ाम नहीं रहेगा, लोगों की नज़रों में हमारी इज़्ज़त नहीं रहेगी। लिहाज़ा वह अपना माल ख़र्च करने में कंजूसी से काम लेते हैं। इस पर उन्हें यह अंदेशा भी होता है कि लोग हमें मलामत करेंगे कि तुम बड़े बखील हो, चुनाँचे वह ख़ुद लोगों को इस तरह के मशवरे देने लगते हैं कि बाबा इस तरह ख़ुला ख़र्च ना किया करो, तुम ख़्वाह माख़्वाह पैसे उड़ाते हो, अक़्ल के नाख़ुन लो, कुछ ना कुछ बचा कर रखा करो, वक़्त पर काम आयेगा। इस तरह वह लोगों को भी बुख्ल का ही मशवरा देते हैं।

وَيَكْتُمُوْنَ مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ؕ

“और वह छुपाते हैं उसको जो अल्लाह ने उन्हें अपने फ़ज़ल में से दिया है।”

अपनी दौलत को छुपा-छुपा कर रखते हैं। उन्हें यह अंदेशा लाहक़ रहता है कि दौलत ज़ाहिर होगी तो कोई साइल सवाल कर बैठेगा। लिहाज़ा ख़ुद ही मिस्कीन सूरत बनाये रखते हैं कि कोई उनके सामने दस्ते सवाल दराज़ ना करे।

وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ۝٣٧ ۚ

“और ऐसे नाशुक्रों के लिये हमने बड़ा अहानत आमेज़ आज़ाब तैयार कर रखा है।”

आयत 38

وَالَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ رِئَاۗءَ النَّاسِ

“और वह लोग (भी अल्लाह को नापसंद हैं) जो अपने माल ख़र्च करते हैं लोगों को दिखाने के लिये”

وَلَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ؕ

“और वह हक़ीक़त में ईमान नहीं रखते ना अल्लाह पर ना यौमे आख़िर पर।”

وَمَنْ يَّكُنِ الشَّيْطٰنُ لَهٗ قَرِيْنًا فَسَاۗءَ قَرِيْنًا ۝٣٨

“(ऐसे लोग गोया शैतान के साथी हैं) और जिसका साथी शैतान हो जाये तो वह बहुत ही बुरा साथी है।”

आयत 39

وَمَاذَا عَلَيْهِمْ لَوْ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ

“इन लोगों पर क्या आफ़त आ जाती अगर यह अल्लाह और यौमे आख़िर पर (सदक़े दिल से) ईमान ले आते”

وَاَنْفَقُوْا مِمَّا رَزَقَهُمُ اللّٰهُ ؕ

“और ख़र्च करते (खुले दिल के साथ) उसमें से जो अल्लाह ने उन्हें दिया है।”

وَكَانَ اللّٰهُ بِهِمْ عَلِيْمًا ۝٣٩

“और अल्लाह तआला इनसे अच्छी तरह वाक़िफ़ है।”

आयत 40

إِنَّ اللّٰهَ لَا يَظْلِمُ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ

“यक़ीनन अल्लाह किसी पर ज़र्रे के हमवज़न (बराबर) भी ज़ुल्म नहीं करेगा।”

وَإِنْ تَكُ حَسَنَةً يُّضٰعِفْهَا

“अगर एक नेकी होगी तो उसको कई गुना बढ़ाएगा”

وَيُؤْتِ مِنْ لَّدُنْهُ اَجْرًا عَظِيْمًا۝

“और ख़ास अपने ख़जाना-ए-फ़ज़ल से मज़ीद बहुत बड़ा अजर देगा।”

इस सूरह मुबारका की अगली आयत बड़ी अहम है। यह उस शहादत अलन्नास से मुताल्लिक़ है जो मज़मून सूरतुल बक़रह (आयत:143) में आया था कि ऐ मुसलमानों! तुम्हें अब शोहदा अलन्नास बनाया गया है, जैसे कि नबी ﷺ ने तुम पर शहादत दी है। नबी अकरम ﷺ क़यामत के दिन खड़े होकर कहेंगे कि ऐ अल्लाह मेरे पास जो दीन आया था मैंने इन्हें पहुँचा दिया था, अब यह अपने तर्ज़े अमल के ख़ुद ज़िम्मेदार हैं। यही बात क़यामत के दिन खड़े होकर तुम्हें कहनी है कि ऐ अल्लाह हमने अपने ज़माने के लोगों तक तेरा दीन पहुँचा दिया था, अब इसके बाद अपने तर्ज़े अमल के यह ख़ुद जवाबदेह हैं। ऐसा ना हो कि उल्टा वह हमारे ऊपर मुक़दमा करें कि ऐ अल्लाह इन बदबख्तों ने हमें तेरा दीन नहीं पहुँचाया, यह ख़जाने के साँप बन कर बैठे रहे। यह तो शहादत का एक रुख़ है, लेकिन जिनके काँधों पर यह ज़िम्मेदारी डाल दी गई हो, वाक़्या यह है कि उसके लिये तो यह एक बहुत भारी बोझ है। यहाँ इसका नुक़्शा खींचा जा रहा है कि क़यामत के दिन क्या होगा।

आयत 41

فَكَيْفَ اِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍ بِشَهِيْدٍ

“तो उस दिन क्या सूरते हाल होगी जब हम हर उम्मत में से एक गवाह खड़ा करेंगे”

यानि उस नबी और रसूल को गवाह बना कर खड़ा करेंगे जिसने उस उम्मत को दावत पहुँचाई होगी।

وَّجِئْنَا بِكَ عَلٰى هٰٓؤُلَاۗءِ شَهِيْدًا۝

“और (ऐ नबी) आपको लाएँगे हम इन पर गवाह बना कर।”

यानि आप ﷺ को खड़े होकर कहना पड़ेगा कि ऐ अल्लाह! मैंने इन तक तेरा पैग़ाम पहुँचा दिया था। हमारी अदालती इस्तलाह में इसे इस्तग़ाशा का गवाह (prosecution witness) कहा जाता है। गोया अदालत-ए-ख़ुदावंदी में नबी अकरम ﷺ इस्तग़ाशा के गवाह की हैसियत से पेश होकर कहेंगे कि ऐ अल्लाह, तेरा पैग़ाम जो मुझ तक पहुँचा था मैंने इन्हें पहुँचा दिया था, अब यह ख़ुद ज़िम्मेदार और जवाबदेह हैं। चुनाँचे अपनी ही क़ौम के ख़िलाफ़ गवाही आ गई ना? यहाँ अल्फ़ाज़ नोट कर लीजिये: عَلٰى هٰٓؤُلَاۗءِ شَهِيْدًا और عَلٰى हमेशा मुख़ालफ़त के लिये आता है। हम तो हाथ पर हाथ धरे शफ़ाअत की उम्मीद में हैं और यहाँ हमारे ख़िलाफ मुक़दमा क़ायम होने चला है। अल्लाह के रसूल ﷺ दरबारे ख़ुदावंदी में हमारे ख़िलाफ़ गवाही देंगे कि ऐ अल्लाह! मैंने तेरा दीन इनके सुपुर्द किया था, अब इसे दुनिया में फैलाना इनका काम था, लेकिन इन्होंने ख़ुद दीन को छोड़ दिया। सूरतुल फ़ुरक़ान में अल्फ़ाज़ आये हैं: {وَقَالَ الرَّسُوْلُ يٰرَبِّ اِنَّ قَوْمِي اتَّخَذُوْا هٰذَا الْقُرْاٰنَ مَهْجُوْرًا} (आयत:30) “और रसूल ﷺ कहेंगे कि परवरदिग़ार, मेरी क़ौम ने इस क़ुरान को तर्क कर दिया था।” सूरतुन्निसा की आयत ज़ेरे मुताअला के बारे में एक वाक़िया भी है। एक मर्तबा रसूल ﷺ ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ि० से इर्शाद फ़रमाया कि मुझे क़ुरान सुनाओ! उन्होंने अर्ज़ किया हुज़ूर आपको सुनाऊँ? आप ﷺ पर तो नाज़िल हुआ है। फ़रमाया: हाँ, लेकिन मुझे किसी दूसरे से सुन कर कुछ और हज़ (आनंद) हासिल होता है। हज़रत अब्दुल्लाह रज़ि० ने सूरतुन्निसा पढ़नी

शुरू की। हुज़ूर ﷺ भी सुन रहे थे, बाक़ी और सहाबा रज़ि० भी होंगे और हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ि० गर्दन झुकाए पढ़ते जा रहे थे। जब इस आयत पर पहुँचे { فَكَيْفَ اِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍۭ بِشَهِيْدٍ وَّجِئْنَا بِكَ عَلٰي هٰٓؤُلَاۗءِ شَهِيْدًا } तो हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया حَسْبُکَ، حَسْبُکَ (बस करो, बस करो!) अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ि० ने सर उठा कर देखा तो हुज़ूर ﷺ की आँखों में आँसू रवाँ थे। इस वजह से कि मुझे अपनी क़ौम के ख़िलाफ़ गवाही देनी होगी।

आयत 42

يَوْمَىِٕذٍ يَّوَدُّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَعَصَوُا الرَّسُوْلَ لَوْ تُسَوّٰى بِهِمُ الْاَرْضُ

“उस दिन तमन्ना करेंगे वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया था और रसूल की नाफ़रमानी की थी कि काश उनके समेत ज़मीन बराबर कर दी जाये।”

यानि किसी तरह ज़मीन फट जाये और हम इसमें दफ़न हो जायें, हमें नसयम मन्सिया कर दिया जाये।

وَلَا يَكْتُمُوْنَ اللّٰهَ حَدِيْثًا

“और वह अल्लाह से कोई बात भी छुपा नहीं सकेगें।”

आयत 43

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقْرَبُوا الصَّلٰوةَ وَاَنْتُمْ سُكٰرٰى

“ऐ अहले ईमान, नमाज़ के क़रीब ना जाओ इस हाल में कि तुम नशे की हालत में हो”

حَتّٰى تَعْلَمُوْا مَا تَقُوْلُوْنَ

“यहाँ तक कि तुम्हें मालूम हो जो कुछ तुम कह रहे हो”

सूरतुल बक़रह (आयत:219) में शराब और जुए के बारे में महज़ इज़हारे नाराज़गी फ़रमाया था कि { وَاِثْمُهُمَآ اَكْبَرُ مِنْ نَّفْعِهِمَا } “उनके गुनाह का पहलु नफ़े के पहलु से बड़ा है।” अब अगले क़दम के तौर पर शराब के अंदर जो ख़बासत, शनाअत और बुराई का पहलु है उसे एक मर्बता और उजागर किया गया कि नशे की हालत में नमाज़ के क़रीब ना जाया करो। जब तक नशा उतर ना जाये और तुम्हें मालूम हो कि तुम क्या कह रहे हो उस वक़्त तक नमाज़ ना पढ़ा करो। चूँकि शराब की हुरमत का हुक्म अभी नहीं आया था लिहाज़ा बाज़ अवक़ात लोग नशे की हालत ही में नमाज़ पढ़ने खड़े हो जाते और कुछ का कुछ पढ़ जाते। ऐसे अवक़ात भी बयान हुए हैं कि किसी ने नशे मे नमाज़ पढ़ाई और “لَآ اَعْبُدُ مَا تَعْبُدُوْنَ” के बजाय “اَعْبُدُ مَا تَعْبُدُوْنَ” पढ़ दिया। इस पर ख़ास तौर पर यह आयत नाज़िल हुई। { حَتّٰى تَعْلَمُوْا مَا تَقُوْلُوْنَ } के अल्फ़ाज़ क़ाबिले ग़ौर हैं कि जब तक कि तुम शऊर के साथ समझ ना रहे हो कि तुम क्या कह रहे हो! इसमें एक इशारा इधर भी हो गया कि बे समझ नमाज़ ना पढ़ा करो! यानि एक तो मदहोशी की वजह से समझ में नहीं आ रहा और ग़लत-सलत पढ़ रहे हैं तो इससे रोका जा रहा है, और एक समझ ही नहीं कि नमाज़ में क्या पढ़ रहे हैं। क़ुरान कह रहा है कि तुम्हें मालूम होना चाहिये कि तुम कह क्या रहे हो। अब जिन्हें क़ुरान मजीद के मायने नहीं आते, नमाज़ के मायने नहीं आते, उन्हें क्या पता कि वह नमाज़ में क्या कह रहे हैं!

وَلَا جُنُبًا اِلَّا عَابِرِيْ سَبِيْلٍ حَتّٰى تَغْتَسِلُوْا

“और इसी तरह जनाबत की हालत में भी (नमाज़ के क़रीब ना जाओ) जब तक ग़ुस्ल ना कर लो, इल्ला यह कि रास्ते से गुज़रते हुए।”

अग़र तुमने अपनी बीवियों से मुबाशरत (संभोग) की हो या अहतलाम वग़ैरह की शक्ल हो गई हो तब भी तुम नमाज़ के क़रीब मत जाओ जब तक कि ग़ुस्ल न कर लो। "اِلَّا عَابِرِیۡ سَبِیۡلٍ" के बारे में बहुत से क़ौल हैं। बाज़ फ़ुक़हा और मुफ़स्सिरीन ने इसका यह मफ़हूम समझा है कि हालते जनाबत में मस्जिद में ना जाना चाहिये, इल्ला यह कि किसी काम के लिये मस्जिद में से गुज़रना हो, जबकि बाज़ ने इससे मुराद सफ़र लिया है।

وَاِنۡ کُنۡتُمۡ مَّرۡضٰۤی اَوۡ عَلٰی سَفَرٍ

"और अगर तुम बीमार हो या सफ़र में हो"

आदमी को तेज़ बुख़ार है या कोई और तकलीफ़ है जिसमें गुस्ल करना मज़र (ख़तरनाक) साबित हो सकता है तो तयम्मुम की इजाज़त है। इसी तरह कोई शख़्स सफ़र में है और उसे पानी दस्तयाब नहीं है तो वह तयम्मुम कर ले।

اَوۡ جَآءَ اَحَدٌ مِّنۡکُمۡ مِّنَ الۡغَآئِطِ

"या तुममें से कोई क़ज़ा-ए-हाजत (शौच) के बाद आया हो"

اَوۡ لٰمَسۡتُمُ النِّسَآءَ

"या तुमने औरतों के साथ मुबाशरत की हो"

فَلَمۡ تَجِدُوۡا مَآءً

"फिर तुम पानी ना पाओ"

فَتَیَمَّمُوۡا صَعِیۡدًا طَیِّبًا

"तो पाक मिट्टी का क़सद करो"

यानि वो तमाम सूरतें जिनमें ग़ुस्ल या वुज़ू वाज़िब है, इनमें अगर बीमारी ग़ुस्ल से मना हो, हालते सफ़र में नहाना मुमकिन ना हो, क़ज़ा-ए-हाजत या औरतों से मुबाशरत के बाद पानी दस्तयाब ना हो तो पाक मिट्टी से तयम्मुम कर लिया जाये।

فَامۡسَحُوۡا بِوُجُوۡهِکُمۡ وَاَیۡدِیۡکُمۡ ؕ

"और इससे अपने चेहरों और हाथों पर मसह कर लो।"

اِنَّ اللّٰهَ کَانَ عَفُوًّا غَفُوۡرًا ﴿۴۳﴾

"यक़ीनन अल्लाह तआला बहुत माफ़ करने वाला, बख़्शने वाला है।"

हज़रत आयशा रज़ि० से लैलतुलक़द्र की जो दुआ मरवी है उसमें यही लफ़्ज़ आया है: ((اَللّٰھُمَّ اِنَّکَ عَفُوٌّ تُحِبُّ الْعَفْوَ فَاعْفُ عَنِّیْ)) "ऐ अल्लाह, तू माफ़ फ़रमाने वाला है, माफ़ी को पसंद करता है, पस तू मुझे माफ़ फ़रमा दे!"

सूरतुन्निसा की इन तैंतालीस आयात में वही सूरतुल बक़रह का अंदाज़ है कि शरीअत के अहकाम मुख़्तलिफ़ गोशों में, मुख़्तलिफ़ पहलुओं से बयान हुए। इबादात के ज़िमन में तयम्मुम का ज़िक्र आ गया, विरासत का क़ानून पूरी तफ़सील से बयान हो गया और मआशरे में जिन्सी बेराहरवी की रोकथाम के लिये अहकाम आ गये, ताकि एक पाकीज़ा और सालेह मआशरा वुजूद में आये जहाँ एक मुस्तहकम ख़ानदानी निज़ाम हो। अब यहाँ एक मुख़्तसर सा ख़िताब अहले किताब के बारे में आ रहा है।

आयात 44 से 57 तक

اَلَمۡ تَرَ اِلَی الَّذِیۡنَ اُوۡتُوۡا نَصِیۡبًا مِّنَ الۡکِتٰبِ یَشۡتَرُوۡنَ الضَّلٰلَۃَ وَیُرِیۡدُوۡنَ اَنۡ
تَضِلُّوا السَّبِیۡلَ ﴿۴۴﴾ وَاللّٰهُ اَعۡلَمُ بِاَعۡدَآئِکُمۡ ؕ وَکَفٰی بِاللّٰهِ وَلِیًّا ٝ وَّکَفٰی بِاللّٰهِ نَصِیۡرًا
﴿۴۵﴾ مِنَ الَّذِیۡنَ هَادُوۡا یُحَرِّفُوۡنَ الۡکَلِمَ عَنۡ مَّوَاضِعِهٖ وَیَقُوۡلُوۡنَ سَمِعۡنَا وَعَصَیۡنَا
وَاسۡمَعۡ غَیۡرَ مُسۡمَعٍ وَّرَاعِنَا لَیًّۢا بِاَلۡسِنَتِهِمۡ وَطَعۡنًا فِی الدِّیۡنِ ؕ وَلَوۡ اَنَّهُمۡ قَالُوۡا
سَمِعۡنَا وَاَطَعۡنَا وَاسۡمَعۡ وَانۡظُرۡنَا لَکَانَ خَیۡرًا لَّهُمۡ وَاَقۡوَمَ ۙ وَلٰکِنۡ لَّعَنَهُمُ اللّٰهُ

بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝۴۶ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ اٰمِنُوْا بِمَا نَزَّلْنَا
مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ مِّنْ قَبْلِ اَنْ نَّطْمِسَ وُجُوْهًا فَنَرُدَّهَا عَلٰٓى اَدْبَارِهَآ اَوْ نَلْعَنَهُمْ
كَمَا لَعَنَّآ اَصْحٰبَ السَّبْتِ ۭ وَكَانَ اَمْرُ اللّٰهِ مَفْعُوْلًا ۝۴۷ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ
بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَاۗءُ ۚ وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدِ افْتَرٰٓى اِثْمًا عَظِيْمًا ۝۴۸
اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ يُزَكُّوْنَ اَنْفُسَهُمْ ۭ بَلِ اللّٰهُ يُزَكِّيْ مَنْ يَّشَاۗءُ وَلَا يُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا
۝۴۹ اُنْظُرْ كَيْفَ يَفْتَرُوْنَ عَلَي اللّٰهِ الْكَذِبَ ۭ وَكَفٰى بِهٖٓ اِثْمًا مُّبِيْنًا ۝۵۰ اَلَمْ تَرَ اِلَى
الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ يُؤْمِنُوْنَ بِالْجِبْتِ وَالطَّاغُوْتِ وَيَقُوْلُوْنَ لِلَّذِيْنَ
كَفَرُوْا هٰٓؤُلَاۗءِ اَهْدٰى مِنَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا سَبِيْلًا ۝۵۱ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ ۭ
وَمَنْ يَّلْعَنِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ نَصِيْرًا ۝۵۲ اَمْ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّنَ الْمُلْكِ فَاِذًا لَّا
يُؤْتُوْنَ النَّاسَ نَقِيْرًا ۝۵۳ اَمْ يَحْسُدُوْنَ النَّاسَ عَلٰي مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۚ
فَقَدْ اٰتَيْنَآ اٰلَ اِبْرٰهِيْمَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَاٰتَيْنٰهُمْ مُّلْكًا عَظِيْمًا ۝۵۴ فَمِنْهُمْ مَّنْ
اٰمَنَ بِهٖ وَمِنْهُمْ مَّنْ صَدَّ عَنْهُ ۭ وَكَفٰى بِجَهَنَّمَ سَعِيْرًا ۝۵۵ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِنَا
سَوْفَ نُصْلِيْهِمْ نَارًا ۭ كُلَّمَا نَضِجَتْ جُلُوْدُهُمْ بَدَّلْنٰهُمْ جُلُوْدًا غَيْرَهَا لِيَذُوْقُوا
الْعَذَابَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ۝۵۶ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ
سَنُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ لَهُمْ فِيْهَآ اَزْوَاجٌ
مُّطَهَّرَةٌ ۡ وَّنُدْخِلُهُمْ ظِلًّا ظَلِيْلًا ۝۵۷

आयत 44

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ

“क्या तुमने देखा नहीं उन लोगों को जिन्हें किताब में से एक हिस्सा दिया गया था”

वह “अल किताब” एक हक़ीक़त है जिसमें से एक हिस्सा तौरात और एक हिस्सा इन्जील के नाम से नाज़िल हुआ और फिर वह किताब हर ऐतबार से कामिल होकर क़ुरान की शक्ल में नाज़िल हुई।

يَشْتَرُوْنَ الضَّلٰلَةَ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ تَضِلُّوا السَّبِيْلَ ۝۴۴ۭ

“वह गुमराही ख़रीदते हैं और चाहते हैं कि तुम भी गुमराह हो जाओ।”

मुशरिकीने मक्का भी यही कुछ किया करते थे कि लोग लहव व लअब (खेल-तमाशे) में मशग़ूल रहें और क़ुरान ना सुनें। उन्होंने ईरान से रुस्तम व असफंदयार के क़िस्से मँगवा कर दास्तान गोई का सिलसिला शुरू किया और गाने-बजाने वाली लौंडियों और आलाते मौसीक़ी का इन्तेज़ाम किया ताकि लोग इन्हीं चीजों में मशग़ूल रहें और हुज़ूर ﷺ की बात कोई ना सुने। इसी तरह मदीना में यहूद का भी यही मामला था कि वह ख़ुद भी गुमराहकुन मशागुल इख़्तियार करते और दूसरों को भी उसमें मशग़ूल करने की कोशिश करते। हमारे ज़माने में इस क़िस्म के मशागुल की बहुत सी सूरतें हैं। हमारे यहाँ जब क्रिकेट मैच हो रहे होते हैं और टीवी पर दिखाये जाते हैं तो पूरी क़ौम का यह हाल होता है गोया कि दुनिया की अहमतरीन शय क्रिकेट ही है। इसी तरह दुनिया में दूसरे खेल-तमाशे देखे जाते हैं कि दुनिया उनके पीछे पागल हो जाती है। शैतान को और क्या चाहिये? वह तो यही चाहता है ना कि लोगों की हक़ाइक़ की तरफ़ निगाह ही ना हो। किसी को यह सोचने की ज़रूरत ही महसूस ना हो कि ज़िन्दगी किस लिये है? जीना काहे के लिये है? मौत है तो उसके बाद क्या होना है? इंसान या तो हैवानी सतह पर ज़िन्दगी गुज़ारे दे कि उसे हलाल व हराम की तमीज़ ही ना रहे कि वह क्या कमा रहा है और क्या खा रहा है, और या फिर इस तरह के लहव व लअब के अंदर ज़िन्दगी गुज़ार दे। इन चीज़ों के फ़रोग़ के लिये बड़े मुस्तहकम निज़ाम हैं और इन खिलाड़ियों वग़ैरह के लिये बहुत बड़े-बड़े ईनामात होते हैं। फ़रमाया: यह चाहते हैं कि तुम्हें भी सीधे रास्ते से भटका दें, राहे हक़ से मुनहरिफ़ कर दें।

आयत 45

وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاَعْدَآىِٕكُمْ

“अल्लाह तुम्हारे दुश्मनों से ख़ूब वाक़िफ़ है।”

وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَلِيًّا وَّكَفٰى بِاللّٰهِ نَصِيْرًا ۝٤٥

“और अल्लाह काफ़ी है तुम्हारे वली और पुश्तपनाह होने की हैसियत से और काफ़ी है तुम्हारे मददगार होने के ऐतबार से।”

आयत 46

مِنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ

“इन यहूदियों में से कुछ लोग हैं जो कलाम को उसके असल मक़ाम व महल (जगह) से फेरते हैं।”

وَيَقُوْلُوْنَ سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا

“वह कहते हैं हमने सुना और हमने नहीं माना”

यहूद अपनी ज़बानों को तोड़-मरोड़ कर अल्फ़ाज़ को कुछ का कुछ बना देते। रसूल अल्लाह ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर होते तो अहकामे इलाही सुन कर कहते سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا । बज़ाहिर वह अहले ईमान की तरह سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا (हमने सुना और हमने क़ुबूल किया) कह रहे होते लेकिन ज़बान को मरोड़ कर हक़ीक़त में سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا कहते।

وَاسْمَعْ غَيْرَ مُسْمَعٍ

“और (कहते हैं) सुनिये, ना सुना जाये।”

वह हुज़ूर ﷺ की मजलिस में आप ﷺ को मुख़ातिब करके कहते ज़रा हमारी बात सुनिये! साथ ही चुपके से कह देते कि आपसे सुना ना जाये, हमें आपको सुनाना मतलूब नहीं है। इस तरह वह शाने रिसालत में गुस्ताख़ी के मुरतकिब होते।

وَّرَاعِنَا لَيًّۢا بِاَلْسِنَتِهِمْ

“और (कहते हैं) राइना अपनी ज़बानों को मोड़ कर”

राइना का मफ़हूम तो है “हमारी रियायत कीजिये” लेकिन वह इसे खींच कर राईना बना देते। यानि ऐ हमारे चरवाहे!

وَطَعْنًا فِي الدِّيْنِ

“और दीन में तअन करने के लिये।”

यहूद अपनी ज़बानों को तोड़-मरोड़ कर ऐसे कलिमात कहते और फिर दीन में यह ऐब लगाते कि अगर यह शख़्स वाक़ई नबी होता तो हमारा फ़रेब इस पर ज़ाहिर हो जाता। चुनाँचे अल्लाह तआला ने उनके फ़रेब को ज़ाहिर कर दिया।

وَلَوْ اَنَّهُمْ قَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاسْمَعْ وَانْظُرْنَا لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَقْوَمَ

“और अगर वह यह कहते कि हमने सुना और इताअत क़ुबूल की, और आप हमारी बात सुन लीजिये, और ज़रा हमें मोहलत दीजिये, तो यह उनके हक़ में कहीं बेहतर होता और बहुत दुरुस्त और सीधी बात होती”

وَلٰكِنْ لَّعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ

“लेकिन अल्लाह ने तो उनके कुफ़्र की वजह से उन पर लानत कर दी है”

فَلَا يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا ﴿٤٦﴾

"तो अब वह ईमान लाने वाले नहीं हैं मगर शाज़ ही कोई।"

आयत 47

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ اٰمِنُوْا بِمَا نَزَّلْنَا

"ऐ वह लोगो जिनको किताब दी गई थी! ईमान लाओ उस पर जो हमने नाज़िल किया है"

यहूद की शरारतों पर लानत व मलामत के साथ ही उन्हें क़ुरान करीम पर ईमान की दावत भी दी जा रही है।

مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ

"जो उसकी तस्दीक़ करते हुए आया है जो तुम्हारे पास है"

مِّنْ قَبْلِ اَنْ نَّطْمِسَ وُجُوْهًا فَنَرُدَّهَا عَلٰٓى اَدْبَارِهَآ

"इससे क़ब्ल कि हम चेहरों को मिटा डालें, फिर उनको उनकी पीठों की तरफ़ मोड़ दें"

यानि चेहरे इस तरह मस्ख़ कर दिये जायें कि बिल्कुल सपाट हो जायें, उन पर कोई निशान बाक़ी ना रहे और फिर उन्हें पुश्त की तरफ़ मोड़ दिया जाये कि चेहरा पीछे और गुद्दी सामने।

اَوْ نَلْعَنَهُمْ كَمَا لَعَنَّآ اَصْحٰبَ السَّبْتِ ۭ

"या हम उन पर भी इसी तरह लानत कर दें जिस तरह हमने अपने अस्हाबे सब्त पर लानत की थी।"

अस्हाबे सब्त के वाक़िये की तफ़सील सूरतुल आराफ़ में आयेगी, लेकिन इज्मालन यह वाक़िया सूरतुल बक़रह में आ चुका है।

وَكَانَ اَمْرُ اللّٰهِ مَفْعُوْلًا ﴿٤٧﴾

"और अल्लाह का हुक्म तो नाफ़िज़ (लागू) होकर रहना है।"

आयत 48

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ

"यक़ीनन अल्लाह इस बात को हरगिज़ नहीं बख़्शेगा कि उसके साथ शिर्क किया जाये"

وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَاۗءُ ۚ

"इससे कमतर जो कुछ है वह जिसके लिये चाहेगा बख़्श देगा।"

गोया यह भी खुला लाइसेंस नहीं है कि आप समझ लें कि बाक़ी सब गुनाह तो माफ़ हो ही जायेंगे। इसकी उम्मीद दिलाई गई है कि अल्लाह तआला बाक़ी तमाम गुनाहों को बग़ैर तौबा के भी माफ़ कर सकता है, लेकिन शिर्क के माफ़ होने का कोई इम्कान नहीं।

وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدِ افْتَرٰٓى اِثْمًا عَظِيْمًا ﴿٤٨﴾

"और जो अल्लाह तआला के साथ शिर्क करता है उसने तो बहुत बड़े गुनाह का इफ़तरा (बोहतान) किया।"

अल्लाह तआला तो वाहिद व यक्ता है। उसकी ज़ात व सिफ़ात में किसी और को शरीक करना बहुत बड़ा झूठ, इफ़तरा और बोहतान है, और अज़ीम-तरीन गुनाह है।

आयत 49

"क्या तुमने देखा नहीं उन लोगों को जो अपने आपको बड़ा पाकीज़ा ठहराते हैं?"	اَلَمۡ تَرَ اِلَى الَّذِيۡنَ يُزَكُّوۡنَ اَنۡفُسَهُمۡ‌ؕ

यहाँ यहूद के उसी फ़लसफ़े की तरफ़ इशारा है कि वह अपने आपको बहुत पाकबाज़ और आला व अरफ़ा समझते हैं। उनका दावा है कि "We are the chosen people of the Lord"। सूरतुल मायदा में उनका यह क़ौल नक़ल हुआ है: { نَحۡنُ اَبۡنٰٓؤُا اللّٰهِ وَاَحِبَّآؤُهٗ‌ } (आयत:18) यानि हम तो अल्लाह के बेटों की तरह हैं बल्कि उसके बहुत ही चहेते और लाड़ले हैं। उनके नज़दीक दूसरे तमाम लोग Gentiles और Goyems हैं, जो देखने में इंसान नज़र आते हैं, हक़ीकत में हैवान हैं। उनको तो जिस तरह चाहो लूट कर खा जाओ, जिस तरह चाहो उनको धोखा दो, उनका इस्तहसाल (शोषण) करो, हम पर कोई गिरफ्त नहीं है। सूरह आले इमरान (आयत:75) में हम उनका क़ौल पढ़ चुके हैं: { لَيۡسَ عَلَيۡنَا فِى الۡاُمِّيّٖنَ سَبِيۡلٌ‌ ۚ } "इन उम्मियों के मामले में हम पर कोई गिरफ़्त नहीं है।" हमसे इनके बारे में कोई मुहासबा और कोई मुआख़जा नहीं होगा। जैसे आपने घोड़े को तांगे में जोत लिया या हिरन का शिकार करके खा लिया तो आपसे इस पर कौन मुआख़जा करेगा?

"बल्कि अल्लाह तआला ही है जो पाक करता है जिसको चाहता है"	بَلِ اللّٰهُ يُزَكِّىۡ مَنۡ يَّشَآءُ
"और उन पर ज़रा भी ज़ुल्म नहीं किया जायेगा।"	وَلَا يُظۡلَمُوۡنَ فَتِيۡلًا‏

उनको अगर पाकीज़गी नहीं मिलती तो इसका सबब उनके अपने करतूत हैं, अल्लाह तआला की तरफ़ से तो उन पर ज़रा भी ज़ुल्म नहीं किया जाता। फ़तील दरअसल उस धागे को कहते हैं जो ख़जूर के अंदर गुठली के साथ लगा हुआ होता है। नुज़ूले क़ुरान के ज़माने में जो छोटी से छोटी चीज़ें लोगों के मुशाहिदे में आती थीं ज़ाहिर है कि वहीं से किसी चीज़ के छोटा होने के लिये मिसाल पेश की जा सकती थी।

आयत 50

"देखो ये लोग अल्लाह पर कैसे झूठ बाँध रहे हैं?"	اُنۡظُرۡ كَيۡفَ يَفۡتَرُوۡنَ عَلَى اللّٰهِ الۡكَذِبَ‌ؕ
"और सरीह गुनाह होने के लिये तो यही काफ़ी है।"	وَكَفٰى بِهٖۤ اِثۡمًا مُّبِيۡنًا‏

यानि इनकी गिरफ़्त के लिये और इनको अज़ाब देने के लिये यही एक बात काफ़ी है जो इन्होंने गढ़ी है।

आयत 51

"क्या तुमने देखा नहीं उन लोगों को जिन्हें किताब में से एक हिस्सा दिया गया था"	اَلَمۡ تَرَ اِلَى الَّذِيۡنَ اُوۡتُوۡا نَصِيۡبًا مِّنَ الۡكِتٰبِ
"वह ईमान लाते हैं बुतों पर और शैतान पर"	يُؤۡمِنُوۡنَ بِالۡجِبۡتِ وَالطَّاغُوۡتِ
"और कहते हैं उन लोगों के मुताल्लिक़ जिन्होंने कुफ़्र किया (यानि मुशरिकीन) कि इन अहले ईमान से ज़्यादा हिदायत पर तो यह हैं।"	وَيَقُوۡلُوۡنَ لِلَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا هٰٓؤُلَۤاءِ اَهۡدٰى مِنَ الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا سَبِيۡلًا‏

यहूद अपनी ज़िद और हठधर्मी में इस हद तक पहुँच गये थे। उन्हें ख़ूब मालूम था कि मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ और उनके साथी रज़ि० ईमान बिल् अल्लाह और ईमान बिल् आख़िरत में उनसे मुशाबेह थे, फिर वह हज़रत मूसा अलै० पर भी ईमान रखते थे और तौरात को अल्लाह की किताब मानते थे। लेकिन अहले ईमान के साथ ज़िद्दम-ज़िद्दा और अदावत में वह इस हद तक आगे बढ़ गये कि मुशरीकीने मक्का से मिल कर उनके बुतों की ताज़ीम की और कहा कि यह मुशरिक मुसलमानों से ज़्यादा हिदायत याफ़्ता हैं और इनका दीन मुसलमानों के दीन से बेहतर है।

आयत 52

أُولَٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ

"यह वह लोग हैं जिन पर अल्लाह ने लानत फ़रमा दी है।"

وَمَنْ يَّلْعَنِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ نَصِيْرًا

"और जिस पर अल्लाह लानत कर दे फिर तुम उसके लिये कोई मददगार नहीं पाओगे।"

आयत 53

اَمْ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّنَ الْمُلْكِ

"क्या इनका कोई हिस्सा है इक़्तदार में?"

इन्होंने यह जो तक़सीम कर ली है कि दुनिया में यह सब कुछ हमारे लिये है, बाक़ी तमाम इंसान Gentiles और Goyems हैं, तो इंसानों में यह तक़सीम और तफ़रीक़ का इख़्तियार इन्हें किसने दिया है? क्या इनका अल्लाह की हुकूमत में कोई हिस्सा है? ज़मीन व आसमान की बादशाही तो अल्लाह की है, मालिकुल मुल्क अल्लाह है। तो क्या इनको उसके पास से कोई इख़्तियार मिला हुआ है?

فَاِذًا لَّا يُؤْتُوْنَ النَّاسَ نَقِيْرًا

"अग़र ऐसा कहीं होता तो यह दूसरे लोगों को तिल के बराबर भी कोई शय देने को तैयार ना होते।"

आयत 54

اَمْ يَحْسُدُوْنَ النَّاسَ عَلٰى مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ

"क्या यह हसद कर रहे हैं लोगों से उस पर कि जो अल्लाह ने उनको अपने फ़ज़ल में से अता कर दिया है?"

दरअसल यह सब उस हसद का नतीजा है जो यह मुसलमानों से रखते हैं कि अल्लाह ने इन उम्मियों में अपना आख़री नबी भेज दिया और इन्हें अपनी आख़री किताब अता फ़रमा दी जिन्हें यह हक़ीर समझते थे। अब यह इस हसद की आग में जल रहे हैं।

فَقَدْ اٰتَيْنَآ اٰلَ اِبْرٰهِيْمَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَاٰتَيْنٰهُمْ مُّلْكًا عَظِيْمًا

"तो हमने आले इब्राहीम अलै० को किताब और हिकमत अता फ़रमाई और उन्हें बहुत बड़ी हुकूमतें भी दीं।"

यानि तुम्हें भी अगर तौरात और इंजील मिली थी तो इब्राहीम अलै० की नस्ल होने के नाते से मिली थी, तो यह जो इस्माईल अलै० की नस्ल है यह भी तो इब्राहीम अलै० ही की नस्ल है। यहाँ बनी इस्राईल को किताब और हिकमत अलैहदा-अलैहदा मिली। तौरात किताब थी और इंजील हिकमत थी, जबकि यहाँ किताब और हिकमत अल्लाह तआला ने एक ही जगह पर क़ुरान में ब-तमाम व कमाल जमा कर दी हैं। मज़ीद बरआँ जैसे उनको मुल्के अज़ीम दिया था, अब हम इन मुसलमानों को उससे बड़ा मुल्क देंगे। यह मज़मून सूरतुन्नूर में आयेगा: { لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِي الْاَرْضِ كَمَا اسْتَخْلَفَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۠

} (आयत:55) “हम लाज़िमन अहले ईमान को दुनिया में हुकूमत और ख़िलाफ़त अता करेंगे जैसे इनसे पहलों को अता की थी।”

आयत 55

فَمِنْهُمْ مَّنْ اٰمَنَ بِهٖ وَمِنْهُمْ مَّنْ صَدَّ عَنْهُ ۭ

“पस इनमें से वह भी हैं जो इस पर ईमान ले आये हैं और वह भी हैं जो इससे रुक गये हैं।”

وَكَفٰى بِجَهَنَّمَ سَعِيْرًا ۝55

“और ऐसे लोगों के लिये तो जहन्नम की भड़कती हुई आग ही काफ़ी है।”

आयत 56

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِنَا سَوْفَ نُصْلِيْهِمْ نَارًا ۭ

“यक़ीनन जो लोग हमारी आयात का कुफ़्र करेंगे एक वक़्त आयेगा कि हम उन्हें आग में झोंक देगें।”

كُلَّمَا نَضِجَتْ جُلُوْدُھُمْ بَدَّلْنٰھُمْ جُلُوْدًا غَيْرَھَا

“और जब भी उनकी खालें जल जाएँगी हम उनको दूसरी खालें में बदल देंगे”

لِيَذُوْقُوا الْعَذَابَ ۭ

“ताकि वह अज़ाब का मज़ा चखते रहें।”

यह भी एक बहुत बड़ी हक़ीक़त है जिसे मेडिकल साइंस ने दरयाफ़्त किया है कि दर्द का अहसास इंसान की खाल (skin) ही में है। इसके नीचे गोश्त व अज़लात (मांसपेशियों) वग़ैरह में दर्द का अहसास नहीं है। किसी को चुटकी काटी जाये, काँटा चुभे, चोट लगे या कोई हिस्सा जल जाये तो तकलीफ़ और दर्द का सारा अहसास जिल्द ही में होता है। चुनाँचे इन जहन्नमियों के बारे में फ़रमाया गया कि जब भी इनकी खाल आतिशे जहन्नम से जल जायेगी तो इसकी जगह नई खाल दे दी जायेगी ताकि उनकी तकलीफ़ और सोज़श (सूजन) मुसलसल रहे, जलन का अहसास बरक़रार रहे, इसमें कमी ना हो।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ۝56

“यक़ीनन अल्लाह ज़बरदस्त है, कमाले हिकमत वाला है।”

आयत 57

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ

“और वह लोग जो ईमान लाये और उन्होंने नेक अमल किये”

यहाँ भी वही फ़ौरी तक़ाबुल (simultaneous contrast) है कि अहले जहन्नम के तज़किरे के फ़ौरन बाद अहले जन्नत का तज़किरा है।

سَنُدْخِلُھُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ

“अनक़रीब उन्हें हम दाख़िल करेंगे उन बाग़ात में जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी”

خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ

“वह रहेंगे उनमें हमेशा-हमेशा।”

لَھُمْ فِيْهَآ اَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ

“उनके लिये उसमें होंगी बड़ी पाक-बाज़ बीवियाँ”

“और हम उन्हें दाख़िल करेंगे घनी छावों में।” وَّنُدْخِلُهُمْ ظِلًّا ظَلِيْلًا ۝٥٧

उन्हें ऐसी गहरी और ठंडी छाँव में रखा जायेगा जो धूप की हदत (warming) और तमाज़त (शदीद गर्मी) से बिल्कुल महफ़ूज़ होगी।

यहाँ वह हिस्सा ख़त्म हुआ जिसमें अहले किताब की तरफ़ रुए सुख़न था। अब फिर मुसलमानों से ख़िताब है।

आयात 58 से 70 तक

اِنَّ اللّٰهَ يَاْمُرُكُمْ اَنْ تُؤَدُّوا الْاَمٰنٰتِ اِلٰٓى اَهْلِهَا ۙ وَاِذَا حَكَمْتُمْ بَيْنَ النَّاسِ اَنْ
تَحْكُمُوْا بِالْعَدْلِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ نِعِمَّا يَعِظُكُمْ بِهٖ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ سَمِيْعًۢا بَصِيْرًا ۝٥٨ يٰٓاَيُّهَا
الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاُولِي الْاَمْرِ مِنْكُمْ ۚ فَاِنْ تَنَازَعْتُمْ
فِيْ شَيْءٍ فَرُدُّوْهُ اِلَى اللّٰهِ وَالرَّسُوْلِ اِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ ذٰلِكَ
خَيْرٌ وَّاَحْسَنُ تَاْوِيْلًا ۝٥٩ اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ يَزْعُمُوْنَ اَنَّهُمْ اٰمَنُوْا بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ
وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّتَحَاكَمُوْٓا اِلَى الطَّاغُوْتِ وَقَدْ اُمِرُوْٓا اَنْ
يَّكْفُرُوْا بِهٖ ۭ وَيُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّضِلَّهُمْ ضَلٰلًۢا بَعِيْدًا ۝٦٠ وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا
اِلٰى مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوْلِ رَاَيْتَ الْمُنٰفِقِيْنَ يَصُدُّوْنَ عَنْكَ صُدُوْدًا ۝٦١
فَكَيْفَ اِذَآ اَصَابَتْهُمْ مُّصِيْبَةٌۢ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْهِمْ ثُمَّ جَاۗءُوْكَ يَحْلِفُوْنَ ڰ بِاللّٰهِ اِنْ
اَرَدْنَآ اِلَّآ اِحْسَانًا وَّتَوْفِيْقًا ۝٦٢ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ يَعْلَمُ اللّٰهُ مَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ۤ فَاَعْرِضْ
عَنْهُمْ وَعِظْهُمْ وَقُلْ لَّهُمْ فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ قَوْلًۢا بَلِيْغًا ۝٦٣ وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ رَّسُوْلٍ
اِلَّا لِيُطَاعَ بِاِذْنِ اللّٰهِ ۭ وَلَوْ اَنَّهُمْ اِذْ ظَّلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ جَاۗءُوْكَ فَاسْتَغْفَرُوا اللّٰهَ
وَاسْتَغْفَرَ لَهُمُ الرَّسُوْلُ لَوَجَدُوا اللّٰهَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا ۝٦٤ فَلَا وَرَبِّكَ لَا يُؤْمِنُوْنَ
حَتّٰي يُحَكِّمُوْكَ فِيْمَا شَجَرَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ لَا يَجِدُوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ حَرَجًا مِّمَّا قَضَيْتَ
وَيُسَلِّمُوْا تَسْلِيْمًا ۝٦٥ وَلَوْ اَنَّا كَتَبْنَا عَلَيْهِمْ اَنِ اقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ اَوِ اخْرُجُوْا مِنْ
دِيَارِكُمْ مَّا فَعَلُوْهُ اِلَّا قَلِيْلٌ مِّنْهُمْ ۭ وَلَوْ اَنَّهُمْ فَعَلُوْا مَا يُوْعَظُوْنَ بِهٖ لَكَانَ خَيْرًا
لَّهُمْ وَاَشَدَّ تَثْبِيْتًا ۝٦٦ۙ وَّاِذًا لَّاٰتَيْنٰهُمْ مِّنْ لَّدُنَّآ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝٦٧ۙ وَّلَهَدَيْنٰهُمْ
صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ۝٦٨ وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ فَاُولٰۗىِٕكَ مَعَ الَّذِيْنَ اَنْعَمَ اللّٰهُ
عَلَيْهِمْ مِّنَ النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَاۗءِ وَالصّٰلِحِيْنَ ۚ وَحَسُنَ اُولٰۗىِٕكَ رَفِيْقًا
۝٦٩ۭ ذٰلِكَ الْفَضْلُ مِنَ اللّٰهِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ عَلِيْمًا ۝٧٠

यह दो आयात (58, 59) क़ुरान मजीद की निहायत अहम आयात हैं, जिनमें इस्लाम का सारा सियासी, क़ानूनी और दस्तूरी निज़ाम मौजूद है। फ़रमाया:

आयत 58

“अल्लाह तुम्हें हुक्म देता है कि अमानतें अहले अमानत के सुपुर्द करो” اِنَّ اللّٰهَ يَاْمُرُكُمْ اَنْ تُؤَدُّوا الْاَمٰنٰتِ اِلٰٓى اَهْلِهَا ۙ

“और जब लोगों के दरमियान फ़ैसला करो तो अदल के साथ फ़ैसला करो।” وَاِذَا حَكَمْتُمْ بَيْنَ النَّاسِ اَنْ تَحْكُمُوْا بِالْعَدْلِ ۭ

पहली बात तो यह है कि आप जो भी सियासी निज़ाम बनाते हैं उसमें मनासिब (पद) होते हैं, जिनकी ज़िम्मेदारियाँ भी होती हैं और इख़्तियारात भी। लिहाज़ा इन मनासिब के इन्तख़ाब में आपकी राय की हैसियत अमानत

की है। आप अपनी राय देख-भाल कर दें कि कौन इसका अहल है। अगर आपने ज़ात बिरादरी, रिश्तेदारी वग़ैरह की बिना पर या मफ़ादात के लालच में या किसी की धौंस की वजह से किसी के हक़ में राय दी तो यह सरीह ख़यानत है। हक़ राय वही एक अमानत है और उस अमानत का इस्तेमाल सही-सही होना चाहिये। आम मायने में भी अमानत की हिफ़ाज़त ज़रूरी है और जो भी अमानत किसी ने रखवाई है उसे वापस लौटाना आपकी शरई ज़िम्मेदारी है। लेकिन यहाँ यह बात इज्तमाई ज़िन्दगी के अहम उसूलों की हैसियत से आ रही है। दूसरी बात यह है कि जब लोगों के दरमियान फ़ैसला करो तो अदल के साथ फ़ैसला करो। गोया पहली हिदायत सियासी निज़ाम से मुताल्लिक़ है कि अमीरुल मोमिनीन या सरबराहे रियासत का इन्तख़ाब अहलियत (क्षमता) की बुनियाद पर होगा, जबकि दूसरी हिदायत अदलिया (Judiciary) के इस्तहकाम के बारे में है कि वहाँ बिला इम्तियाज़ हर एक को अदल व इंसाफ़ मयस्सर आये।

إِنَّ اللَّهَ نِعِمَّا يَعِظُكُم بِهِ

"यक़ीनन यह बहुत ही अच्छी नसीहतें हैं जो अल्लाह तुम्हें कर रहा है।"

إِنَّ اللَّهَ كَانَ سَمِيعًا بَصِيرًا ۝٥٨

"यक़ीनन अल्लाह तआला सब कुछ सुनने वाला देखने वाला है।"

अगली आयत में तीसरी हिदायत मुक़न्नाह (Legislature) के बारे में आ रही है कि इस्लामी रियासत की दस्तूरी बुनियाद क्या होगी। जदीद रियासत के तीन सुतून इन्तज़ामिया (Executive), अदलिया (Judiciary), और मुक़न्नाह (Legislature) गिने जाते हैं। पहली आयत में इन्तज़ामिया और अदलिया के ज़िक्र के बाद अब दूसरी आयत में मुक़न्नाह का ज़िक्र है कि क़ानून साजी के उसूल क्या होंगे। फ़रमाया:

आयत 59

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَطِيعُوا اللَّهَ وَأَطِيعُوا الرَّسُولَ

"ऐ अहल ईमान! इताअत करो अल्लाह की और इताअत करो रसूल की"

यानि कोई क़ानून अल्लाह और उसके रसूल की मन्शा के ख़िलाफ़ नहीं बनाया जा सकता। उसूली तौर पर यह बात पाकिस्तान के दस्तूर में भी तस्लीम की गई है।

"No Legislation will be done repugnant to the Quran and the Sunnah."

लेकिन इसकी तन्फ़ीज़ व तामील की कोई ज़मानत मौजूद नहीं है, लिहाज़ा इस वक़्त हमारा दस्तूर मुनाफ़क़त का पुलंदा है। इस आयत की रू से अल्लाह के अहकाम और अल्लाह के रसूल ﷺ के अहकाम क़ानून साज़ी के दो मुस्तक़िल ज़राय (sources) हैं। इस तरह यहाँ मुन्करीने सुन्नत की नफ़ी होती है जो मुअख़र अल ज़िक्र का इंकार करते हैं। इसके साथ ही फ़रमाया:

وَأُولِي الْأَمْرِ مِنكُمْ

"और अपने में से ऊलुल अम्र की भी (इताअत करो)"

यहाँ बहुत अजीब अस्लूब है कि तीन हस्तियों की इताअत का हुक्म दिया गया है: अल्लाह की, रसूल की और ऊलुल अम्र की, लेकिन पहले दो के लिये "اَطِيْعُوا" का लफ़्ज़ आया है, जबकि तीसरे के लिये नहीं है। एक अस्लूब यह भी हो सकता था कि "اَطِيْعُوا" एक मर्तबा आ जाता और इसका इतलाक़ तीनों पर हो जाता: "يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ وَاُولِي الْاَمْرِ مِنْكُمْ" इस तरह तीनों बराबर हो जाते। दूसरा अस्लूब यह हो सकता था कि "اَطِيْعُوا" तीसरी मर्तबा भी आता: "يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَ اَطِيْعُوا اُولِي الْاَمْرِ مِنْكُمْ"। लेकिन क़ुरान ने जो अस्लूब इख़्तियार किया है कि "اَطِيْعُوا" दो के साथ है, तीसरे के साथ नहीं है, इससे ऊलुल अम्र की इताअत का मरतबा (status) मत्ईन (निर्धारित) हो जाता है। एक तो "مِنْكُمْ" की

शर्त से वाज़ेह हो गया कि ऊलुल अम्र तुम ही में से होने चाहिये, यानि मुसलमान हों। ग़ैर मुस्लिम की हुकूमत को ज़हनन तस्लीम करना अल्लाह से बग़ावत है। वह कम से कम मुसलमान तो हों। फिर यह कि मुत्ज़क्किर बाला अस्लूब से वाज़ेह हो गया कि उनकी इताअत मुत्लक़, दायम और ग़ैर मशरूत नहीं। अल्लाह और रसूल ﷺ की इताअत मुत्लक़, दायम, ग़ैर मशरूत और ग़ैर महदूद है, लेकिन साहिबे अम्र की इताअत अल्लाह और उसके रसूल की इताअत के ताबेअ होगी। वह जो हुक्म भी लाये उसे बताना होगा कि मैं किताब व सुन्नत से कैसे इसका इसतन्बात (अनुमान) कर रहा हूँ। गोया उसे कम से कम यह साबित करना होगा कि यह हुक्म किताब व सुन्नत के ख़िलाफ़ नहीं है। एक मुसलमान रियासत में क़ानून साज़ी इसी बुनियाद पर हो सकती है। दौरे जदीद में क़ानून साज़ इदारा कोई भी हो, कांग्रेस हो, पार्लियामेंट हो या मजलिस मिल्ली हो, वह क़ानून साज़ी करेगी, लेकिन एक शर्त के साथ कि यह क़ानून साज़ी कुरान व सुन्नत से मुतसादिम (विरोध) ना हो।

فَإِنْ تَنَازَعْتُمْ فِي شَيْءٍ

"फिर अग़र तुम्हारे दरमियान किसी मामले में इख़्तलाफ़े राय हो जाये"

ऐसी सूरत पैदा हो जाये कि उलुल अम्र कहे कि मैं तो इसे ऐन इस्लाम के मुताबिक़ समझता हूँ, लेकिन आप कहें कि नहीं, यह बात ख़िलाफ़े इस्लाम है, तो अब कहाँ जायें? फ़रमाया:

فَرُدُّوهُ إِلَى اللَّهِ وَالرَّسُولِ

"तो उसे लौटा दो अल्लाह और रसूल की तरफ़"

यानि अब जो भी अपनी बात साबित करना चाहता है उसे अल्लाह और उसके रसूल से यानि क़ुरान व सुन्नत से दलील लानी पड़ेगी। मेरी पसंद, मेरा ख़्याल, मेरा नज़रिया वाला इस्तदलाल क़ाबिले क़ुबूल नहीं होगा। इस्तदलाल की बुनियाद अल्लाह और उसके रसूल की मर्ज़ी होगी। यह बात माननी पड़ेगी कि अभी यहाँ एक ख़ला है। वह ख़ला यह है कि यह फ़ैसला कौन करेगा कि फ़रीक़ैन में से किसकी राय सही है। और आज के रियासती निज़ाम में आकर वह ख़ला पुर हो चुका है कि यह अदलिया (Judiciary) का काम है। रसूल अल्लाह ﷺ के ज़माने में जब अरब में इस्लामी रियासत क़ायम हुई तो इस तरह अलैहदा-अलैहदा रियासती इदारे अभी पूरी तरह वुजूद में नहीं आये थे और इनकी अलग-अलग शिनाख्त नहीं थी कि यह मुक़न्नाह (Legislature) है, यह अदलिया (Judiciary) है और यह इन्तज़ामिया (Executive) है। हज़रत अबु बकर रज़ि० के ज़माने में तो कोई क़ाज़ी थे ही नहीं। सबसे पहले हज़रत उमर रज़ि० ने शोबा-ए-क़ज़ा शुरू किया। तो रफ़्ता-रफ़्ता यह रियासती इदारे परवान चढ़े। जदीद दौर में इन तनाज़आत के हल का इदारा अदलिया है। वहाँ हर शख़्स जाये और अपनी दलील पेश करे। उल्मा जायें, क़ानूनदान जायें और सब जाकर दलीलें दें। वहाँ से फ़ैसला हो जायेगा कि यह बात वाक़िअतन क़ुरान व सुन्नत से मुतसादिम है या नहीं।

إِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ

"अग़र तुम वाक़िअतन अल्लाह पर और यौमे आख़िर पर ईमान रखते हो।"

ذَٰلِكَ خَيْرٌ وَأَحْسَنُ تَأْوِيلًا

"यही तरीक़ा बेहतर भी है और नताइज के ऐतबार से भी बहुत मुफ़ीद है।"

आगे फिर मुनाफ़िक़ीन का तज़किरा शुरू हो रहा है। याद रहे कि मैंने आग़ाज़ में अर्ज़ किया था कि इस सूरह मुबारका का सबसे बड़ा हिस्सा मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब और उनके तज़किरे पर मुश्तमिल है।

आयत 60

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ يَزْعُمُوْنَ اَنَّهُمْ اٰمَنُوْا بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ

"क्या तुमने ग़ौर नहीं किया उन लोगों की तरफ़ जिनका दावा तो यह है कि वह ईमान ले आये हैं उस पर भी जो (ऐ नबी ﷺ!) आप ﷺ पर नाज़िल किया गया और उस पर भी जो आपसे पहले नाज़िल किया गया"

लेकिन उनका तर्ज़े अमल यह है कि:

يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّتَحَاكَمُوْٓا اِلَى الطَّاغُوْتِ

"वह चाहते हैं कि अपने मुक़दमात के फ़ैसले तागूत से करवाएँ"

यहाँ वाज़ेह तौर पर "तागूत" से मुराद वह हाकिम या वह इदारे हैं जो अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के अहकाम के मुताबिक़ फ़ैसला नहीं करता। पिछली आयत में अल्लाह और उसके रसूल की इताअत का हुक्म दिया गया था। गोया जो अल्लाह और उसके रसूल की इताअत पर कारबंद हो गया वह तागूत से ख़ारिज हो गया और जो अल्लाह और उसके रसूल की इताअत को क़ुबूल नहीं करता वह तागूत है, इसलिये कि वह अपनी हद से तजावुज़ कर गया। चुनाँचे ग़ैर मुस्लिम हाकिम या मुन्सिफ़ जो अल्लाह और उसके रसूल के अहकाम का पाबंद नहीं वह तागूत है।

وَقَدْ اُمِرُوْٓا اَنْ يَّكْفُرُوْا بِهٖ

"हालाँकि उन्हें हुक्म दिया गया है कि तागूत का कुफ़्र करें।"

मुनाफ़िक़ीने मदीना की आम रविश यह थी जिस मुक़दमे में उन्हें अंदेशा होता कि फ़ैसला उनके ख़िलाफ़ होगा उसे नबी अकरम ﷺ की ख़िदमत में लाने के बजाय यहूदी आलिमों के पास ले जाते। वह जानते थे कि हुज़ूर ﷺ के पास जायेंगे तो हक़ और इंसाफ़ की बात होगी। एक यहूदी और एक मुसलमान जो मुनाफ़िक़ था, उनका आपस में झगड़ा हो गया। यहूदी कहने लगा कि चलो मुहम्मद (ﷺ) के पास चलते हैं। इसलिये कि उसे यक़ीन था कि मैं हक़ पर हूँ। लेकिन वह मुनाफ़िक़ कहने लगा कि काअब बिन अशरफ़ के पास चलते हैं जो एक यहूदी आलिम था। बहरहाल वह यहूदी उस मुनाफ़िक़ को रसूल ﷺ के पास ले आया। आप ﷺ ने दोनों की दलीलें सुनने के बाद फ़ैसला यहूदी के हक़ में कर दिया। वहाँ से बाहर निकले तो मुनाफ़िक़ ने कहा कि चलो अब हज़रत उमर रज़ि० के पास चलते हैं, वह जो फ़ैसला कर दें वह मुझे मंज़ूर होगा। वह दोनों हज़रत उमर रज़ि० के पास आये। मुनाफ़िक़ को यह उम्मीद थी कि हज़रत उमर रज़ि० मेरा ज़्यादा लिहाज़ करेंगे, क्योंकि मैं मुसलमान हूँ। जब यहूदी ने यह बताया कि इस मुक़दमें का फ़ैसला रसूल अल्लाह ﷺ मेरे हक़ में कर चुके हैं तो हज़रत उमर रज़ि० ने आव देखा ना ताव, तलवार ली और उस मुनाफ़िक़ की गर्दन उड़ा दी कि जो मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के फ़ैसले पर राज़ी नहीं है और उसके बाद मुझसे फ़ैसला करवाना चाहता है उसके हक़ में मेरा यह फ़ैसला है! इस पर उस मुनाफ़िक़ के खानदान वालों ने बड़ा बवाल मचाया वह चीखते-चिल्लाते हुए रसूल अल्लाह ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए और हज़रत उमर रज़ि० पर क़त्ल का दावा किया। उनका कहना था कि मक़तूल हज़रत उमर रज़ि० के पास यहूदी को लेकर इस वजह से गया था कि वह इस मामले में बाहम मसालिहत करा दें, उसके पेशे नज़र रसूल अल्लाह ﷺ के फ़ैसले से इंकार नहीं था। इस पर यह आयात नाज़िल हुईं जिनमें असल हक़ीक़त ज़ाहिर फ़रमा दी गई।

وَيُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّضِلَّهُمْ ضَلٰلًاۢ بَعِيْدًا ۝٦٠

"और शैतान चाहता है कि उन्हें बहुत दूर की गुमराही में डाल दे।"

आयत 61

“और जब उनसे कहा जाता है कि आओ उस चीज़ की तरफ़ जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाई है और आओ रसूल की तरफ़”	وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا اِلٰى مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوْلِ

अपने मुक़दमात के फ़ैसले अल्लाह के रसूल ﷺ से कराओ।

“तो (ऐ नबी ﷺ!) आप देखते हैं कि यह मुनाफ़िक़ आपके पास आने से कन्नी कतराते हैं।”	رَاَيْتَ الْمُنٰفِقِيْنَ يَصُدُّوْنَ عَنْكَ صُدُوْدًا ۝

يَصُدُّ صَدَّ के बारे में मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि यह रुकने के मायने में भी आता है और रोकने के भी मायने में भी।

आयत 62

“फिर उस वक़्त क्या हुआ जब उन पर कोई मुसीबत आ गयी उनके अपने हाथों के करतूतों की वजह से”	فَكَيْفَ اِذَآ اَصَابَتْهُمْ مُّصِيْبَةٌۢ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْهِمْ

वह चीखते-चिल्लाते आये कि उमर ने हमारा आदमी मार डाला, हमें उसका क़िसास दिलाया जाये।

“फिर वह आपके पास आये अल्लाह की क़समें खाते हुए”	ثُمَّ جَاۗءُوْكَ يَحْلِفُوْنَ ڰ بِاللّٰهِ
“कि हम तो सिर्फ़ भलाई और मुवाफ़क़त (अनुकूलन) चाहते थे।”	اِنْ اَرَدْنَآ اِلَّآ اِحْسَانًا وَّتَوْفِيْقًا ۝

हम तो उमर रज़ि० के पास महज़ इसलिये गये थे कि कोई मसालिहत और राज़ीनामा हो जाये।

आयत 63

“यह वह लोग हैं कि जो कुछ इनके दिलों में है अल्लाह उसे जानता है।”	اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ يَعْلَمُ اللّٰهُ مَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ۤ
“तो (ऐ नबी ﷺ!) आप इनसे चश्मपोशी कीजिये”	فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ
“और इनको ज़रा नसीहत कीजिये”	وَعِظْهُمْ
“और इनसे ख़ुद इनके बारे में ऐसी बात कहिये जो उनके दिलों में उतर जाये।”	وَقُلْ لَّهُمْ فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ قَوْلًۢا بَلِيْغًا ۝

यह आयात नाज़िल होने के बाद रसूल अल्लाह ﷺ ने हज़रत उमर रज़ि० को बरी क़रार दिया कि अल्लाह की तरफ़ से उनकी बराअत आ गई है, और उसी दिन से उनका लक़ब “फ़ारूक़” क़रार पाया, यानि हक़ और बातिल में फ़र्क़ कर देने वाला।

अब एक बात नोट कर लीजिये कि इस सूरह मुबारका में मुनाफ़क़त जो ज़ेरे बहस आई है वह तीन उन्वानात के तहत है। मुनाफ़िक़ों पर तीन चीजें बहुत भारी थीं, जिनमें से अव्वलीन रसूल अल्लाह ﷺ की इताअत थी। और यह बड़ी नफ़्सियाती बात है। एक इंसान के लिये दूसरे इंसान की इताअत बड़ा मुश्किल काम है। हम जो रसूल अल्लाह ﷺ की इताअत करते हैं तो रसूल अल्लाह ﷺ हमारे लिये एक इदारे (institution) की हैसियत रखते हैं, रसूल ﷺ शख़्सन हमारे सामने मौजूद नहीं है। जबकि उनके सामने रसूल अल्लाह ﷺ शख़्सन मौजूद थे। वह देखते थे कि उनके भी दो हाथ हैं, दो पाँव हैं, दो आँखें हैं, लिहाज़ा बज़ाहिर अपने जैसे एक

इंसान की इताअत उन पर बहुत शाक़ थी। जैसा कि जमातों में होता है कि अमीर की इताअत बहुत शाक़ गुज़रती है, यह बड़ा मुश्किल काम है। अमीर की राय पर चलने के लिये अपनी राय को पीछे डालना पड़ता है। जो सादिक़ुल ईमान मुसलमान थे उन्हें तो यह यक़ीन था कि यह मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह जिन्हें हम देख रहे हैं, हक़ीक़त में मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ हैं और हम उनकी इसी हैसियत में उन पर ईमान लाये हैं। लेकिन जिनके दिलों में यह यक़ीन नहीं था या कमज़ोर था उनके लिये हुज़ूर ﷺ की शख़्सी इताअत बड़ी भारी और बड़ी कठिन थी। यही वजह है कि बाज़ मौक़े पर वह कहते थे कि यह जो कुछ कह रहे हैं अपने पास से कह रहे हैं। क्यों नहीं कोई सूरत नाज़िल हो जाती? क्यों नहीं कोई आयत नाज़िल हो जाती? और सूरह मुहम्मद ﷺ इसी अंदाज़ में नाज़िल हो हुई है। वह यह कहते थे कि मुहम्मद ﷺ ने ख़ुद अपनी तरफ़ से इक़दाम कर दिया है। इस पर अल्लाह ने कहा कि लो फिर हम क़िताल की आयत नाज़िल कर देते हैं। दूसरी चीज़ जो उन पर कठिन थी वह है क़िताल, यानि अल्लाह की राह में जंग के लिये निकलना। उनका हाल यह था कि *"मरहले सख़्त हैं और जान अज़ीज़!"* तीसरी कठिन चीज़ हिजरत थी। इसका इतलाक़ मुनाफ़िक़ीने मदीना पर नहीं होता था बल्कि मक्का और इर्द-गिर्द के जो मुनाफ़िक़ थे उन पर होता था। उनका ज़िक्र भी आगे आयेगा। ज़ाहिर है घर-बार और ख़ानदान वालों को छोड़ कर निकल जाना कोई आसान काम नहीं है। अब सबसे पहले इताअते रसूल ﷺ की अहमियत बयान की जा रही है:

आयत 64

وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا لِيُطَاعَ بِاِذْنِ اللّٰهِ

"हमने नहीं भेजा किसी रसूल को मगर इसलिये कि उसकी इताअत की जाये अल्लाह के हुक्म से।"

وَلَوْ اَنَّهُمْ اِذْ ظَّلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ جَاۗءُوْكَ

"और अगर वह, जबकि उन्होंने अपनी जानों पर ज़ुल्म किया था, आपकी ख़िदमत में हाज़िर हो जाते"

فَاسْتَغْفَرُوا اللّٰهَ وَاسْتَغْفَرَ لَهُمُ الرَّسُوْلُ

"और अल्लाह से इस्तग़फ़ार करते और रसूल भी उनके लिये इस्तग़फ़ार करते"

لَوَجَدُوا اللّٰهَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا ۝۶۴

"तो वह यक़ीनन अल्लाह को बड़ा तौबा क़ुबूल फ़रमाने वाला और रहम करने वाला पाते।"

आयत 65

فَلَا وَرَبِّكَ لَا يُؤْمِنُوْنَ حَتّٰى يُحَكِّمُوْكَ فِيْمَا شَجَرَ بَيْنَهُمْ

"पस नहीं, आपके रब की क़सम! यह हरग़िज़ मोमिन नहीं हो सकते जब तक कि यह आपको हकम (chief) ना मानें उन तमाम मामलात में जो उनके माबैन पैदा हो जायें"

इसमें उन्हें कोई इख़्तियार (choice) हासिल नहीं है। उनके माबैन जो भी नज़ाआत (विवाद) और इख़्तलाफ़ात हों उनमें अगर यह आपको हकम नहीं मानते तो आपके रब की क़सम यह मोमिन नहीं हैं। कलामे इलाही का दो टूक और पुरजलाल अंदाज़ मुलाहिज़ा कीजिये।

ثُمَّ لَا يَجِدُوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ حَرَجًا مِّمَّا قَضَيْتَ

"फिर जो कुछ आप फ़ैसला कर दें उस पर अपने दिलों में भी कोई तंगी महसूस ना करें"

अगर आप ﷺ का फ़ैसला क़ुबूल भी कर लिया, लेकिन दिल की तंगी और कदूरत के साथ किया तब भी यह मोमिन नहीं हैं।

وَيُسَلِّمُوْا تَسْلِيْمًا ۝65

"और सरे तस्लीम ख़म करें, जैसे कि सरे तस्लीम ख़म करने का हक़ है।"

वाज़ेह रहे कि यह हुक्म सिर्फ़ रसूल अल्लाह ﷺ की ज़िन्दगी तक महदूद नहीं था, बल्कि यह क़यामत तक के लिये है।

आयत 66

وَلَوْ اَنَّا كَتَبْنَا عَلَيْهِمْ اَنِ اقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ

"और अगर हमने उन पर यह फ़र्ज़ कर दिया होता कि क़त्ल करो अपने आपको"

اَوِ اخْرُجُوْا مِنْ دِيَارِكُمْ

"या निकलो अपने घरों से"

مَّا فَعَلُوْهُ اِلَّا قَلِيْلٌ مِّنْهُمْ ۭ

"तो यह इसकी तामील ना करते सिवाय इनमें से चंद एक के।"

وَلَوْ اَنَّهُمْ فَعَلُوْا مَا يُوْعَظُوْنَ بِهٖ

"और अगर यह लोग वह करते जिसकी इनको नसीहत की जा रही है"

इसका तर्जुमा इस तरह भी किया गया है: "और अगर यह लोग वह करते जिसकी इन्हें हिदायत की जाती" यानि अपने आपको क़त्ल करना और अपने घरों से निकल खड़े होना।

لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَشَدَّ تَثْبِيْتًا ۝66

"तो यही इनके लिये बेहतर होता और इन्हें दीन पर साबित क़दम रखने वाला होता।"

आयत 67

وَّاِذًا لَّاٰتَيْنٰهُمْ مِّنْ لَّدُنَّآ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝67

"और इस सूरत में हम इन्हें अपने पास से बहुत बड़ा अजर देते।"

आयत 68

وَّلَهَدَيْنٰهُمْ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ۝68

"और इन्हें हिदायत फ़रमा देते सीधी राह की तरफ़।"

अक्सर मुफ़स्सरीन ने इस आयत के अल्फ़ाज़ को इनके ज़ाहिरी मायने पर महमूल किया (समझा) है। यानि अगर अल्लाह तआला हुक्म दे कि अपने आपको क़त्ल करो, ख़ुदकुशी करो, तो हमें यह करना होगा। अगर अल्लाह तआला हुक्म दे कि अपने घरों से निकल जाओ तो निकलना होगा। अल्लाह तआला हमारा ख़ालिक़ व मालिक है। उसकी तरफ़ से दिया गया हर हुक्म वाजिबुल तामील है। अलबत्ता {اَنِ اقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ} के अल्फ़ाज़ में एक मज़ीद इशारा भी मालूम होता है। सूरतुल बक़रह (आयत:54) में हम तारीख़ बनी इस्राईल के हवाले से पढ़ आये हैं कि बनी इस्राईल में से जिन लोगों ने बछड़े की परस्तिश की थी उनको मुर्तद होने की जो सज़ा दी गई थी उसके लिये यही अल्फ़ाज़ आये थे: {فَاقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ} "पस क़त्ल करो अपने आपको।" इससे मुराद यह है कि तुम अपने-अपने क़बीले के उन लोगों को क़त्ल करो

जिन्होंने कुफ़्र व शिर्क का इरतकाब किया है। मुनाफ़िक़ीन का मामला यह था कि उनकी हिमायत में अक्सरो बेशतर उनके ख़ानदान वाले, रिश्तेदार, उनके घराने वाले उनके साथ शामिल हो जाते थे। तो यहाँ शायद यह बताया जा रहा है कि बजाय इसके कि तुम उनकी हिमायत करो, तुम्हारा तर्ज़े अमल इसके बिल्कुल बरअक्स होना चाहिये, कि तुम अपने अंदर से ख़ुद देखो कि कौन मुनाफ़िक़ हैं जो असल में आस्तीन के साँप हैं। अगरचे अल्लाह तआला ने तुम्हें यह हुक्म नहीं दिया, मगर वह यह हुक्म भी दे सकता था कि हर घराना अपने यहाँ के मुनाफ़िक़ीन को ख़ुद क़त्ल करे। यह तो हज़रत उमर रज़ि० ने अपनी ग़ैरते ईमानी की वजह से उस मुनाफ़िक़ को क़त्ल किया था, जबकि उस मुनाफ़िक़ के ख़ानदान के लोग हज़रत उमर रज़ि० पर क़त्ल का दावा कर रहे थे। अगर अल्लाह तआला यह हुक्म देता तो यह भी तुम्हें करना चाहिये था, लेकिन यह अल्लाह के इल्म में है कि तुममें से बहुत कम लोग होते जो इस हुक्म की तामील करते। और अगर वह यह कर गुज़रते तो यह उनके हक़ में बेहतर होता है और उनके सबाते क़ल्बी (स्थिर दिल) और सबाते ईमानी (स्थिर ईमान) का बाइस होता। इस सूरत में अल्लाह तआला उन्हें ख़ास अपने पास से अजरे अज़ीम अता फ़रमाता और उन्हें सिराते मुस्तक़ीम की हिदायत अता फ़रमाता।

अब जो आयत आ रही है यह इताअते रसूल ﷺ के मौज़ू पर क़ुरान हकीम की अज़ीम तरीन आयत है। फ़रमाया:

आयत 69

وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ فَاُولٰٓئِكَ مَعَ الَّذِيْنَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ

"और जो कोई इताअत करेगा अल्लाह की और रसूल ﷺ की तो यह वह लोग होंगे जिन्हें मईयत (साथ) हासिल होगी उनकी जिन पर अल्लाह का ईनाम हुआ"

مِّنَ النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَاۗءِ وَالصّٰلِحِيْنَ ۚ

"यानि अम्बिया किराम, सिद्दीक़ीन, शोहदा और सालेहीन।"

وَحَسُنَ اُولٰۗئِكَ رَفِيْقًا ۝٦٩ۭ

"और क्या ही अच्छे हैं यह लोग रफ़ाक़त के लिये।"

यानि अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की इताअत करने वालों का शुमार उन लोगों के ज़ुमरे में होगा जिन पर अल्लाह ने ईनाम फ़रमाया है। सूरह फ़ातिहा में हमने यह अल्फ़ाज़ पढ़े थे: {اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ﴿﴾ صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ} आयत ज़ेरे मुताअला "اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ" की तफ़सीर है। इन मरातिब को ज़रा समझ लीजिये। सालेह मुसलमान गोया baseline पर है। वह एक नेक नीयत मुसलमान है जिसके दिल में ख़ुलूस के साथ ईमान है। वह अल्लाह और रसूल ﷺ के अहकाम पर अमल कर रहा है, मुहर्रमात से बचा हुआ है। वह इससे ऊपर उठेगा तो एक ऊँचा दर्जा शोहदा का है, इससे बुलंदतर दर्जा सिद्दीक़ीन का है और बुलंद तरीन दर्जा अम्बिया का है। इस बुलंद तरीन दर्जे पर तो कोई नहीं पहुँच सकता, इसलिये की वह कोई कस्बी चीज़ नहीं है, वह तो एक वहबी चीज़ थी, जिसका दरवाज़ा भी बंद हो चुका है। अलबत्ता मर्तबा सालेहात से बुलंदतर दर्जे अभी मौजूद हैं कि इंसान अपनी हिम्मत, मेहनत और कोशिश से शहादत और सिद्दीक़ियत के मरातिब पर फ़ाइज़ हो सकता है। यह मज़मून इन्शा अल्लाह सूरतुल हदीद में पूरी वज़ाहत के साथ बयान होगा।

आयत 70

ذٰلِكَ الْفَضْلُ مِنَ اللّٰهِ ۭ

"यह फ़ज़्ल है अल्लाह की तरफ़ से"

यह अल्लाह तआला का बड़ा फ़ज़ल है उन पर कि जिन्हें आख़िरत में अम्बिया किराम, सिद्दीक़ीन अज़ाम, शोहदा और सालेहीन की मईयत हासिल हो जाये। इसके लिये दुआ करनी चाहिये: وَ تَوَفَّنَا مَعَ الْاَبْرَار ऐ अल्लाह हमें मौत दीजियो अपने वफ़ादार नेकोकार बंदों के साथ!

وَكَفٰى بِاللّٰهِ عَلِيْمًا ۝

"और अल्लाह काफ़ी है हर शय के जानने के लिये।"

यानि कौन किस इस्तअदाद (क्षमता) का हामिल है और किस क़दर व मन्ज़िलत का मुस्तहिक़ है, अल्लाह ख़ूब जानता है। हक़ीक़त जानने के लिये बस अल्लाह ही का इल्म काफ़ी है।

आयात 71 से 76 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا خُذُوْا حِذْرَكُمْ فَانْفِرُوْا ثُبَاتٍ اَوِ انْفِرُوْا جَمِيْعًا ۝ وَاِنَّ
مِنْكُمْ لَمَنْ لَّيُبَطِّئَنَّ ۚ فَاِنْ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ قَالَ قَدْ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيَّ اِذْ لَمْ اَكُنْ
مَّعَهُمْ شَهِيْدًا ۝ وَلَئِنْ اَصَابَكُمْ فَضْلٌ مِّنَ اللّٰهِ لَيَقُوْلَنَّ كَاَنْ لَّمْ تَكُنْۢ بَيْنَكُمْ
وَبَيْنَهٗ مَوَدَّةٌ يّٰلَيْتَنِيْ كُنْتُ مَعَهُمْ فَاَفُوْزَ فَوْزًا عَظِيْمًا ۝ فَلْيُقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ
اللّٰهِ الَّذِيْنَ يَشْرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا بِالْاٰخِرَةِ ۗ وَمَنْ يُّقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَيُقْتَلْ
اَوْ يَغْلِبْ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝ وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ
وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَاۤءِ وَالْوِلْدَانِ الَّذِيْنَ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَاۤ اَخْرِجْنَا
مِنْ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ اَهْلُهَا ۚ وَاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ وَلِيًّا ۚ وَّاجْعَلْ لَّنَا مِنْ
لَّدُنْكَ نَصِيْرًا ۝ اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُقَاتِلُوْنَ
فِيْ سَبِيْلِ الطَّاغُوْتِ فَقَاتِلُوْۤا اَوْلِيَاۤءَ الشَّيْطٰنِ ۚ اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطٰنِ كَانَ ضَعِيْفًا
۝

अब ज़िक्र आ रहा है क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह का। यह दूसरी चीज़ थी जो मुनाफ़िक़ीन पर बहुत भारी थी। माद्दी ऐतबार से यह बड़ा सख़्त इम्तिहान था। इताअते रसूल ﷺ ज़्यादातर एक नफ़्सियाती मरहला था, एक नफ़्सियाती उलझन थी, लेकिन अपना माल ख़र्च करना और अपनी जान को ख़तरे में डालना एक ख़ालिस महसूस माद्दी शय थी।

आयत 71

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا خُذُوْا حِذْرَكُمْ

"ऐ अहले ईमान, अपने तहफ्फ़ुज़ का सामान (और अपने हथियार) संभालो"

فَانْفِرُوْا ثُبَاتٍ اَوِ انْفِرُوْا جَمِيْعًا ۝

"और (जिहाद) के लिये) निकलो, ख़्वाह टुकड़ियों की सूरत में ख़्वाह फ़ौज की शक्ल में।"

यानि जैसा मौका हो उसके मुताबिक़ अलग-अलग दस्तों की शक्ल में या इकट्ठे फ़ौज की सूरत में निकलो। रसूल अल्लाह ﷺ मौक़े की मुनास्बत से कभी छोटे-छोटे ग्रुप भेजते थे। जैसे ग़जवा-ए-बद्र से क़ब्ल आप ﷺ ने आठ मुहिमें रवाना फ़रमाईं, जबकि ग़ज़वा-ए-बद्र और ग़ज़वा-ए-ओहद में आप ﷺ पूरी फ़ौज लेकर निकले।

وَاِنَّ مِنْكُمْ لَمَنْ لَّيُبَطِّئَنَّ ۚ

"और तुममें से कुछ लोग ऐसे हैं जो देर लगा देते हैं"

हुक्म हो गया है कि जिहाद के लिये निकलना है, फ़लाँ वक्त कूच होगा, लेकिन वह तैयारी में ढ़ील बरत रहे हैं और फिर बहाना बना देगें कि बस हम तो तैयारी कर ही रहे थे अब निकलने ही वाले थे। और वह मुन्तज़िर

रहते हैं कि जंग का फ़ैसला हो जाये तो उस वक़्त हम कहेंगे कि हम बस निकलने ही वाले थे कि यह फ़ैसला हमको पहुँच गया।

فَاِنْ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ

"फ़िर अगर तुम्हें कोई मुसीबत पेश आ जाये"

अग़र जंग के लिये निकलने वाले मुसलमानों को कोई तकलीफ़ पेश आ जाये, कोई गज़न्द पहुँच जाये, वक़्ती तौर पर कोई हज़ीमत (हार) हो जाये।

قَالَ قَدْ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيَّ اِذْ لَمْ اَكُنْ مَّعَهُمْ شَهِيْدًا۝

"तो वह कहेगा कि मुझ पर तो अल्लाह ने बड़ा ईनाम किया कि मैं उनके साथ शरीक नहीं हुआ।"

आयत 73

وَلَىِٕنْ اَصَابَكُمْ فَضْلٌ مِّنَ اللّٰهِ

"और अग़र तुम्हें कोई फ़ज़ल पहुँच जाये अल्लाह की तरफ़ से"

यानि तुम्हें फ़तह हो जाये और तुम कामरानी के साथ माले ग़नीमत लेकर वापस आओ।

لَيَقُوْلَنَّ كَاَنْ لَّمْ تَكُنْۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهٗ مَوَدَّةٌ

"तो उस वक़्त वह फिर (हसरत के साथ) कहेगा, जैसे तुम्हारे और उसके दरमियान मोहब्बत का कोई ताल्लुक़ था ही नहीं"

يّٰلَيْتَنِيْ كُنْتُ مَعَهُمْ فَاَفُوْزَ فَوْزًا عَظِيْمًا۝

ऐ काश कि मैं भी इनके साथ गया होता तो यह बड़ी कामयाबी मुझे भी हासिल हो जाती।"

यह मुनाफ़िक़ीन का किरदार था जिसका यहाँ नक़्शा खींच दिया गया है।

आयत 74

فَلْيُقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ يَشْرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا بِالْاٰخِرَةِ

"पस अल्लाह की राह में क़िताल करना चाहिये उन लोगों को जो दुनिया की ज़िन्दगी को आख़िरत के एवज़ फ़रोख़्त करने के लिये तैयार हैं।"

जो लोग यह तय कर चुके हों कि हमने दुनिया की ज़िन्दगी के बदले में आख़िरत क़ुबूल की, उनके लिये तो क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिये। अगर उन्होंने वाक़ई यह सौदा अल्लाह से किया है तो फिर उन्हें अल्लाह की राह में जंग के लिये निकलना चाहिये।

وَمَنْ يُّقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَيُقْتَلْ اَوْ يَغْلِبْ

"और जो कोई भी अल्लाह की राह में क़िताल करेगा, तो ख़्वाह वह मारा जाये या ग़ालिब हो"

अल्लाह की राह में क़िताल करने वाले के लिये दो ही इम्कानात हैं, एक यह कि वह क़त्ल होकर मर्तबा-ए-शहादत पर फ़ाइज़ हो जाये और दूसरे यह कि वह दुश्मन पर ग़ालिब रहे और फ़तहमंद होकर वापस आये।

فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا۝

"हम उसे (दोनों हालतों में) बहुत बड़ा अजर अता फ़रमायेंगे।"

अगली आयत में ख़ासतौर पर उन मुसलमानों की नुसरत व हिमायत के लिये क़िताल के लिये तरग़ीब दिलाई जा रही है जो मुख्तलिफ़ इलाक़ों में फँसे हुए थे। उनमें कमज़ोर भी थे, बीमार और बूढ़े भी थे, ख्वातीन और बच्चे भी थे। यह लोग ईमान तो ले आये थे लेकिन हिजरत के क़ाबिल नहीं थे। यह अपने-अपने इलाक़ों में और अपने-अपने क़बीलों में थे और वहाँ उन

पर ज़ुल्म हो रहा था, उन्हें सताया जा रहा था, उन्हें तशद्दुद व ताज़ीब का निशाना बनाया जा रहा था। तो ख़ासतौर से उनकी मदद के लिये निकलना उनकी जान छुड़ाना और उनको बचा कर ले आना, ग़ैरते ईमानी का बहुत ही शदीद तक़ाज़ा है, बल्कि यह ग़ैरते इंसानी का भी तक़ाज़ा है। चुनाँचे फ़रमाया:

आयत 75

وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

"और तुम्हें क्या हो गया है कि तुम क़िताल नहीं करते अल्लाह की राह में"

وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَاۗءِ وَالْوِلْدَانِ

"और उन बेबस मर्दों, औरतों और बच्चों की ख़ातिर जो मग़लूब बना दिये गये हैं"

الَّذِيْنَ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اَخْرِجْنَا مِنْ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ اَهْلُهَا ۚ

"जो दुआ कर रहे हैं कि ऐ हमारे परवरदिग़ार, हमें निकाल इस बस्ती से जिसके रहने वाले लोग ज़ालिम हैं"

وَاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ وَلِيًّا ۙ وَّاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ نَصِيْرًا ۝۷۵

"और हमारे लिये अपने पास से कोई हिमायती बना दे और हमारे लिये ख़ास अपने फ़ज़्ल से कोई मददगार भेज दे।"

उनकी यह आह व बका तुम्हें आमादा पैकार क्यों नहीं कर रही? उन पर ज़ुल्म हो रहा है, उन पर सितम ढाये जा रहे हैं और तुम्हारा हाल यह है कि तुम अपने घरों से निकलने को तैयार नहीं हो? बाज़ लोग इस आयत का इन्तबाक़ उन मुख्तलिफ़ क़िस्म के सियासी जिहादों पर भी कर देते हैं जो कि आज-कल हमारे यहाँ जारी हैं और उन पर "जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह" का लेबल लगाया जा रहा है। लेकिन यह बात बिल्कुल ही क़यास मअल फ़ारुक़ है। वाज़ेह रहे कि यह ख़िताब उन अहले ईमान से हो रहा है जिनके यहाँ इस्लाम क़ायम हो चुका था। हम अपने मुल्क में इस्लाम क़ायम कर नहीं सकते। यहाँ पर दीन के ग़ल्बे व इक़ामत की कोई जद्दो-जहद नहीं कर रहे। हमारे यहाँ कुफ़्र का निज़ाम चल रहा है। इसके मुख़ातिब अहले ईमान हैं, और अहले ईमान का फ़र्ज़ यह है कि पहले अपने घर को दुरुस्त करो, पहले अपने मुल्क के अंदर इस्लाम क़ायम करो लिहाज़ा जिहाद करना है तो यहाँ करो, जानें देनी है तो यहाँ दो। यहाँ पर ताग़ूत की हुकूमत है, ग़ैरुल्लाह की हुकूमत है, क़ुरान के सिवा कोई और क़ानून चल रहा है, जबकि अल्लाह तआला का (सूरतुल मायदा, आयत 44, 45 व 47 में) यह फ़रमान है:

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ ۝۴۴ ... فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝۴۵ ... فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝۴۷

"और जो लोग अल्लाह के नाज़िल करदा क़ानून के मुताबिक़ फ़ैसले नहीं करते वही तो काफिर हैं, ...वही तो ज़ालिम हैं, ...वही तो फासिक़ हैं।"

चुनाँचे काफ़िर, ज़ालिम और फ़ासिक़ तो हम ख़ुद हैं। हमें पहले अपने घर की हालत दुरुस्त करनी होगी। इसके बाद एक जामियत क़ायम होगी। हमारी हुकूमत तो उन लोगों से दोस्तियाँ करती फिरती है जिनके ख़िलाफ़ यहाँ जिहाद का नारा बुलंद हो रहा है, जिसमें जाने दी जा रहीं हैं। तो यह आयत अपनी जगह है। हर चीज़ को उसके सयाक़ व सबाक़ (सन्दर्भ) के अंदर रखनी चाहिये।

आयत 76

“जो लोग ईमान वाले हैं वह क़िताल करते हैं अल्लाह की राह में” — اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

“और जो लोग काफ़िर हैं वह ताग़ूत की राह में क़िताल कर रहे हैं” — وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ الطَّاغُوْتِ

जंग तो वह भी कर रहे हैं, जानें वह भी दे रहे हैं। अबु जहल भी तो लश्कर लेकर आया था। उनकी सारी जद्दो-जहद ताग़ूत की राह में है।

“तो तुम जंग करो शैतान के साथियों से” — فَقَاتِلُوْٓا اَوْلِيَآءَ الشَّيْطٰنِ

तुम शैतान के हिमायतियों से, हिज़्बुल शैतान से क़िताल करो।

“यक़ीनन शैतान की चाल बड़ी कमज़ोर है।” — اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطٰنِ كَانَ ضَعِيْفًا ۷۶

शैतान की चाल बज़ाहिर बड़ी ज़ोरदार बड़ी बारौब दिखाई देती है, लेकिन जब मर्दे मोमिन उसके मुक़ाबिल खड़े हो जायें तो फिर मालूम हो जाता है कि बड़ी बोदी और फुसफुसी चाल है।

आयात 77 से 87 तक

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ قِيْلَ لَهُمْ كُفُّوْٓا اَيْدِيَكُمْ وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ ۚ فَلَمَّا
كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ اِذَا فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ يَخْشَوْنَ النَّاسَ كَخَشْيَةِ اللّٰهِ اَوْ اَشَدَّ
خَشْيَةً ۚ وَقَالُوْا رَبَّنَا لِمَ كَتَبْتَ عَلَيْنَا الْقِتَالَ ۚ لَوْلَآ اَخَّرْتَنَآ اِلٰٓى اَجَلٍ قَرِيْبٍ ۭ قُلْ
مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلِيْلٌ ۚ وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِّمَنِ اتَّقٰى ۣ وَلَا تُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا ۷۷ اَيْنَ مَا
تَكُوْنُوْا يُدْرِكْكُّمُ الْمَوْتُ وَلَوْ كُنْتُمْ فِيْ بُرُوْجٍ مُّشَيَّدَةٍ ۭ وَاِنْ تُصِبْهُمْ حَسَنَةٌ
يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۚ وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِكَ ۭ قُلْ كُلٌّ
مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۭ فَمَالِ هٰٓؤُلَاۗءِ الْقَوْمِ لَا يَكَادُوْنَ يَفْقَهُوْنَ حَدِيْثًا ۷۸ مَآ اَصَابَكَ
مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ ۡ وَمَآ اَصَابَكَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ نَّفْسِكَ ۭ وَاَرْسَلْنٰكَ لِلنَّاسِ
رَسُوْلًا ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا ۷۹ مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ ۚ وَمَنْ تَوَلّٰى فَمَآ
اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ۸۰ وَيَقُوْلُوْنَ طَاعَةٌ ۡ فَاِذَا بَرَزُوْا مِنْ عِنْدِكَ بَيَّتَ
طَاۗىِٕفَةٌ مِّنْهُمْ غَيْرَ الَّذِيْ تَقُوْلُ ۭ وَاللّٰهُ يَكْتُبُ مَا يُبَيِّتُوْنَ ۚ فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ
وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ۸۱ اَفَلَا يَتَدَبَّرُوْنَ الْقُرْاٰنَ ۭ وَلَوْ كَانَ مِنْ عِنْدِ
غَيْرِ اللّٰهِ لَوَجَدُوْا فِيْهِ اخْتِلَافًا كَثِيْرًا ۸۲ وَاِذَا جَاۗءَهُمْ اَمْرٌ مِّنَ الْاَمْنِ اَوِ
الْخَوْفِ اَذَاعُوْا بِهٖ ۭ وَلَوْ رَدُّوْهُ اِلَى الرَّسُوْلِ وَاِلٰٓى اُولِي الْاَمْرِ مِنْهُمْ لَعَلِمَهُ الَّذِيْنَ
يَسْتَنْۢبِطُوْنَهٗ مِنْهُمْ ۭ وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ لَاتَّبَعْتُمُ الشَّيْطٰنَ اِلَّا
قَلِيْلًا ۸۳ فَقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ لَا تُكَلَّفُ اِلَّا نَفْسَكَ وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚ عَسَى
اللّٰهُ اَنْ يَّكُفَّ بَاْسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ وَاللّٰهُ اَشَدُّ بَاْسًا وَّاَشَدُّ تَنْكِيْلًا ۸۴ مَنْ يَّشْفَعْ
شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنْ لَّهٗ نَصِيْبٌ مِّنْهَا ۚ وَمَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَّكُنْ لَّهٗ كِفْلٌ
مِّنْهَا ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ مُّقِيْتًا ۸۵ وَاِذَا حُيِّيْتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوْا بِاَحْسَنَ مِنْهَآ
اَوْ رُدُّوْهَا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ حَسِيْبًا ۸۶ اَللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۭ لَيَجْمَعَنَّكُمْ
اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ ۭ وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ حَدِيْثًا ۸۷

आयत 77

"तुमने देखा नहीं उन लोगों को जिनसे कहा गया था कि अपने हाथ रोके रखो और नमाज़ क़ायम करो और ज़कात दो?"

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِیْنَ قِیْلَ لَهُمْ كُفُّوْٓا اَیْدِیَكُمْ وَ اَقِیْمُوا الصَّلٰوةَ وَ اٰتُوا الزَّكٰوةَ

मक्का मुकर्रमा में बारह बरस तक मुसलमानों को यही हुक्म था कि अपने हाथ बंधे रखो। उस दौर में मुसलमानों पर ज़ुल्मो सितम के पहाड़ तोड़े जा रहे थे, उन्हें बहुत बुरी तरह सताया जा रहा था, तशद्दुत व ताज़ीब की नई तारीख़ रक़म की जा रही थी। इस पर मुसलमान का ख़ून खौलता था और बहुत से मुसलमान यह चाहते थे कि हमें इजाज़त दी जाये तो हम अपने भाईयों पर होने वाले इस ज़ुल्म व सितम का बदला लें, आख़िर हम नामर्द नहीं हैं, बेग़ैरत नहीं हैं, बुज़दिल नहीं हैं। लेकिन उन्हें हाथ उठाने की इजाज़त नहीं थी। यह मन्हजे इन्क़लाबे नबवी ﷺ का "सब्रे महज़" का मरहला था उस वक़्त हुक्म यह था कि अपने हाथ रोके रखो।

नग़मा है बुलबुल शौरीदा तेरा ख़ाम अभी
अपने सीने में इसे और ज़रा थाम अभी

एक वक़्त आयेगा कि तुम्हारे हाथ खोल दिये जायेंगे।

यहाँ सवाल पैदा होता है कि {اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِیْنَ قِیْلَ لَهُمْ كُفُّوْٓا اَیْدِیَكُمْ} फ़अल मजहूल है। यह कहा किसने था? मक्की क़ुरान में तो "كُفُّوْٓا اَیْدِیَكُمْ" का हुक्म मौजूद नहीं है। यह हुक्म था मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ का। हुज़ूर ﷺ ने अहले ईमान को हाथ उठाने से रोका था। यह आयत सूरतुन्निसा में नाज़िल हो रही है जो मदनी है। कि उस वक़्त भी वह रसूल अल्लाह ﷺ का हुक्म था, जिसको अल्लाह ने अपना हुक्म क़रार दिया। गोया यह अल्लाह ही की तरफ़ से था। वहिये जली तो यह क़ुरान है। इसके अलावा नबी अकरम ﷺ पर वहिये ख़फ़ी भी नाज़िल होती थी। तो यह भी हो सकता है कि अल्लाह ने मक्की दौर में वहिये ख़फ़ी के ज़रिये रसूल अल्लाह ﷺ को यह हुक्म दिया हो जो यहाँ नक़ल हुआ है और यह भी हो सकता है कि यह हुज़ूर ﷺ का अपना इज्तेहाद हो जिसे अल्लाह ने बरक़रार रखा हो, उसे क़ुबूल (own) किया हो।

अब यह बात यहाँ महज़ूफ़ है कि उस वक़्त तो कुछ लोग बड़ जोश व जज़्बे से और बड़े ज़ोर-शोर से कहते थे कि हमें इजाज़त होनी चाहिये कि हम जंग करें, लेकिन अब क्या हाल हुआ:

"तो उनमें से एक फ़रीक़ का हाल यह है कि वह लोगों से इस तरह डर रहे हैं जैसे अल्लाह से डरना चाहिये, बल्कि उससे भी ज़्यादा डर रहे हैं।"

فَلَمَّا كُتِبَ عَلَیْهِمُ الْقِتَالُ اِذَا فَرِیْقٌ مِّنْهُمْ یَخْشَوْنَ النَّاسَ كَخَشْیَةِ اللّٰهِ اَوْ اَشَدَّ خَشْیَةً

ज़ाहिर बात है कि यह मक्के के मुहाजरीन नहीं थे, बल्कि यह हाल मुनाफ़िक़ीने मदीना का था, लेकिन फ़र्क़ व तफ़ावुत वाज़ेह करने के लिये मक्की दौर की कैफ़ियत से तक़ाबुल किया गया कि असल ईमान तो वह था, और यह जो सूरते हाल है यह कमज़ोरी-ए-ईमान और निफ़ाक़ की अलामत है।

"और वह कहते हैं परवरदिग़ार! तूने हम पर जंग क्यों फ़र्ज़ कर दी?"

وَقَالُوْا رَبَّنَا لِمَ كَتَبْتَ عَلَیْنَا الْقِتَالَ

"क्यों ना अभी हमें कुछ और मोहलत दी?"

لَوْلَآ اَخَّرْتَنَآ اِلٰٓى اَجَلٍ قَرِیْبٍ

इस हुक्म को कुछ देर के लिये मज़ीद मुअख़र क्यों ना किया?

"(ऐ नबी ﷺ!) कह दीजिये दुनिया का साज़ो सामान बहुत थोड़ा है।"

قُلْ مَتَاعُ الدُّنْیَا قَلِیْلٌ

"और आख़िरत बहुत बेहतर है उसके लिये जो तक़्वा की रविश इख़्तियार करे"

وَالْاٰخِرَةُ خَیْرٌ لِّمَنِ اتَّقٰى

وَلَا تُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا۝

“और तुम पर एक धागे के बराबर भी ज़ुल्म नहीं होगा।”

तुम्हारी हक़ तल्फ़ी क़तअन नहीं होगी और तुम्हारे जो भी आमाल हैं, इन्फ़ाक़ है, क़िताल है, अल्लाह की राह में ईसार (त्याग) है, उसका तुम्हें भरपूर अजर व सवाब दे दिया जायेगा।

आयत 78

اَيْنَ مَا تَكُوْنُوْا يُدْرِكْكُّمُ الْمَوْتُ

“तुम जहाँ कहीं भी होगे मौत तुमको पा लेगी”

ज़ाहिर है जिहाद से जी चुराने का असल सबब मौत का ख़ौफ़ था। चुनाँचे उनके दिलों के अंदर जो ख़ौफ़ था उसे ज़ाहिर किया जा रहा है। उन पर वाज़ेह किया जा रहा है कि मौत से कोई मफ़र (शरण) नहीं, तुम जहाँ कहीं भी होगे मौत तुम्हें पा लेगी।

وَلَوْ كُنْتُمْ فِيْ بُرُوْجٍ مُّشَيَّدَةٍ ۭ

“ख़्वाह तुम बड़े मज़बूत क़िलों के अंदर ही हो।”

अग़रचे तुम बहुत मज़बूत (fortified) क़िलों के अंदर अपने आप को महसूर (क़ैद) कर लो। फिर भी मौत से नहीं बच सकते।

وَاِنْ تُصِبْهُمْ حَسَنَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۚ

“और अगर उन्हें कोई भलाई पहुँचती है तो कहते हैं यह अल्लाह की तरफ़ से है।”

मुनाफ़िक़ीन का एक तर्ज़े अमल यह भी था कि अगर मुसलमानों को कोई कामयाबी हासिल हो जाती, फ़तह नसीब हो जाती, कोई और भलाई पहुँच जाती, हुज़ूर ﷺ की तदबीर के अच्छे नतीजे निकल आते तो उसे हुज़ूर ﷺ की तरफ़ मन्सूब नहीं करते थे, बल्कि कहते थे कि यह अल्लाह का फ़ज़ल व करम हुआ है, यह सब अल्लाह की तरफ़ से है।

وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِكَ ۭ

“और अगर उन्हें कोई तकलीफ़ पहुँच जाये तो कहते हैं कि (ऐ मुहम्मद ﷺ) यह आपकी वजह से है।”

आप ﷺ ने यह गलत इक़दाम (अंदाज़ा) किया तो उसके नतीजे में हम पर यह मुसीबत आ गई। यह आपका फ़ैसला था कि खुले मैदान में जाकर जंग करेंगे, हमने तो आपको मशवरा दिया था कि मदीने के महसूर होकर जंग करें।

قُلْ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۭ

“कह दीजिये सब कुछ अल्लाह ही की तरफ़ से है।”

यह सब चीजें, ख़ैर हो, शर हो, तकलीफ़ हो, आसानी हो, मुश्किल हो, जो भी सूरतें हैं सब अल्लाह की तरफ़ से हैं।

فَمَالِ هٰٓؤُلَاۗءِ الْقَوْمِ لَا يَكَادُوْنَ يَفْقَهُوْنَ حَدِيْثًا۝

“तो इन लोगों को क्या हो गया है कि यह कोई बात भी नहीं समझते!”

आयत 79

مَآ اَصَابَكَ مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ ۡ وَمَآ اَصَابَكَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ نَّفْسِكَ ۭ

“(ऐ मुसलमान!) तुझे जो भलाई भी पहुँचती है वह अल्लाह की तरफ़ से पहुँचती है, और जो मुसीबत तुझ पर आती है वह ख़ुद तेरे नफ़्स की तरफ़ से है।”

इस आयत के बारे में मुफ़स्सिरीन ने मुख़्तलिफ़ अक़वाल नक़ल किये हैं। मेरे नज़दीक राजेह (सबसे सही) क़ौल यह है कि यहाँ तहवीले ख़िताब है। पहली आयत में ख़िताब उन मुसलमानों को जिनकी तरफ़ से कमज़ोरी या निफ़ाक़ का इज़हार हो रहा था, लेकिन इस आयत में बहैसियते मज्मुई ख़िताब है कि देखो ऐ मुसलमानों! जो भी कोई ख़ैर तुम्हें मिलता है उस पर तुम्हें यही कहना चाहिये कि यह अल्लाह की तरफ़ से है और कोई शर पहुँच जाये तो उसे अपने कसब (कमाई) व अमल का नतीजा समझना चाहिये। अग़रचे हमारा ईमान है कि ख़ैर भी अल्लाह की तरफ़ से है और शर भी। "ईमाने मुफ़स्सल" में अल्फ़ाज़ आते हैं: "وَالْقَدْرِ خَيْرِهٖ وَ شَرِّهٖ مِنَ اللهِ تَعَالٰی" लेकिन एक मुसलमान के लिये सही तर्ज़े अमल यह है कि ख़ैर मिले तो उसे अल्लाह का फ़ज़ल समझे। और अगर कोई ख़राबी हो जाये तो समझे कि यह मेरी किसी ग़लती के सबब हुई है, मुझसे कोई कोताही हुई है, जिस पर अल्लाह तआला ने कोई तादीब (correction) फ़रमानी चाही है।

وَاَرْسَلْنٰكَ لِلنَّاسِ رَسُوْلًا

"और (ऐ नबी ﷺ) हमने आपको तो लोगों के लिये रसूल बना कर भेजा है।"

इस मक़ाम के बारे में एक क़ौल यह भी है कि दरमियानी टुकड़े में भी ख़िताब तो रसूल अल्लाह ﷺ ही से है, लेकिन इस्तजाब के अंदाज़ में कि अच्छा! जो कुछ उन्हें ख़ैर मिल जाये वह तो अल्लाह की तरफ़ से है और जो कोई बुराई आ जाये तो वह आपकी तरफ़ से है! यानि क्या बात यह कह रहे हैं! जबकि अल्लाह ने तो आपको रसूल बना कर भेजा है। इसकी यह दो ताबीरें हैं। मेरे नज़दीक पहली ताबीर राजेह है।

وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا ۝

"और अल्लाह तआला काफ़ी है ग़वाह के तौर पर।"

आयत 80

مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ

"जिसने इताअत की रसूल की उसने इताअत की अल्लाह की।"

यह टुकड़ा बहुत अहम है। इसलिये कि यह दो टूक अंदाज़ में वाज़ेह कर रहा है कि रसूल ﷺ की इताअत दरहक़ीक़त अल्लाह की इताअत है। इसकी मज़ीद वज़ाहत के लिये यह हदीस मुलाहिज़ा कीजिये। हज़रत अबु हुरैरा रज़ि० से रिवायत है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इर्शाद फ़रमाया:

مَنْ اَطَاعَنِیْ فَقَدْ اَطَاعَ اللهَ، وَمَنْ عَصَانِیْ فَقَدْ عَصَی اللهَ، وَمَنْ اَطَاعَ اَمِیْرِیْ فَقَدْ اَطَاعَنِیْ، وَمَنْ عَصٰی اَمِیْرِیْ فَقَدْ عَصَانِیْ

"जिसने मेरी इताअत की उसने अल्लाह की इताअत की और जिसने मेरी नाफ़रमानी की उसने अल्लाह की नाफ़रमानी की। और जिसने मेरे (मुक़र्रर करदा) अमीर की इताअत की उसने मेरी इताअत की और जिसने मेरे (मुक़र्रर करदा) अमीर की नाफ़रमानी की उसने मेरी नाफ़रमानी की।"

रसूल अल्लाह ﷺ की सारी जद्दो-जहद जमाअती नज़्म के तहत हो रही थी। जिहाद व क़िताल के लिये फ़ौज तैयार होती तो इसमें ऊपर से नीचे तक समअ व इताअत की एक ज़ंजीर बनती चली जाती। रसूल अल्लाह ﷺ कमांडर एंड चीफ़ थे, आप ﷺ लश्कर के मैमना, मैसरह, क़ल्ब और अक़ब वगैरह पर, हरावल दस्ते पर अलग-अलग कमांडर मुक़र्रर फ़रमाते। उन अमीरों (कमांडरों) के बारे में आप ﷺ ने फ़रमाया कि जिसने मेरे मुक़र्रर करदा अमीर की इताअत की उसने मेरी इताअत की, और जिसने मेरे मुक़र्रर करदा अमीर की नाफ़रमानी की उसने मेरी नाफ़रमानी की।

وَمَنْ تَوَلّٰى فَمَآ اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ۝٨٠

"और जिसने रूगरदानी की तो हमने आपको उन पर निगरान बना कर नहीं भेजा है।"

ऐ नबी ﷺ! हमने आपको इन पर दरोगा मुक़र्रर नहीं किया। अपने तर्ज़े अमल के यह खुद ज़िम्मेदार और जवाबदेह हैं और अल्लाह तआला के हुज़ूर पेश होकर यह उसके मुहासबे का खुद सामना कर लेंगे।

आयत 81

"और कहते हैं कि सरे तस्लीम ख़म है" وَيَقُوْلُوْنَ طَاعَةٌ

इन मुनाफ़िकों का यह हाल है कि आपके सामने तो कहते हैं कि हम मुतीअ फ़रमान हैं, आप ﷺ ने जो फ़रमाया क़ुबूल है, हम उस पर अमल करेंगे।

"फिर जब आपके पास से हटते हैं तो उनमें से एक गिरोह आपस में ऐसे मशवरे करता है जो उनको अपने क़ौल के ख़िलाफ़ है।" فَاِذَا بَرَزُوْا مِنْ عِنْدِكَ بَيَّتَ طَاۗىِٕفَةٌ مِّنْھُمْ غَيْرَ الَّذِيْ تَقُوْلُ

जाकर ऐसे मशवरे आपस में शुरू कर देता है जो ख़िलाफ़ है इसके जो वह वहाँ कह कर गये हैं। सामने वह हो गई बाद में जाकर जो है रेशादवानी, साज़िश।

"और अल्लाह लिख रहा है जो भी वह मशवरे करते हैं" وَاللّٰهُ يَكْتُبُ مَا يُبَيِّتُوْنَ

"तो (ऐ नबी ﷺ) आप इनसे चश्मपोशी कीजिये" فَاَعْرِضْ عَنْھُمْ

आप इनकी परवाह ना कीजिये, यह आपको कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकेंगे। अभी इनके ख़िलाफ़ इक़दाम करना ख़िलाफ़े मस्लहत है। जैसे एक दौर में फ़रमाया गया: {فَاعْفُوْا وَاصْفَحُوْا } (अल् बक़रह:109) यानि इन यहूदियों को ज़रा नज़रअंदाज़ कीजिये, अभी इनकी शरारतों पर तकफ़ीर ना कीजिये, जो कुछ यह कह रहे हैं उस पर सब्र कीजिये, इसलिये कि मस्लहत का तक़ाज़ा है कि अभी यह महाज़ ना खोला जाये। इसी तरह यहाँ मुनाफ़िक़ीन के बारे में कहा गया कि अभी इनसे ऐराज़ कीजिये। चुनाँचे उनकी रेशादवानियों से कुछ अरसे तक चश्मपोशी की गई और फिर ग़ज़वा-ए-तबूक के बाद रसूल अल्लाह ﷺ ने उन पर गिरफ़्त शुरू की। फिर वह वक़्त आ गया कि अब तक उनकी शरारतों पर जो पर्दे पड़े रहे थे वह पर्दे उठा दिये गये।

"और आप अल्लाह पर तवक्कुल कीजिये।" وَتَوَكَّلْ عَلَي اللّٰهِ

"और अल्लाह काफ़ी है भरोसे के लिये।" وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا

आप ﷺ को सहारे के लिये अल्लाह काफ़ी है। उनकी सारी रेशादवानियाँ, यह मशवरे, यह साज़िशें, सब पादर हवा हो जायेंगी, आप फ़िक्र ना कीजिये।

आयत 82

"क्या यह क़ुरान पर तदब्बुर नहीं करते?" اَفَلَا يَتَدَبَّرُوْنَ الْقُرْاٰنَ

यह क़ुरान पढ़ते भी हैं और सुनते भी हैं, लेकिन इस पर ग़ौरो फ़िक्र नहीं करते। नमाज़ें तो वह पढ़ते थे। उस वक़्त जो भी मुनाफ़िक़ था उसे नमाज़ तो पढ़नी पड़ती थी, वरना उसको मुसलमान ना माना जाता। आज तो मुसलमान माने जाने के लिये नमाज़ ज़रूरी नहीं है, उस वक़्त तो ज़रूरी थी। बल्कि रईसुल मुनाफ़िक़ीन अब्दुल्लाह बिन उबई तो पहली सफ़ में होता था और जुमे के रोज़ तो ख़ासतौर पर ख़ुत्बे से पहले खड़े होकर ऐलान करता था कि लोगों इनकी बात तवज्जोह से सुनो, यह अल्लाह के रसूल हैं। गोया अपनी चौधराहट के इज़हार के लिये यह अंदाज़ इख़्तियार करता।

तो वह नमाज़े पढ़ते थे, क़ुरान सुनते थे, लेकिन क़ुरान पर तदब्बुर नहीं करते थे। क़ुरान उनके सिरों के ऊपर से गुज़र रहा था। या उनके एक कान से दाख़िल होकर दूसरे कान से निकल जाता था।

وَلَوْ كَانَ مِنْ عِنْدِ غَيْرِ اللّٰهِ لَوَجَدُوْا فِيْهِ اخْتِلَافًا كَثِيْرًا ۝۸۲

"अगर यह अल्लाह के सिवा किसी और की तरफ से होता तो इसमें वह बहुत से तज़ादात (इख़्तिलाफ़) पाते।"

इस पर ग़ौर करो, यह बहुत मरबूत (वर्णन किया हुआ) कलाम है। इसका पूरा फ़लसफ़ा मन्तक़ी तौर पर बहुत मरबूत है, इसके अंदर कहीं कोई तज़ाद नहीं है।

आयत 83

وَاِذَا جَآءَهُمْ اَمْرٌ مِّنَ الْاَمْنِ اَوِ الْخَوْفِ اَذَاعُوْا بِهٖ

"और जब उनके पास कोई ख़बर पहुँचती है अमन की या ख़तरे की तो वह उसे फैला देते हैं।"

मुनाफ़िकों की एक रविश यह भी थी कि ज्यों ही कोई इत्मिनान बख़्श या ख़तरनाक ख़बर सुन पाते उसे लेकर फैला देते। कहीं से ख़बर आ गई कि फ़लाँ क़बीला चढ़ाई करने की तैयारी कर रहा, उसकी तरफ़ से हमले का अंदेशा है तो वह फ़ौरन उसे आम कर देते, ताकि लोगों में ख़ौफ़ व हरास (गिरावट) पैदा हो जाये। "اِذَاعَۃ" का लफ़्ज़ आज-कल नश्रियाति (broadcasting) इदारों के लिये इस्तेमाल होता है और "مِذْيَاع" रेडियो सेट को कहा जाता है।

وَلَوْ رَدُّوْهُ اِلَى الرَّسُوْلِ وَاِلٰٓى اُولِي الْاَمْرِ مِنْهُمْ

"और अगर वह उसको रसूल ﷺ और अपने ऊलुल अम्र के सामने पेश करते"

لَعَلِمَهُ الَّذِيْنَ يَسْتَنْۢبِطُوْنَهٗ مِنْهُمْ

"तो यह बात उनमें से उन लोगों के इल्म में आ जाती जो बात की तह तक पहुँचने वाले हैं।"

अग़र यह लोग ऐसी ख़बरों को रसूल अल्लाह ﷺ तक या ज़िम्मेदार असहाब तक पहुँचाते, मसलन औस के सरदार साद बिन उबादाह रज़ि० और ख़ज़रज के सरदार साद बिन मुआज़ रज़ि०, तो यह उनकी तहक़ीक़ कर लेते कि बात किस हद तक दुरुस्त है और इसका क्या नतीजा निकल सकता है और फिर जायज़ा लेते कि हमें इस ज़िमन में क्या क़दम उठाना चाहिये। लेकिन उनकी रविश यह थी कि महज़ सनसनी फैलाने और सरासेमगी (डर) पैदा करने के लिये ऐसी ख़बरें लोगों में आम कर देते।

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ

"और अगर अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी रहमत तुम्हारे शामिले हाल ना होती"

لَاتَّبَعْتُمُ الشَّيْطٰنَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝۸۳

"तो तुम सबके सब शैतान की पैरवी करते, सिवाय चंद एक के।"

आयत 84

فَقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

"पस (ऐ नबी ﷺ!) आप जंग करे अल्लाह की राह में!"

क़िताल के ज़िमन में यह क़ुरान मजीद की ग़ालिबन सख़्त तरीन आयत है, लेकिन इसमें सख़्ती लफ़्ज़ी नहीं, मायनवी है।

"आप पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है सिवाय अपनी ज़ात के" لَا تُكَلَّفُ اِلَّا نَفْسَكَ

"अलबत्ता अहले ईमान को आप इसके लिये उकसाएँ।" وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ

आप ﷺ अहले ईमान को क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह के लिये जिस क़दर तरग़ीब व तशवीक़ दे सकते हैं दीजिये। उन्हें इसके लिये जोश दिलायें, उभारिये। लेकिन अगर कोई और नहीं निकलता तो अकेले निकलिये जैसे हज़रत अबु बकर रज़ि० का क़ौल भी नक़ल हुआ है जब उनसे कहा गया कि मानीने ज़कात (ज़कात ना देने वालों) के बारे में नर्मी कीजिये तो आप रज़ि० ने फ़रमाया था कि अगर कोई मेरा साथ नहीं देगा तो मैं अकेला जाऊँगा, अज़मियत का यह आलम है! तो ऐ नबी ﷺ आपको तो यह काम करना है, आपका तो यह फ़र्ज़े मन्सबी है। आपको हमने भेजा ही इसलिये है कि रूए अरज़ी पर अल्लाह के दीन को ग़ालिब कर दें।

"बईद (दूर) नहीं कि अल्लाह तआला जल्द ही इन काफ़िरों की क़ुव्वत को रोक दे।" عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّكُفَّ بَاْسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

कुफ़्फ़ार व मुशरिकीन की जंगी तैयारियाँ हो रही हैं, बड़ी चलत-फिरत हो रही है, यह तो कुछ अरसे की बात है वह वक़्त बस आया चाहता है कि उनमें दम नहीं रहेगा कि आपका मुक़ाबला करें। और वह वक़्त जल्द ही आ गया कि मुशरिकीन की कमर टूट गई। सूरतुन्निसा की यह आयत चार हिजरी में नाज़िल हुई और पाँच हिजरी में ग़ज़वा-ए-अहज़ाब पेश आया। जिसके बाद मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ ने अहले ईमान से फ़रमाया कि ((لن تغزو کم قریش بعد عامکم هذا و لکنکم تغزونهم)) "इस साल के बाद क़ुरैश तुम पर हमलावर होने की जुर्रत नहीं करेंगे, बल्कि अब तुम उन पर हमलावर होगे।" ग़ज़वा-ए-अहज़ाब के फ़ौरन बाद सूरह सफ़ नाज़िल हुई। जिस (आयत:13) में अहले ईमान को फ़तह व नुसरत की बशारत दी गई। {وَّاُخْرٰى تُحِبُّوْنَهَا ۭ نَصْرٌ مِّنَ اللّٰهِ وَفَتْحٌ قَرِيْبٌ ۭ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِيْنَ} इससे अगले साल 6 हिजरी में आप ﷺ ने उमरे का सफ़र किया, जिसके नतीजे में सुलह हुदैबिया हो गयी, जिसे अल्लाह तआला ने फ़तह मुबीन क़रार दिया {اِنَّا فَتَحْنَا لَكَ فَتْحًا مُّبِيْنًا}। इसके बाद सातवें साल अल्लाह तआला ने फ़तह ख़ैबर अता फ़रमा दी और आठवें साल में मक्का फ़तह हो गया। इसी तरह एक के बाद एक, सारे बंद दरवाज़े खुलते चले गये।

"और यक़ीनन अल्लाह तआला बहुत शदीद है क़ुव्वत में भी और सज़ा देने में भी।" وَاللّٰهُ اَشَدُّ بَاْسًا وَّاَشَدُّ تَنْكِيْلًا

मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब के बाद अब फिर कुछ तमद्दुनी आदाब का ज़िक्र हो रहा है। मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब में दो बातों को नुमाया किया गया। एक इताअते रसूल ﷺ जो उन पर बहुत शाक़ (मुश्किल) गुज़रती थी और एक क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह जो उनके लिए बहुत बड़ा इम्तिहान बन जाता था। अब फिर अहले ईमान से ख़िताब आ रहा है।

आयत 85

"जो कोई सिफ़ारिश करेगा भलाई की उसे उसमें से हिस्सा मिलेगा।" مَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنْ لَّهٗ نَصِيْبٌ مِّنْهَا

इंसानी मआशरे के अंदर किसी के लिये सिफ़ारिश करना भी बाज़ अवक़ात ज़रूरी हो जाता है। कोई शख्स है, उसकी कोई अहतियाज (ज़रुरत) है, आप जानते हैं कि सही आदमी है, बहरुपिया नहीं है। दूसरे शख्स को आप जानते हैं कि वह इसकी मदद कर सकता है तो आपको दूसरे शख्स के पास जाकर उसके हक़ में सिफ़ारिश करनी चाहिये कि मैं इसको जानता हूँ, यह वाक़िअतन ज़रूरतमंद है। इस तरह उसकी ज़रूरत पूरी हो जायेगी और

इस नेकी के सवाब में आप भी हिस्सेदार होंगे। इसी तरह किसी पर कोई मुक़दमा क़ायम हो गया है और आपके इल्म में उसकी बेगुनाही के बारे में हक़ाइक़ और शवाहिद हैं तो आपको अदालत में पेश होकर यह हक़ाइक़ और शवाहिद पेश करने चाहियें, ताकि उसकी गुलु ख़लासी हो सके। इस आयत की रू से नेकी, भलाई, ख़ैर और अद्ल व इंसाफ़ की ख़ातिर अगर किसी की सिफ़ारिश की जाये तो अल्लाह तआला इसका अजर व सवाब अता फ़रमायेगा।

وَمَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَّكُنْ لَّهٗ كِفْلٌ مِّنْهَا

"और जो कोई सिफ़ारिश करेगा बुराई की तो उसे उसमें से हिस्सा मिलेगा।"

किसी ने किसी कि झूठी और ग़लत सिफ़ारिश की, हक़ाइक़ को तोड़ा-मरोड़ा तो वह भी उसके जुर्म में शरीक हो गया और वह उस जुर्म की सज़ा में भी हिस्सेदार होगा।

وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ مُّقِيْتًا ۝

"और अल्लाह तआला हर शय पर क़ुव्वत रखने वाला है।"

आयत 86

وَاِذَا حُيِّيْتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوْا بِاَحْسَنَ مِنْهَآ اَوْ رُدُّوْهَا

"और जब तुम्हें सलामती की कोई दुआ दी जाये तो तुम भी सलामती की उससे बेहतर दुआ दो या उसी को लौटा दो।"

हर मआशरे में कुछ ऐसे दुआइया कलिमात राइज होते हैं जो मआशरे के अफ़राद बाहमी मुलाक़ात के वक़्त इस्तेमाल करते हैं। जैसे मग़रिबी मआशरे में गुड मॉर्निंग और गुड इवनिंग वग़ैरह। अरबों के यहाँ सबाह अल् ख़ैर व मसाअ अल् ख़ैर के अलावा सबसे ज़्यादा रिवाज "हय्याका अल्लाह" कहने का था। यानि अल्लाह तुम्हारी ज़िन्दगी बढ़ाये। जैसे हमारे यहाँ सरायकी इलाक़े में कहा जाता है "हयाती होवे"। दराज़ी-ए-उम्र की इस दुआ को तहिय्या कहा जाता है। सलाम और उसके हम मायने दूसरे दुआइया कलिमात भी सब इसके अंदर शामिल हो जाते हैं। अरब में जब इस्लामी मआशरा वुजूद में आया तो दीग़र दुआइया कलिमात भी बाक़ी रहे, अलबत्ता "अस्सलामु अलैकुम" को एक ख़ास इस्लामी शआर (सिद्धांत) की हैसियत हासिल हो गई। इस आयत में हिदायत की जा रही है कि जब तुम्हें कोई सलामती की दुआ दे तो उसके जवाब का आला तरीक़ा यह है कि उससे बेहतर तरीक़े पर जवाब दो। "अस्सलामु अलैकुम" के जवाब में "वालैकुम अस्सलाम" के साथ "वा रहमतुल्लाही वा बरकातुहू" का इज़ाफा करके उसे लौटाएँ। अगर यह नहीं हो तो कम से कम उसी के अल्फ़ाज़ उसकी तरफ़ लौटा दो।

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ حَسِيْبًا ۝

"यक़ीनन अल्लाह तआला हर चीज़ का हिसाब करने वाला है।"

यह छोटी-छोटी नेकियाँ जो हैं इंसानी ज़िन्दगी में इनकी बहुत अहमियत है। इन मआशरती आदाब से मआशरती ज़िन्दगी के अंदर हुस्न पैदा होता है, आपस में मुहब्बत व मवद्दत (स्नेह) पैदा होती है।

आयत 87

اَللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ

"अल्लाह वह है जिसके सिवा कोई मअबूद नहीं।"

لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ

"वह तुम्हें लाज़िमन जमा करेगा क़यामत के दिन, जिसके आने में कोई शक नहीं।"

وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ حَدِيْثًا ۝۸۷ۧ

“और अल्लाह से बढ़ कर अपनी बात में सच्चा कौन होगा?”

मुनाफ़िक़ीन पर जो तीन चीज़ें बहुत शाक़ थीं, अब उनमें से तीसरी चीज़ का तज़किरा आ रहा है, यानि हिजरत। एक तो वह लोग थे जो बीमार थे, बूढ़े थे, सफ़र के क़ाबिल नहीं थे, या औरतें और बच्चे थे, उनका मामला तो पहले ज़िक्र हो चुका कि उनके लिये तुम्हें क़िताल करना चाहिये ताकि उन्हें ज़ालिमों के चंगुल से छुड़ओ। एक वह लोग थे जो दायरा-ए-इस्लाम में दाख़िल होने का ऐलान तो कर चुके थे लेकिन अपने काफ़िर क़बीलों और अपनी बस्तियों के अंदर आराम से रह रहे थे और हिजरत नहीं कर रहे थे, जबकि हिजरत अब फ़र्ज़ कर दी गई थी। यह भी समझ लीजिये कि हिजरत फ़र्ज़ क्यों कर दी गई? इसलिये कि जब मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की दावत और तहरीक इस मरहले में दाख़िल हो गई कि अब बातिल के ख़िलाफ़ इक़दाम करना है, तो अब अहले ईमान की जितनी भी दस्तयाब ताक़त थी उसे एक मरकज़ पर मुजतमअ (जमा) करना ज़रूरी था, मक्की दौर में जो पहली हिजरत हुई थी यानि हिजरते हब्शा वह इख़्तियारी थी। इसकी सिर्फ़ इजाज़त थी, हुक्म नहीं था लेकिन हिजरते मदीना का तो हुक्म था। लिहाज़ा अब उन लोगों का ज़िक्र है जो इस बिना पर मुनाफ़िक़ क़रार पाये कि वह हिजरत नहीं कर रहे हैं।

आयात 88 से 91 तक

فَمَا لَكُمْ فِي الْمُنٰفِقِيْنَ فِئَتَيْنِ وَاللّٰهُ اَرْكَسَهُمْ بِمَا كَسَبُوْا ۭ اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَهْدُوْا مَنْ
اَضَلَّ اللّٰهُ ۭ وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا ۝۸۸ وَدُّوْا لَوْ تَكْفُرُوْنَ كَمَا كَفَرُوْا
فَتَكُوْنُوْنَ سَوَاۗءً فَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ اَوْلِيَاۗءَ حَتّٰى يُهَاجِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۭ فَاِنْ
تَوَلَّوْا فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ ۠ وَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ وَلِيًّا وَّلَا
نَصِيْرًا ۝۸۹ۙ اِلَّا الَّذِيْنَ يَصِلُوْنَ اِلٰى قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ اَوْ جَاۗءُوْكُمْ
حَصِرَتْ صُدُوْرُهُمْ اَنْ يُّقَاتِلُوْكُمْ اَوْ يُقَاتِلُوْا قَوْمَهُمْ ۭ وَلَوْ شَاۗءَ اللّٰهُ لَسَلَّطَهُمْ
عَلَيْكُمْ فَلَقٰتَلُوْكُمْ ۚ فَاِنِ اعْتَزَلُوْكُمْ فَلَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ وَاَلْقَوْا اِلَيْكُمُ السَّلَمَ ۙ فَمَا
جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ عَلَيْهِمْ سَبِيْلًا ۝۹۰ سَتَجِدُوْنَ اٰخَرِيْنَ يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّاْمَنُوْكُمْ
وَيَاْمَنُوْا قَوْمَهُمْ ۭ كُلَّمَا رُدُّوْٓا اِلَى الْفِتْنَةِ اُرْكِسُوْا فِيْهَا ۚ فَاِنْ لَّمْ يَعْتَزِلُوْكُمْ وَيُلْقُوْٓا
اِلَيْكُمُ السَّلَمَ وَيَكُفُّوْٓا اَيْدِيَهُمْ فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوْهُمْ ۭ
وَاُولٰۗىِٕكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ۝۹۱ۧ

आयत 88

فَمَا لَكُمْ فِي الْمُنٰفِقِيْنَ فِئَتَيْنِ

“पस तुम्हें क्या हो गया है कि तुम मुनाफ़िक़ों के बारे में दो गिरोह हो रहे हो?”

बात आगे वाज़ेह हो जायेगी कि यह किन मुनाफ़िक़ीन का तज़किरा है, जिनके बारे में मुसलमानों के दरमियान दो राय पाई जाती थीं। अहले ईमान में से बाज़ का ख़्याल था कि उनके साथ नर्मी होनी चाहिये, आख़िर यह ईमान तो लाये थे ना, अब नहीं हिजरत कर सके। जबकि कुछ लोग अल्लाह के हुक्म के मामले में उनसे सख़्त रवैया इख़्तियार करने के हक़ में थे। चुनाँचे इर्शाद हुआ कि ऐ मुसलमानों! तुम्हें क्या हो गया है कि तुम उनके बारे में दो ग़िरोहों में तक़सीम हो गये हो?

وَاللّٰهُ اَرْكَسَهُمْ بِمَا كَسَبُوْا ۭ

“और अल्लाह ने तो उनको उनकी करतूतों के सबब उलट दिया है।”

उनका हिजरत ना करना दरहक़ीक़त इस बात का सबूत है कि वह उल्टे फेर दिए गये हैं। यानि उनका ईमान सल्ब हो चुका है। हाँ कोई मजबूरी होती, उज़्र (बहाना) होता तो बात थी।

"क्या तुम चाहते हो कि उनको हिदायत दे दो जिनको अल्लाह ने गुमराह कर दिया है?"

اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَهْدُوْا مَنْ اَضَلَّ اللّٰهُ

जिनकी गुमराही पर अल्लाह की तरफ़ से मुहर तस्दीक़ सब्त हो चुकी है।

"और जिसको अल्लाह रास्ते से हटा दे उसके लिये तुम कोई रास्ता ना पाओगे।"

وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا

जिसकी गुमराही पर अल्लाह की तरफ़ से आखरी मुहर तस्दीक़ सब्त हो चुकी हो उसके लिये फिर कौन सा रास्ता बाक़ी रह जाता है।

आयत 89

"यह तो चाहते हैं कि तुम भी कुफ़्र करो जिस तरह इन्होंने कुफ़्र किया है ताकि तुम सब बराबर हो जाओ"

وَدُّوْا لَوْ تَكْفُرُوْنَ كَمَا كَفَرُوْا فَتَكُوْنُوْنَ سَوَآءً

यह लोग जो उनके बारे में नर्मी की बातें कर रहे हैं यह चाहते हैं कि जैसे उन्होंने कुफ़्र किया है तुम भी करो, ताकि तुम और वह सब यक्साँ (एक जैसे) हो जायें। दुम कटी बिल्ली चाहती है कि सब बिल्लियों की दुम कट जायें।

"तो अब उनमें से किसी को दोस्त ना बनाओ जब तक कि वह हिजरत ना करें अल्लाह की राह में।"

فَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ اَوْلِيَآءَ حَتّٰى يُهَاجِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

यह गोया अब उनके ईमान का लिट्मस टेस्ट है। अगर वह हिजरत नहीं करते तो इसका मतलब यह होगा कि वह मोमिन नहीं मुनाफ़िक़ हैं।

"और अगर वह पीठ मोड़ लें (हिजरत ना करें) तो उनको पकड़ो और क़त्ल करो जहाँ कहीं भी पाओ।"

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ

यानि अगर वह हिजरत नहीं करते जो उन पर फ़र्ज़ कर दी गई है तो फिर वह काफ़िरों के हुक्म में है, चाहे वह कलमा पढ़ते हों। तुम उन्हें जहाँ भी पाओ पकड़ो और क़त्ल करो।

"और उनमें से किसी को भी अपना साथी और मददगार मत बनाओ।"

وَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا

आयत 90

"सिवाय उनके जिनका ताल्लुक़ किसी ऐसी क़ौम से हो जिसके साथ तुम्हारा कोई मुआहिदा है"

اِلَّا الَّذِيْنَ يَصِلُوْنَ اِلٰى قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ

यानि इस हुक्म से सिर्फ़ वह मुनाफ़िक़ीन मुस्तसना हैं जो किसी ऐसे क़बीले से ताल्लुक़ रखते हों जिसके साथ तुम्हारा सुलह का मुआहिदा है। उस मुआहिदे से उन्हें भी तहफ्फ़ुज़ हासिल हो जायेगा।

“या वह लोग जो तुम्हारे पास इस हाल में आयें कि दिल बरदाश्ता हों”

اَوۡ جَآءُوۡكُمۡ حَصِرَتۡ صُدُوۡرُهُمۡ

“इस बात से कि तुमसे लड़ें या अपनी क़ौम से लड़ें।”

اَنۡ يُّقَاتِلُوۡكُمۡ اَوۡ يُقَاتِلُوۡا قَوۡمَهُمۡ‌ؕ

यानि उनमें इतनी जुर्रत नहीं रही कि वह तुम्हारे साथ होकर अपनी क़ौम के ख़िलाफ़ लड़ें या अपनी क़ौम के साथ होकर तुम्हारे ख़िलाफ़ लड़ें। इंसानी मआशरे में हर सतह के लोग हर दौर में रहे हैं और हर दौर में रहेंगे। लिहाज़ा वाज़ेह किया जा रहा है कि इन्क़लाबी जद्दो-जहद के दौरान हर तरह के हालात आयेंगे और हर तरह के लोगों से वास्ता पड़ेगा। इस तरह के कम हिम्मत लोग कहते थे भई हमारे लिये लड़ना-भिड़ना मुश्किल है, ना तो हम अपनी क़ौम के साथ होकर मुसलमानों से लड़ेंगे और ना मुसलमानों के साथ होकर अपनी क़ौम से लड़ेंगे, उनके बारे में भी फ़रमाया कि उनकी भी जान बख़्शी करो। चुनाँचे हिज़रत ना करने वाले मुनाफ़िक़ीन के बारे में जो यह हुक्म दिया गया कि { فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ } “पस उनको पकड़ो और क़त्ल करो जहाँ कहीं भी पाओ” इससे दो इस्तसना बयान कर दिये गये।

“अगर अल्लाह चाहता तो उनको तुम पर मुसल्लत कर देता और वह तुमसे लड़ते।”

وَلَوۡ شَآءَ اللّٰهُ لَسَلَّطَهُمۡ عَلَيۡكُمۡ فَلَقٰتَلُوۡكُمۡ‌ۚ

यह भी तो हो सकता था कि अल्लाह उन्हें तुम्हारे ख़िलाफ़ हिम्मत अता कर देता और वह तुम्हारे ख़िलाफ़ क़िताल करते।

“पस अगर यह लोग तुमसे किनाराकश रहें और तुमसे जंग ना करें”

فَاِنِ اعۡتَزَلُوۡكُمۡ فَلَمۡ يُقَاتِلُوۡكُمۡ

“और तुम्हारी तरफ़ सुलह व आशती (शांति) का हाथ बढ़ाएँ।”

وَاَلۡقَوۡا اِلَيۡكُمُ السَّلَمَ‌ۙ

“तो अल्लाह ने तुम्हें भी ऐसे लोगों के ख़िलाफ़ इक़दाम करने की इजाज़त नहीं दी।”

فَمَا جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمۡ عَلَيۡهِمۡ سَبِيۡلًا‏

तो इस बात को समझ लीजिये कि जो मुनाफ़िक़ हिजरत नहीं कर रहे, उनके लिये क़ायदा यह है कि अब उनके ख़िलाफ़ इक़दाम होगा, उन्हें जहाँ भी पकड़ो और क़त्ल करो, वह हरबी काफ़िरों के हुक्म में हैं। इल्ला यह कि (1) उनके क़बीले से तुम्हारा सुलह का मआहिदा है तो वह उनको तहफ़्फ़ुज़ फ़राहम कर जायेगा। (2) वह आकर अगर यह कह दें कि हम बिल्कुल ग़ैर जानिबदार (neutral) हो जाते हैं, हममें जंग की हिम्मत नहीं है, हम ना आपके साथ होकर अपनी क़ौम से लड़ सकते हैं और ना ही आपके ख़िलाफ़ अपनी क़ौम की मदद करेंगे, तब ही उन्हें छोड़ दो। इसके बाद अब मुनाफ़िक़ीन के एक तीसरे गिरोह की निशानदेही की जा रही है।

आयत 91

“तुम पाओगे एक और क़िस्म के लोगों को भी जो चाहते हैं कि तुमसे भी अमन में रहें और अपनी क़ौम से भी अमन में रहें।”

سَتَجِدُوۡنَ اٰخَرِيۡنَ يُرِيۡدُوۡنَ اَنۡ يَّاۡمَنُوۡكُمۡ وَيَاۡمَنُوۡا قَوۡمَهُمۡ ؕ

“लेकिन जब भी फ़ितने की तरफ़ मोड़े जाते हैं तो उसके अंदर औंधे हो जाते हैं।”

كُلَّمَا رُدُّوۡۤا اِلَى الۡفِتۡنَةِ اُرۡكِسُوۡا فِيۡهَا‌ ۚ

जब भी आज़माइश का वक़्त आता है तो उसमें वो औंधे मुँह गिरते हैं। जब देखते हैं कि अपनी क़ौम का पलड़ा भारी है तो मुसलमानों के ख़िलाफ़ जंग करने के लिये तैयार हो जाते हैं कि अब तो हमारी फ़तह होने वाली है और हमें माले ग़नीमत में से हिस्सा मिल जायेगा।

فَاِنْ لَّمْ يَعْتَزِلُوْكُمْ وَيُلْقُوْٓا اِلَيْكُمُ السَّلَمَ وَيَكُفُّوْٓا اَيْدِيَهُمْ

“पस अगर यह तुमसे किनाराकश ना रहें, तुम्हारे सामने सुलह व सलामती पेश ना करें और अपने हाथ ना रोकें”

فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوْهُمْ ۭ

“तो इनको पकड़ो और क़त्ल करो जहाँ कहीं भी पाओ।”

وَاُولٰۗىِٕكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ۝٩١ۧ

“यह वह लोग हैं जिनके ख़िलाफ़ हमने तुम्हें सनद (और क़ुव्वत) अता कर दी है।”

ऐसे लोगों के मामले में हमने तुम्हें खुला इख़्तियार दे दिया है कि तुम इनके ख़िलाफ़ इक़दाम कर सकते हो।

आयात 92 से 96 तक

وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ اَنْ يَّقْتُلَ مُؤْمِنًا اِلَّا خَطَـــــًٔا ۚ وَمَنْ قَتَلَ مُؤْمِنًا خَطَـــــًٔا فَتَحْرِيْرُ
رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ وَّدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖٓ اِلَّآ اَنْ يَّصَّدَّقُوْا ۭ فَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ عَدُوٍّ
لَّكُمْ وَھُوَ مُؤْمِنٌ فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ۭ وَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَھُمْ
مِّيْثَاقٌ فَدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖ وَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ۚ فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ
شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ ۡ تَوْبَةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِــيْمًا حَكِـيْمًا ۝٩٢ وَمَنْ يَّقْتُلْ مُؤْمِنًا
مُّتَعَمِّدًا فَجَزَاۗؤُهٗ جَهَنَّمُ خٰلِدًا فِيْھَا وَغَضِبَ اللّٰهُ عَلَيْهِ وَلَعَنَهٗ وَاَعَدَّ لَهٗ عَذَابًا عَظِيْمًا
۝٩٣ يٰٓاَيُّھَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا ضَرَبْتُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَتَبَيَّنُوْا وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ اَلْقٰٓى
اِلَيْكُمُ السَّلٰمَ لَسْتَ مُؤْمِنًا ۚ تَبْتَغُوْنَ عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۡ فَعِنْدَ اللّٰهِ مَغَانِمُ
كَثِيْرَةٌ ۭ كَذٰلِكَ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلُ فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ فَتَبَيَّنُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ
خَبِيْرًا ۝٩٤ لَا يَسْتَوِي الْقٰعِدُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ غَيْرُ اُولِي الضَّرَرِ وَالْمُجٰهِدُوْنَ فِيْ
سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۭ فَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ
عَلَي الْقٰعِدِيْنَ دَرَجَةً ۭ وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰي ۭ وَفَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ عَلَي
الْقٰعِدِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝٩٥ۙ دَرَجٰتٍ مِّنْهُ وَمَغْفِرَةً وَّرَحْمَةً ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِـيْمًا
۝٩٦ۧ

अब एक और मआशरती मसला आ रहा है। उस वक़्त दरअसल पूरे अरब के अंदर एक भट्टी दहक रही थी, जगह-जगह जंगें लड़ी जा रही थीं, मैदान लग रहे थे, मअरके (आक्रमण) हो रहे थे। तारीख़ और सीरत की किताबों में तो सिर्फ़ बड़े-बड़े मअरकों और ग़ज़वात का ज़िक्र हुआ है मगर हक़ीक़त में उस वक़्त पूरा मआशरा हालते जंग में था। एक चौमुखी जंग थी जो मुसलसल जारी थी। इन आयात से उस वक़्त के अरब मआशरे की असल सूरते हाल और उस क़बाइली मआशरे के मसाइल की बहुत कुछ अक्क़ासी होती है। इस तरह के माहौल में फ़र्ज़ करें, एक शख़्स ने किसी दूसरे को क़त्ल कर दिया। क़ातिल और मक़्तूल दोनों मुसलमान हैं। क़ातिल कहता है कि मैंने अम्दन (जानबूझ कर) ऐसा नहीं किया, मैंने तो शिकार की ग़र्ज़ से तीर चलाया था मगर इत्तेफ़ाक़ से निशाना चूक गया और उसको जा लगा। तो अब यह मुसलमान को मुसलमान को क़त्ल करना दो तरह का हो सकता है, क़त्ले अम्द या क़त्ले ख़ता। यहाँ इस बारे में वज़ाहत फ़रमाई गई है।

आयत 92

“किसी मोमिन के लिये यह रवा नहीं कि वह एक मोमिन को क़त्ल करे मगर ख़ता के तौर पर।”

وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ اَنْ يَّقْتُلَ مُؤْمِنًا اِلَّا خَطَـًٔا

ख़ता के तौर पर क़त्ल क्या है? निशाना चूक गया और किसी को जा लगा या सड़क पर हादसा हो गया, कोई शख़्स गाड़ी के नीचे आकर मर गया। आप तो उसे मारना नहीं चाहते थे, बस यह सब कुछ आपसे इत्तेफ़ाक़ी तौर पर हो गया। चुनाँचे सऊदी अरब में हादसों के ज़रिये होने वाली मौतों के फ़ैसले इसी क़ानूने क़त्ले ख़ता के तहत होते हैं। वह क़ानून क्या है:

“और जो शख़्स किसी मोमिन को क़त्ल कर दे ग़लती से तो (उसके ज़िम्में है) एक मुसलमान ग़ुलाम की ग़र्दन का आज़ाद कराना”

وَمَنْ قَتَلَ مُؤْمِنًا خَطَـًٔا فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ

“और ख़ून बहा मक़तूल के घरवालों को अदा करना, इल्ला यह कि वह माफ़ कर दें।”

وَّدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖٓ اِلَّآ اَنْ يَّصَّدَّقُوْا

यानि क़त्ले ख़ता के बदले में क़ातिल को क़त्ल नहीं किया जायेगा बल्कि दीयत यानि ख़ून बहा अदा किया जायेगा, यह मक़तूल के वारिसों का हक़ है। और गुनाह के कफ्फ़ारे के तौर पर एक मुसलमान ग़ुलाम को आज़ाद करना होगा, यह अल्लाह का हक़ है।

“और अगर वह (मक़तूल) किसी ऐसे क़बीले से था जिससे तुम्हारी दुश्मनी है और था वह मुसलमान”

فَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ عَدُوٍّ لَّكُمْ وَهُوَ مُؤْمِنٌ

“तो फिर सिर्फ़ एक मुसलमान ग़ुलाम को आज़ाद करना होगा।”

فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ

क्योंकि काफ़िर क़बीले का आदमी था और अगर उसकी दीयत दी जायेगी तो वह उसके घर वालों को मिलेगी जो कि काफ़िर हैं, लिहाज़ा यहाँ दीयत माफ़ हो गई, लेकिन एक गुलाम को आज़ाद करना जो अल्लाह का हक़ था, वह बरक़रार रहेगा।

“और अगर वह (मक़तूल) हो किसी ऐसी क़ौम से जिसके साथ तुम्हारा मुआहिदा है”

وَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ

“तो फिर दीयत भी देनी होगी उसके घर वालों को और एक मोमिन ग़ुलाम भी आज़ाद करना होगा।”

فَدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖ وَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ

गोया यह दो हक़ अलग-अलग हैं। एक तो दीयत है जो मक़तूल के वुरसा का हक़ है, इसमें यहाँ रिआयत नहीं हो सकती, अलबत्ता जो हक़ अल्लाह का अपना है यानि गुनाह के असरात को ज़ाइल करने के लिये एक मोमिन ग़ुलाम का आज़ाद करना, तो इसमें अल्लाह ने नर्मी कर दी, जिसका ज़िक्र आगे आ रहा है।

“फिर जो यह (ग़ुलाम आज़ाद) ना कर सके तो रोज़े रखे दो महीनों के मुतावातिर। यह अल्लाह की तरफ़ से तौबा (क़ुबूल करने का ज़रिया) है, और यक़ीनन अल्लाह तो अलीम व हकीम है।”

فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ تَوْبَةً مِّنَ اللّٰهِ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ۝

अब आगे क़त्ले अम्द के मुताल्लिक़ तफ़सीलात का ज़िक्र है।

आयत 93

“और जो कोई क़त्ल करेगा किसी मोमिन को जानबूझ कर तो उसका बदला जहन्नम है जिसमें वह हमेशा रहेगा”

وَمَنْ يَّقْتُلْ مُؤْمِنًا مُّتَعَمِّدًا فَجَزَآؤُهٗ جَهَنَّمُ خٰلِدًا فِيْهَا

“और अल्लाह का ग़ज़ब उस पर होगा, और अल्लाह ने उस पर लानत फ़रमाई है और उसके लिये बहुत बड़ा अज़ाब तैयार कर रखा है।”

وَغَضِبَ اللّٰهُ عَلَيْهِ وَلَعَنَهٗ وَاَعَدَّ لَهٗ عَذَابًا عَظِيْمًا ۝

जैसा कि आग़ाज़े सूरत में ज़िक्र हुआ था कि हुरमते जान और हुरमते माल के तसव्वुर पर मआशरे की बुनियाद क़ायम है। लिहाज़ा एक मुसलमान का क़त्ल कर देना अल्लाह के यहाँ एक बहुत संजीदा मामला है। यही वजह है कि सूरह मायदा (आयत:32) में क़त्ले नाहक़ को पूरी नौए इंसानी के क़त्ल के मुतरादिफ़ क़रार दिया गया है। इसलिये कि क़ातिल ने हुरमते जान को पामाल करके शजरे तमद्दुन की गोया जड़ काट दी, और उसका यह फ़अल (काम) ऐसे ही है जैसे उसने पूरी इंसानी नस्ल को मौत के घाट उतार दिया। इससे अंदाज़ा कीजिये कि हमारे यहाँ ईमान व इस्लाम कितना कुछ है और इंसानी जान की क़द्र व क़ीमत क्या है। आज हमारे मआशरे में क़त्ले अम्द के वाक़िआत रोज़मर्रा का मामूल बन चुके हैं और इंसानी जान मच्छर-मक्खी की जान की तरह अरज़ा (सस्ती) हो चुकी है।

अब अगली आयत को समझने के लिये अरब के उन मख़सूस हालात को नज़र में रखें जिनमें मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम एक-दूसरे के साथ रहते थे, मुख़्तलिफ़ इलाकों में कुछ लोग दायरा-ए-इस्लाम में दाख़िल हो चुके थे और कुछ अभी कुफ़्र पर क़ायम थे और कोई ज़रिया तमीज़ भी उनमें नहीं था, जगह-जगह मअरके भी हो रहे थे। अब फ़र्ज़ करें किसी इलाक़े में लड़ाई हो रही है, मुसलमान मुजाहिद समझा कि सामने से काफ़िर आ रहा है, मगर जब वह उसे क़त्ल करने के लिये बढ़ा तो उसने आगे से कलमा पढ़ कर दावा किया कि वह मुसलमान है। इस सूरते हाल में मुमकिन है समझा जाये कि उसने जान बचाने के लिये बहाना किया है। इस बारे में हुक्म दिया जा रहा है:

आयत 94

“ऐ अहले ईमान, जब तुम अल्लाह की राह में निकलो तो तहक़ीक़ कर लिया करो”

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اِذَا ضَرَبْتُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَتَبَيَّنُوْا

“और जो शख़्स भी तुम्हारे सामने सलाम पेश करे (या इस्लाम पेश करे) उसको यह मत कहो कि तुम मोमिन नहीं हो।”

وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ اَلْقٰۤى اِلَيْكُمُ السَّلٰمَ لَسْتَ مُؤْمِنًا

तुम उसकी बातिनी कैफ़ियत मालूम नहीं कर सकते। ईमान का ताल्लुक़ चूँकि दिल से है और दिल का हाल सिवाय अल्लाह के और कोई नहीं जान सकता, लिहाज़ा दुनिया में तमाम मामलात का ऐतबार ज़बानी इस्लाम (इक़रार बिल् लिसान) पर ही होगा। अगर कोई शख़्स कलमा पढ़ रहा है और अपने इस्लाम का इज़हार कर रहा है तो आपको उसके अल्फ़ाज़ का ऐतबार करना होगा। इस आयत के पसमंज़र के तौर पर रिवायात में एक

वाक़िये का ज़िक्र मिलता है जो हज़रत उसामा रज़ि० के साथ पेश आया था। किसी सरीये में हज़रत उसामा रज़ि० का एक काफ़िर से दू-बर-दू मुक़ाबला हुआ। जब वह काफ़िर बिल्कुल ज़ेर हो गया और उसको यक़ीन हो गया कि बचने का कोई रास्ता नहीं तो उसने कलमा पढ़ दिया: اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللهُ وَ اَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَسُوْلُ اللهِ. अब ऐसी सूरते हाल में जो कोई भी होता यही समझता कि उसने जान बचाने के लिये बहाना किया है। हज़रत उसामा रज़ि० ने भी यही समझते हुए उस पर नेज़े का वार किया और उसे क़त्ल कर दिया। लेकिन दिल में एक खलिश रही। बाद में उन्होंने रसूल अल्लाह ﷺ से इसका ज़िक्र किया तो आप ﷺ ने फ़रमाया: ((اَقَالَ لَا اِلٰهَ اَلَّا اللهُ وَ قَتَلْتَہٗ؟)) "उसने ला इलाहा इल्लल्लाह कह दिया और तुमने फिर भी उसे क़त्ल कर दिया?" हज़रत उसामा रज़ि० ने जवाब दिया: "या रसूल अल्लाह! उसने तो हथियार के ख़ौफ़ से कलमा पढ़ा था।" आप ﷺ ने फ़रमाया: ((اَفَلَا شَقَقْتَ عَنْ قَلْبِہٖ حَتّٰی تَعْلَمَ اَقَالَھَا اَمْ لَا؟)) "तुमने उसका दिल चीर कर क्यों ना जान लिया कि उसने कलमा दिल से पढ़ा था या नहीं?" हज़रत उसामा रज़ि० कहते हैं कि आप ﷺ ने यह बात मुझसे बार-बार फ़रमाई, यहाँ तक कि मैं ख़्वाहिश करने लगा कि काश मैं आज ही मुसलमान हुआ होता! बाज़ रिवायात में आया है कि आप ﷺ ने इर्शाद फ़रमाया कि ऐ उसामा उस दिन क्या जवाब दोगे जब वह कलमा-ए-शहादत तुम्हारे ख़िलाफ़ मुद्दई होकर आयेगा?

تَبْتَغُوْنَ عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا — *"तुम दुनिया का सामान चाहते हो"*

कि ऐसे शख़्स को काफ़िर क़रार दें, क़त्ल करें और माले ग़नीमत ले लें।

فَعِنْدَ اللّٰهِ مَغَانِمُ كَثِيْرَةٌ — *"अल्लाह के यहाँ बड़ी ग़नीमतें हैं।"*

तुम्हारे लिये बड़ी-बड़ी ममलकतों के अम्वाले ग़नीमत आने वाले हैं। इन छोटी-छोटी चीजों के लिये हुदूदुल्लाह से तजावुज़ ना करो।

كَذٰلِكَ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلُ فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ — *"तुम ख़ुद भी तो पहले ऐसे ही थे, तो अल्लाह ने तुम पर अहसान फ़रमाया है"*

आख़िर एक दौर तुम पर भी ऐसा ही गुज़रा है। तुम सब भी तो नौ मुस्लिम ही हो और एक वक़्त में तुममें से हर शख़्स काफ़िर या मुशरिक ही तो था! फिर अल्लाह ही ने तुम लोगों पर अहसान फ़रमाया कि तुम्हें कलमा-ए-शहादत अता किया और रसूल अल्लाह ﷺ की दावत व तब्लीग़ से बहराहमंद होने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाई। लिहाज़ा अल्लाह का अहसान मानों और इस तरीक़े से लोगों के मामले में इतनी सख़्त रविश इख़्तियार ना करो।

فَتَبَيَّنُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ۝٩٤ — *"तो (देखो) तहक़ीक कर लिया करो। और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे अच्छी तरह बा ख़बर है।"*

अगली आयत मुबारका में जिहाद का लफ़्ज़ बा-मायने क़िताल आया है। जहाँ तक जिहाद की असल रूह का ताल्लुक़ है तो एक मोमिन गोया हर वक़्त जिहाद में मसरूफ़ है। दावत व तब्लीग़ भी जिहाद है, अपने नफ़्स के ख़िलाफ़ इताअते इलाही भी जिहाद है। अज़रूए हदीसे नबवी: ((اَلْمُجَاهِدُ مَنْ جَاهَدَ نَفْسَہٗ)) बल्कि रसूल अल्लाह ﷺ से पूछा गया: اَیُّ الْجِهَادِ اَفْضَلُ؟ "सबसे अफ़ज़ल जिहाद कौनसा है?" तो आपने फ़रमाया: ((اَنْ تُجَاهِدَ نَفْسَکَ وَ هَوَاکَ فِیْ ذَاتِ اللهِ عَزَّ وَ جَلَّ)) "यह कि तुम अपने नफ़्स और अपनी ख़्वाहिशात के ख़िलाफ़ जिहाद करो उन्हें अल्लाह का मुतीअ बनाने के लिये।" चुनाँचे जिहाद की बहुत सी मंजिलें हैं, जिनमें से आख़री मंजिल क़िताल है। ताहम जिहाद और क़िताल के अल्फ़ाज़ क़ुरान में एक-दूसरे की जगह पर भी इस्तेमाल हुए हैं। क़ुरान में अल्फ़ाज़ के तीन ऐसे जोड़े हैं जिनमें से हर लफ़्ज़ अपने जोड़े के दूसरे लफ़्ज़ की जगह अक्सर इस्तेमाल हुआ है। उनमें से एक जोड़ा तो यही है, यानि जिहाद और क़िताल के अल्फ़ाज़, जबकि दूसरे दो जोड़े हैं "मोमिन व मुस्लिम" और "नबी व रसूल।"

आयत 95

لَا يَسْتَوِى الْقٰعِدُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ غَيْرُ أُولِى الضَّرَرِ وَالْمُجٰهِدُوْنَ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ

"बराबर नहीं हैं अहले ईमान में से बैठे रहने वाले बग़ैर उज़्र के और वह लोग जो अल्लाह की राह में जिहाद (क़िताल) के लिये निकलते हैं अपनी जानों और मालों के साथ।"

فَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ دَرَجَةً

"अल्लाह ने फ़ज़ीलत दी है उन मुजाहिदों को जो अपनी जानों और मालों से जिहाद करने वाले हैं, बैठे रहने वालों पर, एक बहुत बड़े दर्जे की।"

دَرَجَةً की तन्कीर تفخيم के लिये है, यानि बहुत बड़ा दर्जा। यहाँ क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह के लिये निकलने की बात हो रही है कि जो किसी माक़ूल उज़्र के बग़ैर क़िताल के लिये नहीं निकलता वह उसके बराबर हरग़िज़ नहीं हो सकता जो क़िताल कर रहा है। अग़र कोई अंधा है, देखने से माज़ूर है या कोई लँगड़ा है, चल नहीं सकता, ऐसे माज़ूर क़िस्म के लोग अगर क़िताल के लिये ना निकलें तो कोई हर्ज नहीं। लेकिन ऐसे लोग जिनको कोई ऐसा उज़्र नहीं है, फिर भी वह बैठे रहें, यहाँ उन्हीं लोगों का ज़िक्र हो रहा है कि वह दर्जे में मुजाहिदीन के बराबर हरगिज़ नहीं हो सकते। और यह भी नोट कर लीजिये कि यह ऐसे क़िताल की बात हो रही है जिसकी हैसियत इख़्तियारी (optional) हो, लाज़िमी क़रार ना दिया गया हो। जब इस्लामी रियासत की तरफ़ से क़िताल के लिये नफ़ीरे आम हो जाये तो माज़ूरों के सिवा सबके लिये निकलना लाज़िम हो जाता है। और यह भी याद रहे कि क़िताल के लिये पहली दफ़ा नफ़ीरे आम ग़ज़वा-ए-तबूक (सन् 9 हिजरी) में हुई थी। इससे पहले क़िताल के बारे में सिर्फ़ तरगीब (persuasion) थी कि निकलो अल्लाह की राह में, हुक्म नहीं था। लिहाज़ा कोई जवाब तलबी भी नहीं थी। कोई चला गया, कोई नहीं गया, कोई गिरफ्त नहीं थी। लेकिन ग़ज़वा-ए-तबूक के लिये नफ़ीरे आम हुई थी, बाक़ायदा एक हुक्म था, लिहाज़ा जो लोग नहीं निकले उनसे वज़हें तलब की गई, उनका मुआख़्ज़ा किया गया और उनको सज़ाएँ भी दी गयीं। तो यहाँ चूँकि इख़्तियारी क़िताल की बात हो रही है इसलिये यह नहीं कहा जा रहा कि उनको पकड़ो और सज़ा दो, बल्कि यह बताया जा रहा है कि क़िताल करने वाले मुजाहिदीन अल्लाह की नज़र में बहुत अफ़ज़ल हैं। इससे पहले ऐसे क़िताल के लिये इसी सूरत (आयत:84) में { وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ } का हुक्म है, यानि मोमिनों को क़िताल पर उकसाइये, तरगीब दीजिये, आमादा कीजिये। लेकिन यहाँ वाज़ेह अंदाज़ में बताया जा रहा है कि क़िताल करने वाले और ना करने वाले बराबर नहीं हो सकते।

وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى

"(अग़रचे) सबके लिये अल्लाह की तरफ़ से अच्छा वादा है।"

चूँकि अभी क़िताल फ़र्ज़ नहीं था, नफ़ीरे आम नहीं थी, सबका निकलना लाज़िम नहीं किया गया था, इसलिये फ़रमाया गया कि तमाम मोमिनों को उनके आमाल के मुताबिक़ अच्छा अजर दिया जायेगा। क़िताल के लिये ना निकलने वालों ने अगर इतनी हिम्मत नहीं की और वह कमतर मक़ाम पर क़ानेअ (संतुष्ट) हो गये हैं तो ठीक है, अल्लाह तआला की तरफ़ से इस सिलसिले में उन पर कोई गिरफ़्त नहीं होगी।

وَفَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ أَجْرًا عَظِيْمًا ﴿٩٥﴾

"लेकिन फ़ज़ीलत दी है अल्लाह तआला ने मुजाहिदों को बैठे रहने वालों पर एक अज्रे अज़ीम की (सूरत में)।"

.

आयत 96

دَرَجٰتٍ مِّنْهُ وَمَغْفِرَةً وَّرَحْمَةً ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ۝ۙ96

“(उनके लिये) उसकी तरफ़ से बुलंद दरजात भी होंगे और मग़फ़िरत व रहमत भी। और यक़ीनन अल्लाह तआला बख़्शने वाला, बहुत रहम करने वाला है।”

आयात 97 से 100 तक

اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَفّٰىهُمُ الْمَلٰۗىِٕكَةُ ظَالِمِيْٓ اَنْفُسِهِمْ قَالُوْا فِيْمَ كُنْتُمْ ۭ قَالُوْا كُنَّا
مُسْتَضْعَفِيْنَ فِي الْاَرْضِ ۭ قَالُوْٓا اَلَمْ تَكُنْ اَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُھَاجِرُوْا فِيْھَا
ۭ فَاُولٰۗىِٕكَ مَاْوٰىھُمْ جَهَنَّمُ ۭ وَسَاۗءَتْ مَصِيْرًا ۝ۙ97 اِلَّا الْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ
وَالنِّسَاۗءِ وَالْوِلْدَانِ لَا يَسْتَطِيْعُوْنَ حِيْلَةً وَّلَا يَهْتَدُوْنَ سَبِيْلًا ۝ۙ98 فَاُولٰۗىِٕكَ
عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّعْفُوَ عَنْھُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَفُوًّا غَفُوْرًا ۝99 وَمَنْ يُّھَاجِرْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ
يَجِدْ فِي الْاَرْضِ مُرٰغَمًا كَثِيْرًا وَّسَعَةً ۭ وَمَنْ يَّخْرُجْ مِنْۢ بَيْتِهٖ مُھَاجِرًا اِلَى اللّٰهِ
وَرَسُوْلِهٖ ثُمَّ يُدْرِكْهُ الْمَوْتُ فَقَدْ وَقَعَ اَجْرُهٗ عَلَي اللّٰهِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ۝ۧ100

अब उन लोगों का ज़िक्र आ रहा है जो हिजरत करने में पसोपेश (टाल-मटोली) कर रहे थे, इस सिलसिले में उन्हें कोई उज़्र भी मानेअ (रुकावट) नहीं था, मगर फिर भी वह अपने क़बीले या मक्का शहर में अपने घरों में आराम से बैठे थे।

आयत 97

اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَفّٰىهُمُ الْمَلٰۗىِٕكَةُ ظَالِمِيْٓ اَنْفُسِهِمْ

“यक़ीनन वह लोग कि जिनको फ़रिश्ते इस हाल में क़ब्ज़ करेंगे कि वह अपनी जानों पर ज़ुल्म कर रहे थे”

यानि उन्होंने हिजरत नहीं की थी, इस सिलसिले में रसूल अल्लाह ﷺ की इताअत नहीं की थी। आख़िर मौत तो आनी है, लिहाज़ा फ़रिश्ते जब उनकी रूहें क़ब्ज़ करेंगे तो उनके साथ इस तरह का मकालमा करेंगे:

قَالُوْا فِيْمَ كُنْتُمْ ۭ

“वह उनसे कहेंगे यह तुम किस हाल में थे।”

तुमने ईमान का दावा तो किया था, लेकिन जब रसूल अल्लाह ﷺ ने हिजरत का हुक्म दिया तो हिजरत क्यों नहीं की? तुम्हें क्या हो गया था?

قَالُوْا كُنَّا مُسْتَضْعَفِيْنَ فِي الْاَرْضِ ۭ

“वह कहेंगे हम मजबूर और कमज़ोर बना दिये गये थे इस ज़मीन में।”

قَالُوْٓا اَلَمْ تَكُنْ اَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُھَاجِرُوْا فِيْھَا ۭ

“वह (फ़रिश्ते) कहेंगे क्या अल्लाह की ज़मीन कुशादा नहीं थी कि तुम उसमें हिजरत करते?”

فَاُولٰۗىِٕكَ مَاْوٰىھُمْ جَهَنَّمُ ۭ وَسَاۗءَتْ مَصِيْرًا ۝ۙ97

“तो यह वह लोग हैं जिनका ठिकाना जहन्नम है, और वह बहुत बुरी जगह है ठहरने की।”

आयत 98

اِلَّا الْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَآءِ وَالْوِلْدَانِ

“सिवाय उन मर्दों, औरतों और बच्चों के जिनको वाक़िअतन दबा लिया गया हो”

जिन लोगों को कमज़ोर समझ कर दबा लिया गया हो, वाक़िअतन ज़ंजीरों में जकड़ कर घरों में बंद कर दिया गया हो, उनका मामला और है। या फिर कोई औरत है जिसके लिये तन्हा सफ़र करना मुमकिन नहीं। वैसे तो ऐसी औरतें भी थी जिन्होंने तन्हा हिजरतें कीं, लेकिन हर एक के लिये तो ऐसा मुमकिन नहीं था।

لَا يَسْتَطِيْعُوْنَ حِيْلَةً وَّلَا يَهْتَدُوْنَ سَبِيْلًا

“ना तो वह कोई तदबीर कर सकते हैं और ना वह रास्ता जानते हैं।”

आयत 99

فَاُولٰۗىِٕكَ عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّعْفُوَ عَنْھُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَفُوًّا غَفُوْرًا

“बईद नहीं कि ऐसे लोगों को अल्लाह तआला माफ़ फ़रमा दे, और अल्लाह वाक़िअतन बख़्शने वाला और माफ़ फ़रमाने वाला है।”

ऐसे बेबस और लाचार मर्दों, बच्चों और औरतों के लिये इसी सूरह (आयत:75) में हुक्म हुआ था कि उनके लिये क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह करो और उन्हें जाकर छुड़ाओ। लेकिन जो लोग हिजरत के इस वाज़ेह हुक्म के बाद भी बग़ैर उज़्र के बैठे रहे हैं उनके बारे में मुसलमानों को बताया गया है कि वह मुनाफ़िक़ हैं, उनसे तुम्हारा कोई ताल्लुक़ नहीं, जब तक कि वह हिजरत ना करें। बल्कि क़िताल के मामले में वह बिल्कुल कुफ़्फ़ार के बराबर हैं।

आयत 100

وَمَنْ يُّھَاجِرْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

“और जो कोई हिजरत करेगा अल्लाह की राह में”

يَجِدْ فِي الْاَرْضِ مُرٰغَمًا كَثِيْرًا وَّسَعَةً ۭ

“वह पायेगा ज़मीन में बड़े ठिकाने और बड़ी वुसअत।”

जैसे सूरह अन्कबूत में फ़रमाया: { يٰعِبَادِيَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّ اَرْضِيْ وَاسِعَةٌ فَاِيَّايَ فَاعْبُدُوْنِ} (आयत:56) “ऐ मेरे वह बन्दों जो ईमान लाये हो, मेरी ज़मीन बहुत कुशादा है, बस तुम लोग मेरी ही बंदगी करो!” अगर यहाँ अपने वतन में अल्लाह की बंदगी नहीं कर सकते हो तो कहीं और चले जाओ।

وَمَنْ يَّخْرُجْ مِنْۢ بَيْتِهٖ مُھَاجِرًا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ثُمَّ يُدْرِكْهُ الْمَوْتُ

“और जो कोई अपने घर से निकल खड़ा हुआ हिजरत के लिये अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़, फिर उसे मौत ने आ लिया”

فَقَدْ وَقَعَ اَجْرُهٗ عَلَي اللّٰهِ ۭ

“तो उसका अजर अल्लाह के ज़िम्मे साबित हो गया।”

यानि जिस किसी ने भी हिजरत की, फ़ी सबीलिल्लाह, दौलत के लिये या हुसूले दुनिया के लिये नहीं, बल्कि अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की रज़ाजोई के लिये, वह असल हिजरत है। हदीस में इसकी मज़ीद वज़ाहत मिलती है:

اِنَّمَا الْاَعْمَالُ بِنِّيَّاتِ وَ اِنَّمَا لِكُلِّ امْرِيئٍ مَا نَوٰى، مَمَنْ كَانَتْ هِجْرَتُهٗ اِلَى اللّٰهِ وَ رَسُوْلِهٖ فَهِجْرَتُهٗ اِلَى اللّٰهِ وَ رَسُوْلِهٖ، وَ مَنْ كَانَتْ هِجْرَتُهٗ لِدُنْيَا يُصِيْبُهَا اَوِامْرَاَةٍ يَنْكِحُهَا فَهِجْرَتُهٗ اِلٰى مَا هَاجَرَ اِلَيْهِ

"आमाल का दारोमदार नीयतों पर ही है और बिलाशुबह हर इंसान के लिये वही कुछ है जिसकी उसने नीयत की। पस जिसने हिजरत की अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़ तो वाक़ई उसकी हिजरत अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़ है, और जिसने हिजरत की दुनिया कमाने के लिये या किसी औरत से शादी रचाने के लिये तो उसकी हिजरत उसी चीज़ की तरफ़ शुमार होगी जिसका उसने क़सद (इरादा) किया।"

चुनाँचे जिसने अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ हिजरत की, ख़ुलूसे नीयत के साथ घर से निकल खड़ा हुआ और रास्ते ही में फ़ौत हो गया, मदीना मुनव्वरा नहीं पहुँच सका, हुज़ूर ﷺ के क़दमों तक उसकी रसाई नहीं हो सकी, वह अपना मक़सूद हासिल नहीं कर सका, तो फिर भी वह कामयाब व कामरान है। अल्लाह तआला उसकी नीयत के मुताबिक़ उसे हिजरत का अजर ज़रूर अता फ़रमायेगा।

"और यक़ीनन अल्लाह बख़्शने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।" وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ۝

आयात 101 से 104 तक

وَاِذَا ضَرَبْتُمْ فِي الْاَرْضِ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَقْصُرُوْا مِنَ الصَّلٰوةِ ۖ اِنْ خِفْتُمْ
اَنْ يَّفْتِنَكُمُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ؕ اِنَّ الْكٰفِرِيْنَ كَانُوْا لَكُمْ عَدُوًّا مُّبِيْنًا ۝ وَاِذَا كُنْتَ
فِيْهِمْ فَاَقَمْتَ لَهُمُ الصَّلٰوةَ فَلْتَقُمْ طَآىِٕفَةٌ مِّنْهُمْ مَّعَكَ وَلْيَاْخُذُوْٓا اَسْلِحَتَهُمْ
فَاِذَا سَجَدُوْا فَلْيَكُوْنُوْا مِنْ وَّرَآىِٕكُمْ ۪ وَلْتَاْتِ طَآىِٕفَةٌ اُخْرٰى لَمْ يُصَلُّوْا فَلْيُصَلُّوْا
مَعَكَ وَلْيَاْخُذُوْا حِذْرَهُمْ وَاَسْلِحَتَهُمْ ۚ وَدَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ تَغْفُلُوْنَ عَنْ
اَسْلِحَتِكُمْ وَاَمْتِعَتِكُمْ فَيَمِيْلُوْنَ عَلَيْكُمْ مَّيْلَةً وَّاحِدَةً ؕ وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ
كَانَ بِكُمْ اَذًى مِّنْ مَّطَرٍ اَوْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَنْ تَضَعُوْٓا اَسْلِحَتَكُمْ ۚ وَخُذُوْا حِذْرَكُمْ ؕ
اِنَّ اللّٰهَ اَعَدَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ۝ فَاِذَا قَضَيْتُمُ الصَّلٰوةَ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ قِيٰمًا
وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِكُمْ ۚ فَاِذَا اطْمَاْنَنْتُمْ فَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ ۚ اِنَّ الصَّلٰوةَ كَانَتْ عَلَى
الْمُؤْمِنِيْنَ كِتٰبًا مَّوْقُوْتًا ۝ وَلَا تَهِنُوْا فِي ابْتِغَآءِ الْقَوْمِ ؕ اِنْ تَكُوْنُوْا تَاْلَمُوْنَ
فَاِنَّهُمْ يَاْلَمُوْنَ كَمَا تَاْلَمُوْنَ ۚ وَتَرْجُوْنَ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا يَرْجُوْنَ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا
حَكِيْمًا ۝

इस रुकूअ में फिर शरीअत के कुछ अहकाम और इबादात की कुछ तफ़ासील हैं। गोआ ख़िताब का रुख़ अब फिर अहले ईमान की तरफ़ है।

आयत 101

"और (ऐ मुसलमानों!) जब तुम ज़मीन में सफ़र करो तो तुम पर कोई गुनाह नहीं अगर तुम नमाज़ को कुछ कम कर लिया करो" وَاِذَا ضَرَبْتُمْ فِي الْاَرْضِ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَقْصُرُوْا مِنَ الصَّلٰوةِ ۖ

"अगर तुम्हें अंदेशा हो कि काफ़िर तुम्हें नुक़सान पहुँचाऐंगे।" اِنْ خِفْتُمْ اَنْ يَّفْتِنَكُمُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ؕ

"यक़ीनन यह काफ़िर तुम्हारे खुले दुश्मन हैं।" اِنَّ الْكٰفِرِيْنَ كَانُوْا لَكُمْ عَدُوًّا مُّبِيْنًا ۝

यह तो है हालते सफ़र में क़सरे सलाह (नमाज़) का हुक्म। लेकिन जंग की हालत में क़सर यानि सलातुल ख़ौफ़ का तरीक़ा अगली आयत में मज़कूर है। हालते जंग में जब पूरे लश्कर का एक साथ नमाज़ पढ़ना मुमकिन ना

रहे तो गिरोहों की शक्ल में नमाज़ अदा करने की इजाज़त है। लेकिन ऐसी सूरत में जब हुज़ूर ﷺ ख़ुद भी लश्कर में मौजूद होते तो कोई एक गिरोह ही आप ﷺ के साथ नमाज़ पढ़ सकता था, जबकि दूसरे गिरोह के लोगों को लाज़िमन महरूमी का अहसास होता। लिहाज़ा इस मसले के हल के लिये सलातुल ख़ौफ़ अदा करने की बहुत उम्दा तदबीर बताई गयी।

आयत 102

وَاِذَا كُنْتَ فِيْهِمْ فَاَقَمْتَ لَهُمُ الصَّلٰوةَ

"और (ऐ नबी ﷺ) जब आप ﷺ उनके दरमियान मौजूद हों और (हालते जंग में) उन्हें नमाज़ पढ़ाने खड़े हों"

فَلْتَقُمْ طَآئِفَةٌ مِّنْهُمْ مَّعَكَ وَلْيَاْخُذُوْٓا اَسْلِحَتَهُمْ

"तो उनमें से एक गिरोह को खड़ा होना चाहिये आप ﷺ के साथ, और वह अपना अस्लाह लिये हुए हों।"

فَاِذَا سَجَدُوْا فَلْيَكُوْنُوْا مِنْ وَّرَآئِكُمْ

"फिर जब वह सज्दा कर चुकें तो तुम्हारे पीछे हो जाएँ"

وَلْتَاْتِ طَآئِفَةٌ اُخْرٰى لَمْ يُصَلُّوْا فَلْيُصَلُّوْا مَعَكَ

"और आए दूसरा गिरोह जिन्होंने अभी नमाज़ नहीं पढ़ी और वह आप ﷺ के साथ नमाज़ पढ़ें"

यह हुक्म सलातुल ख़ौफ़ के बारे में है। इसकी अमली सूरत यह थी कि हुज़ूर ﷺ ने एक रकअत नमाज़ पढ़ा दी और उसके बाद आप ﷺ बैठे रहे, दूसरी रकअत के लिये खड़े नहीं हुए, जबकि मुक़तदियों ने दूसरी रकअत ख़ुद अदा कर ली। दो रकअतें पूरी करके वह महाज़ पर वापस चले गये तो दूसरे गिरोह के लोग जो अब तक नमाज़ में शरीक नहीं हुए थे, नमाज़ के लिए हुज़ूर ﷺ के पीछे आकर खड़े हो गए। अब हुज़ूर ﷺ ने दूसरी रकअत इस गिरोह के लोगों की मौजूदगी में पढ़ाई। इसके बाद हुज़र ﷺ ने सलाम फेर दिया, लेकिन मुक़तदियों ने अपनी दूसरी रकअत इन्फ़रादी तौर पर अदा कर ली। इस तरीक़े से लश्कर में से कोई शख़्स भी हुज़ूर ﷺ की इमामत के शर्फ़ और सआदत से महरूम ना रहा।

وَلْيَاْخُذُوْا حِذْرَهُمْ وَاَسْلِحَتَهُمْ ۚ

"और उनको भी चाहिये कि वह अपनी हिफ़ाज़त का सामान और अपना अस्लाह अपने साथ रखें।"

وَدَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ تَغْفُلُوْنَ عَنْ اَسْلِحَتِكُمْ وَاَمْتِعَتِكُمْ فَيَمِيْلُوْنَ عَلَيْكُمْ مَّيْلَةً وَّاحِدَةً ۭ

"यह काफ़िर लोग तो इसी ताक में रहते हैं कि तुम जैसे ही अपने अस्लाह और साज़ो सामान से ज़रा गाफ़िल हो, तो वह तुम पर एक दम टूट पड़ें।"

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ كَانَ بِكُمْ اَذًى مِّنْ مَّطَرٍ اَوْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَنْ تَضَعُوْٓا اَسْلِحَتَكُمْ ۚ

"और तुम पर कोई गुनाह नहीं है कि अगर तुम्हें कोई तकलीफ़ हो बारिश की वजह से या तुम बीमार हो जाओ और (ऐसी सूरतों में) तुम अपना अस्लाह उतार कर रख दो।"

وَخُذُوْا حِذْرَكُمْ ۭ

"अलबत्ता अपना बचाव ज़रूर कर लिया करो।"

अगर तलवार, नेज़ा वग़ैरह जिस्म से बंधे हुए हों और इस हालत में नमाज़ पढ़ना मुश्किल हो तो यह असला वग़ैरह खोल कर अलैहदा रख देने में कोई हर्ज नहीं, बशर्ते कि जंग के हालात इजाज़त देते हों, लेकिन ढ़ाल वग़ैरह

अपने पास ज़रूर मौजूद रहे ताकि अचानक कोई हमला हो तो इंसान अपने आपको उस फ़ौरी हमले से बचा सके और अपने हथियार संभाल सके।

إِنَّ اللّٰهَ أَعَدَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ﴿١٠٢﴾

"यक़ीनन अल्लाह ने काफ़िरों के लिये बहुत ज़िल्लत आमेज़ अज़ाब तैयार कर रखा है।"

आयत 103

فَإِذَا قَضَيْتُمُ الصَّلٰوةَ

"फिर जब तुम (इस तरीक़े से) नमाज़ अदा कर लो"

فَاذْكُرُوا اللّٰهَ قِيٰمًا وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِكُمْ

"तो फिर ज़िक्र करो अल्लाह का खड़े हुए, बैठे हुए और लेटे हुए।"

चलते-फिरते, उठते-बैठते, सवारी पर, पैदल चलते हुए हर हालत में अल्लाह का ज़िक्र जारी रहना चाहिये। यह ज़िक्रे कसीर सिर्फ़ नमाज़ के साथ मख़्सूस नहीं बल्कि हर वक़्त और हर हालत में इसका अहतमाम होना चाहिये। जैसे सूरह अल् जुमा (आयत:10) में हुक्म दिया गया है: { فَإِذَا قُضِيَتِ الصَّلٰوةُ فَانْتَشِرُوْا فِي الْأَرْضِ وَابْتَغُوْا مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثِيْرًا لَّعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ} "फिर जब नमाज़ पूरी हो जाए तो ज़मीन में फैल जाओ और अल्लाह का फ़ज़ल तलाश करो, और अल्लाह को कसरत से याद करो ताकि तुम फ़लाह पा जाओ।" चुनाँचे नमाज़ के बाद भी और कारोबारी ज़िन्दगी की मसरूफ़ियात के दौरान भी ज़िक्रे कसीर ज़ारी रखो। हर हाल में अल्लाह को याद करते रहो, उसके ज़िक्र में मशगूल रहो। दुआ-ए-मासूरह और दुआ-ए-मसनून का अहतमाम करो, अपनी ज़बानों, ज़हनों और दिलों को उसके ज़िक्र से तरोताज़ा रखो।

فَإِذَا اطْمَأْنَنْتُمْ فَأَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ

"फिर जब तुम्हें अमन हासिल हो जाए तो फिर नमाज़ को क़ायम करो (तमाम आदाब व शराइत के साथ)।"

यानि नमाज़ की यह शक्ल (सलातुल ख़ौफ़) सिर्फ़ इज़तरारी (emergency) हालत में होगी, मगर जब ख़ौफ़ जाता रहे और हालते अमन बहाल हो जाए तो नमाज़ को शरीअत के अहकाम और आदाब के ऐन मुताबिक़ अदा करना ज़रूरी है।

إِنَّ الصَّلٰوةَ كَانَتْ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ كِتٰبًا مَّوْقُوْتًا ﴿١٠٣﴾

"यक़ीनन नमाज़ अहले ईमान पर फ़र्ज़ की गई है वक़्त की पाबंदी के साथ।"

यानि नमाज़ की फ़र्ज़ियत बाक़ायदा उसके अवक़ात के साथ है। नमाज़ के अवक़ात के ज़िमन में एक हदीस में तफ़सील मज़कूर है कि हज़रत जिब्रील अलै० ने दो दिन रसूल अल्लाह ﷺ को नमाज़ पढ़ाई। एक दिन पाँचो नमाज़ें अव्वल वक़्त में जबकि दूसरे दिन तमाम नमाज़ें आख़िर वक़्त में पढ़ाईं और बताया कि नमाज़ों के अवक़ात इन हदों के माबैन (बीच) हैं।

आयत 104

وَلَا تَهِنُوْا فِي ابْتِغَاءِ الْقَوْمِ

"और उस दुश्मन गिरोह का पीछा करने में कमज़ोरी ना दिखाओ।"

हक़ व बातिल की जंग अब फ़ैसलाकुन मरहले में दाख़िल हो रही हैं। इस आख़री मरहले में आकर थक ना जाना और दुश्मन का पीछा करने में सुस्त मत पड़ जाना, हिम्मत ना हार देना।

"अग़र तुम्हें तकलीफ़ पहुँचती है तो तुम्हारी तरह उन्हें भी तो तकलीफ़ पहुँचती है।"

اِنْ تَكُوْنُوْا تَاْلَمُوْنَ فَاِنَّهُمْ يَاْلَمُوْنَ كَمَا تَاْلَمُوْنَ ۚ

यह बड़ा प्यारा अंदाज़ है कि इस कशमकश में अगर तुम लोग नुक़सान उठा रहे हो तो क्या हुआ? तुम्हारे दुश्मन भी तो वैसे ही नुक़सान से दो-चार हो रहे हैं, उन्हें भी तो तकालीफ़ पहुँच रही हैं, वह भी तो ज़ख़्म पर ज़ख़्म खा रहे हैं, उनके लोग भी तो मर रहे हैं।

"और तुम अल्लाह से ऐसी उम्मीदें रखते हो जैसी उम्मीदें वह नहीं रखते।"

وَتَرْجُوْنَ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا يَرْجُوْنَ ۭ

तुम्हें तो जन्नत की उम्मीद है, अल्लाह तआला से मग़फ़िरत की उम्मीद है, जबकि उन्हें ऐसी कोई उम्मीद नहीं है। लिहाज़ा इस ऐतबार से तुम्हें तो उनसे कहीं बढ़ कर पुरजोश होना चाहिये। सूरह आले इमरान की आख़री आयत में भी अहले ईमान को मुख़ातिब करके फ़रमाया गया है (आयत:200): {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اصْبِرُوْا وَصَابِرُوْا وَرَابِطُوْا ۣ} "ऐ ईमान वालो, सब्र से काम लो और सब्र में अपने दुश्मनों से बढ़ जाओ और मरबूत (एक साथ) रहो।" तो आप लोगों को सब्र व इस्तकामत में उनसे बहुत आगे होना चाहिये, क्योंकि तुम्हारा सहारा तो अल्लाह है: {وَاصْبِرْ وَمَا صَبْرُكَ اِلَّا بِاللّٰهِ} (अल् नहल:127) "आप सब्र कीजिये, और आपका सब्र तो बस अल्लाह ही की तौफ़ीक़ से है।" तुम्हारे दुश्मनों के तो मनगढ़त क़िस्म के ख़ुदा हैं। उनके देवताओं और देवियों की ख़ुद उनके दिलों में कोई हक़ीक़ी क़द्र व क़ीमत नहीं है, फिर भी वह अपने बातिल मअबूदों के लिये अपनी जान जोख़िम में डाल रहे हैं तो ऐ मुसलमानों! तुम्हें तो उनसे कई गुना ज़्यादा क़ुर्बानियों के लिये हर वक़्त तैयार रहना चाहिये।

"और यक़ीनन अल्लाह अलीम भी है और हकीम भी।"

وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ○١٠٤

यह चंद आयतें तो थीं अहले ईमान से ख़िताब में। इसके बाद अगले रुकूअ में फिर मुनाफ़िक़ीन का ज़िक्र आ रहा है।

आयात 105 से 115 तक

اِنَّآ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ لِتَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ بِمَآ اَرٰىكَ اللّٰهُ ۭ وَلَا تَكُنْ
لِّلْخَاۗىِٕنِيْنَ خَصِيْمًا ○١٠٥ۙ وَّاسْتَغْفِرِ اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ○١٠٦ۚ وَلَا تُجَادِلْ
عَنِ الَّذِيْنَ يَخْتَانُوْنَ اَنْفُسَهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ خَوَّانًا اَثِيْمًا ○١٠٧ۚۙ يَّسْتَخْفُوْنَ
مِنَ النَّاسِ وَلَا يَسْتَخْفُوْنَ مِنَ اللّٰهِ وَھُوَ مَعَھُمْ اِذْ يُبَيِّتُوْنَ مَا لَا يَرْضٰى مِنَ
الْقَوْلِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطًا ○١٠٨ ھٰٓاَنْتُمْ ھٰٓؤُلَاۗءِ جٰدَلْتُمْ عَنْھُمْ فِي الْحَيٰوةِ
الدُّنْيَا ۣ فَمَنْ يُّجَادِلُ اللّٰهَ عَنْھُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَمْ مَّنْ يَّكُوْنُ عَلَيْهِمْ وَكِيْلًا ○١٠٩
وَمَنْ يَّعْمَلْ سُوْۗءًا اَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهٗ ثُمَّ يَسْتَغْفِرِ اللّٰهَ يَجِدِ اللّٰهَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ○١١٠ وَمَنْ
يَّكْسِبْ اِثْمًا فَاِنَّمَا يَكْسِبُهٗ عَلٰي نَفْسِهٖ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ○١١١ وَمَنْ يَّكْسِبْ
خَطِيْۗــــــَٔةً اَوْ اِثْمًا ثُمَّ يَرْمِ بِهٖ بَرِيْۗــــــًٔا فَقَدِ احْتَمَلَ بُهْتَانًا وَّاِثْمًا مُّبِيْنًا ○١١٢ۧ وَلَوْلَا فَضْلُ
اللّٰهِ عَلَيْكَ وَرَحْمَتُهٗ لَهَمَّتْ طَّاۗىِٕفَةٌ مِّنْھُمْ اَنْ يُّضِلُّوْكَ ۭ وَمَا يُضِلُّوْنَ اِلَّآ اَنْفُسَھُمْ
وَمَا يَضُرُّوْنَكَ مِنْ شَيْءٍ ۭ وَاَنْزَلَ اللّٰهُ عَلَيْكَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ
تَعْلَمُ ۭ وَكَانَ فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ عَظِيْمًا ○١١٣ لَا خَيْرَ فِيْ كَثِيْرٍ مِّنْ نَّجْوٰىھُمْ اِلَّا مَنْ اَمَرَ

بِصَدَقَةٍ اَوْ مَعْرُوْفٍ اَوْ اِصْلَاحٍۭ بَيْنَ النَّاسِ ۭ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ ابْتِغَاۗءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا ١١٤؁ وَمَنْ يُّشَاقِقِ الرَّسُوْلَ مِنْۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدٰى وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيْلِ الْمُؤْمِنِيْنَ نُوَلِّهٖ مَا تَوَلّٰى وَنُصْلِهٖ جَهَنَّمَ ۭ وَسَاۗءَتْ مَصِيْرًا ١١٥؀

आयत 105

اِنَّآ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ لِتَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ بِمَآ اَرٰىكَ اللّٰهُ ۭ

“(ऐ नबी ﷺ) यक़ीनन हमने आप ﷺ पर किताब नाज़िल की है हक़ के साथ ताकि आप ﷺ लोगों के माबैन फ़ैसला करें उसके मुताबिक़ जो अल्लाह ने आपको दिखाया है”

यानि एक तो अल्लाह ने अपने रसूल ﷺ को किताब दी है, क़ानून दिया है, इसके साथ आप ﷺ को बसीरते ख़ास दी है। मसलन अदालत में एक जज बैठा है, उसके सामने क़ानून की किताब है, मुकदमें से मुताल्लिक़ मुतलक़ा रिकार्ड है, शहादतें हैं, अब उसकी अपनी अक़्ल (sixth sense) और क़ुव्वते फ़ैसला भी होती है, जिसको बरूएकार (इस्तेमाल) लाकर वह फ़ैसला करता है। यही वह चीज़ है जिसके बारे में अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि जैसा हम आप ﷺ को दिखाते हैं उसके मुताबिक़ आप ﷺ फ़ैसला करें।

وَلَا تَكُنْ لِّلْخَاۗىِٕنِيْنَ خَصِيْمًا ١٠٥؀ۙ

“और आप ﷺ ख्यानत करने वालों की तरफ़ से झगड़ने वाले ना बने।”

यानि आप ﷺ उनकी तरफ़ से वकालत ना फ़रमायें। एक शख्स जो कहने को तो मुसलमान है लेकिन है ख़ाइन, आप ﷺ को उसकी तरफ़दारी नहीं करनी चाहिये। इसके पसमंज़र में दरअसल एक वाक़या है। एक मुनाफ़िक़ ने किसी मुसलमान के घर में चोरी के लिये नक़ब (सेंध) लगाई और वहाँ से आटे का एक थैला और कुछ अस्लाह चुरा लिया। आटे के थैले में सुराख़ था, जब वहाँ से वह अपने घर की तरफ़ चला तो सुराख़ में से आटा थोड़ा-थोड़ा गिरता गया। इस तरह उसके रास्ते और घर की निशानदेही होती गई, मगर उसे ख़बर नहीं थी कि आटे की लकीर उसका राज़ फ़ाश कर रहीं है। घर पहुँच कर उसे ख़्याल आया कि मुमकिन है मुझ पर शक़ हो जाये, चुनाँचे उसने उसी वक़्त जाकर वह सामान एक यहूदी के यहाँ अमानतन रखवा दिया, लेकिन आटे का निशान वहाँ भी पहुँच गया अगले रोज़ जब तलाश शुरू हुई तो आटे की लकीर के ज़रिये लोग खोज लगाते हुए उसके मकान पर पहुँच गये, लेकिन पूछने पर उसने साफ़ इन्कार कर दिया। तलाशी ली गई, मग़र कोई चीज़ बरामद ना हुई। जब लोगों ने देखा कि आटे के निशानात मज़ीद आगे जा रहे हैं तो वह खोज लगाते हुए यहूदी के घर पहुँचे, उसके यहाँ से सामान भी बरामद हो गया। यहूदी ने हक़ीक़त बयान कर दी यह सामान रात को फलाँ शख्स ने उसके पास अमानतन रखवाया था। मुनाफ़िक़ की क़ौम के लोगों ने कहा कि यहूदी झूठ बोलता है, वही चोर है। जब कोई फ़ैसला ना हो सका तो यह झगड़ा हुज़ूर ﷺ के सामने लाया गया। मुनाफ़िक़ के क़बीले वालों ने क़समें खा-खा कर ख़ूब वकालत की कि हमारा यह आदमी तो बहुत नेक है, इस पर ख़्वाह मख़्वाह का झूठा इल्ज़ाम लग रहा है। यहाँ तक कि हुज़ूर ﷺ का दिल भी उस शख्स के बारे में कुछ पसीजने लगा। इस पर यह आयत नाज़िल हुई कि आप ख्यानत करने वाले के हिमायती ना बनें, उसकी तरफ़ से वकालत ना करें, उसका सहारा ना बनें, उसको मदद ना पहुँचायें। यहाँ خَصِيْمًا के मायने हैं झगड़ा करने वाला, बहस करने वाला। لِّلْخَاۗىِٕنِيْنَ का मतलब है “ख़ाइन लोगों के हक़ में।” लेकिन अग़र عَلَى الخَائِنِيْنَ होता तो इसका मतलब होता “ख़ाइन लोगों के ख़िलाफ़।”

आयत 106

"और अल्लाह से अस्तग़फ़ार करें, यक़ीनन अल्लाह तआला बख़्शने वाला बहुत रहम करने वाला है।"

وَّاسۡتَغۡفِرِ اللّٰہَ ؕ اِنَّ اللّٰہَ کَانَ غَفُوۡرًا رَّحِیۡمًا ﴿۱۰۶﴾ۚ

यानि उस मुनाफ़िक़ के हक़ में आप ﷺ की तबीयत में जो नर्मी पैदा हो गई थी उस पर अल्लाह से अस्तग़फ़ार कीजिये, मग़फ़िरत तलब कीजिये।

आयत 107

"और आप ﷺ मत झगडिये उन लोगों की तरफ़ से जो अपनी जानों के साथ ख्यानत करते हैं।"

وَلَا تُجَادِلۡ عَنِ الَّذِیۡنَ یَخۡتَانُوۡنَ اَنۡفُسَہُمۡ ؕ

इस हुक्म के हवाले से ज़रा मसला-ए-शफ़ाअत पर भी ग़ौर करें। हम यह उम्मीद लगाये बैठे हैं कि हुज़ूर ﷺ हमारी तरफ़ से शफ़ाअत करेंगे, चाहे हमने बेईमानियाँ की हैं, हरामख़ोरियाँ की हैं, शरीअत की धज्जियाँ बिखेरी हैं। लेकिन यहाँ आप ﷺ को दो टूक अंदाज़ में ख़ाइन लोगों की वकालत से मना किया जा रहा है।

"यक़ीनन अल्लाह तआला को बिल्कुल पसंद नहीं है ख्यानत में बहुत बढ़े हुए और गुनहगार लोग।"

اِنَّ اللّٰہَ لَا یُحِبُّ مَنۡ کَانَ خَوَّانًا اَثِیۡمًا ﴿۱۰۷﴾ۚۙ

आयत 108

"यह लोगों से तो छुपते हैं मगर अल्लाह से नहीं छुप सकते"

یَّسۡتَخۡفُوۡنَ مِنَ النَّاسِ وَلَا یَسۡتَخۡفُوۡنَ مِنَ اللّٰہِ

यह लोग इंसानों से अपनी हरकतों को छुपा सकते हैं मगर अल्लाह तआला से नहीं छुपा सकते।

"और वह तो उनके साथ होता है जब वह रातों को छुप कर उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ मशवरे करते हैं।"

وَہُوَ مَعَہُمۡ اِذۡ یُبَیِّتُوۡنَ مَا لَا یَرۡضٰی مِنَ الۡقَوۡلِ ؕ

यह मुनाफ़िक़ों के बारे में फ़रमाया जा रहा है कि जब वह मुसलमानों और रसूल ﷺ के ख़िलाफ़ चोरी-छुपे साज़िशें कर रहे होते हैं तो अल्लाह तआला उनके साथ मौजूद होता है। अगर अल्लाह पर उनका ईमान हो तो उन्हें मालूम हो कि अल्लाह हमारी बातें सुन रहा है। यह मुसलमानों से डरते हैं, उनसे अपनी बातों को ख़ुफ़िया रखते हैं, मग़र इन बबदबख्तों को यह ख़्याल नहीं आता कि अल्लाह तआला तो हर वक़्त हमारे पास मौजूद है, उससे तो कुछ नहीं छुप सकता।

"और जो कुछ वह कर रहें हैं अल्लाह तआला उसका अहाता किये हुए हैं।"

وَکَانَ اللّٰہُ بِمَا یَعۡمَلُوۡنَ مُحِیۡطًا ﴿۱۰۸﴾

यानि उसकी पकड़ से कहीं बाहर नहीं निकल सकते।

आयत 109

"यह तुम लोग हो जिन्होंने दुनिया की ज़िन्दगी में इन (मुजरिमों) की तरफ़ से झगड़ा कर लिया।"

ہٰۤاَنۡتُمۡ ہٰۤؤُلَآءِ جٰدَلۡتُمۡ عَنۡہُمۡ فِی الۡحَیٰوۃِ الدُّنۡیَا ۟

"मग़र कयामत के दिन अल्लाह से इनके बारे में कौन झगड़ा करेगा?"

الدُّنۡیَا ۟ فَمَنۡ یُّجَادِلُ اللّٰہَ عَنۡہُمۡ یَوۡمَ الۡقِیٰمَۃِ

اَمْ مَّنْ يَّكُوْنُ عَلَيْهِمْ وَكِيْلًا۝

“या कौन होगा जो (वहाँ) उनका वकील बन सकेगा?”

यह ख़िताब है उस मुनाफ़िक़ चोर के क़बीले के लोगों से कि ऐ लोगों! तुमने दुनिया की ज़िन्दगी में तो मुजरिमों की तरफ़ से ख़ूब वकालत कर ली, यहाँ तक कि हुज़ूर ﷺ को भी क़ायल करने के हद तक तुम पहुँच गये। मगर यहाँ तुम उन्हें छुड़ा भी लेते और बिल फ़र्ज़ हुज़ूर ﷺ को भी क़ायल कर लेते तो क़यामत के दिन उन्हें अल्लाह की पकड़ से कौन छुड़ाता? इस ज़िमन में हुज़ूर ﷺ की एक हदीस का मफ़हूम इस तरह है कि मेरे सामने कोई मुक़दमा पेश होता है, उसमें एक फ़रीक़ ज़्यादा चर्प ज़बान होता है, वह अपनी बात बेहतर तौर पर पेश करता है और मेरे यहाँ से अपने हक़ में गलत तौर पर फ़ैसला ले जाता है। (फ़र्ज़ कीजिये किसी ज़मीन के टुकड़े के बारे में कोई तनाज़ा [विवाद] था और एक शख़्स गलत तौर पर बात साबित करके अपने हक़ में फ़ैसला ले गया) लेकिन उसे मालूम होना चाहिये कि इस तरह वह ज़मीन का टुकड़ा नहीं बल्कि जहन्नम का टुकड़ा लेकर गया है। यानि ख़ुद रसूल अल्लाह ﷺ जो भी फ़ैसला करते थे शहादतों के ऐतबार से करते थे, हुज़ूर ﷺ के लिये अल्लाह की तरफ़ से हर वक़्त और हर मरहले पर तो वही नाज़िल नहीं होती थी, जहाँ अल्लाह तआला चाहता वहाँ आप ﷺ को मुतन्बा (note) फ़रमा देता था। इसलिये आइंदा के लिये अल्लाह तआला ने तम्बीह फ़रमा दी कि अगर कुछ लोग इस दुनिया में झूठ, फ़रेब और गलत फ़ैसले के ज़रिये कोई मफ़ाद हासिल कर भी लेते हैं तो उन्हें यह बात नहीं भूलनी चाहिये कि एक दिन उसकी अदालत में भी पेश होना है जहाँ झूठ और गलत बयानी से काम नहीं चलेगा, वहाँ उनके हक़ में अल्लाह से कौन झगड़ेगा?

आयत 110

وَمَنْ يَّعْمَلْ سُوْۗءًا اَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهٗ ثُمَّ يَسْتَغْفِرِ اللّٰهَ يَجِدِ اللّٰهَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا۝

“और जो कोई बुरी हरकत करे या अपनी जान पर कोई ज़ुल्म कर बैठे और फिर अल्लाह से इस्तग़फ़ार करे तो वह अल्लाह को पायेगा बख़्शने वाला, बहुत रहम करने वाला।”

इस सिलसिले में सीधी रविश यही है कि गलती या ख़ता हो गई है तो उसका ऐतराफ़ कर लो, उस जुर्म की जो दुनियवी सज़ा है वह भुगत लो और अल्लाह से इस्तग़फ़ार करो। इस तरह आख़िरत की सज़ा से छुटकारा मिल जायेगा।

आयत 111

وَمَنْ يَّكْسِبْ اِثْمًا فَاِنَّمَا يَكْسِبُهٗ عَلٰي نَفْسِهٖ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا۝

“जो कोई भी गुनाह कमाता है तो वह उसका वबाल अपनी ही जान पर लेता है। और अल्लाह अलीम और हकीम है।”

आयत 112

وَمَنْ يَّكْسِبْ خَطِيْۗـــــَٔةً اَوْ اِثْمًا ثُمَّ يَرْمِ بِهٖ بَرِيْۗــــــًٔا

“और जो कोई किसी गलती या गुनाह का इरतकाब करता है, फिर उसका इल्ज़ाम किसी बेगुनाह पर लगा देता है”

فَقَدِ احْتَمَلَ بُهْتَانًا وَّاِثْمًا مُّبِيْنًا۝ۧ

“तो उसने अपने सर एक बहुत बड़ा बोहतान और बहुत सरीह गुनाह का बोझ ले लिया।”

किसी ने कोई गुनाह कमाया, कोई ख़ता की, कोई ग़लती की, कोई जुर्म किया, फिर उसकी तोहमत किसी बेकसूर शख़्स पर लगा दी तो बहुत बड़े बोहतान और खुल्म-खुल्ला गुनाह का भार समेट लिया। मज़कूरा मामले में यहूदी तो बेकसूर था, जो लोग उसको सजा दिलवाने में तुल गए तो उनका यह फ़अल يَرْمِ بِهٖ بَرِيْٓــــًٔا के ज़ुमरे (category) में आ गया। किसी बेगुनाह पर इस तरह का बोहतान लगाना अल्लाह के नज़दीक बहुत संजीदा मामला है।

इसके बाद उस यहूदी और मुनाफ़िक़ के मुक़दमे के कुछ मज़ीद पहलुओं के बारे में हुज़ूर ﷺ से ख़िताब हो रहा है।

आयत 113

"और (ऐ नबी ﷺ) अगर अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी रहमत आप ﷺ के शामिले हाल ना होती तो उन (मुनाफ़िक़ों) का एक गिरोह तो इस पर तुल गया था कि आपको गुमराह कर दें।"

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ وَرَحْمَتُهٗ لَهَمَّتْ طَّآئِفَةٌ مِّنْهُمْ اَنْ يُّضِلُّوْكَ ۭ

वह लोग तो इस पर कमरबस्ता थे कि आप ﷺ को ग़लतफ़हमी में मुब्तला करके आप ﷺ से ग़लत फ़ैसला करवाएँ, अदालते मुहम्मदी ﷺ से ज़ुल्म पर मब्नी फ़ैसला सादर (जारी) हो जाये, गुनाहग़ार छूट जाए और जो असल मुजरिम नहीं था, बिल्कुल बेगुनाह था, उसे पकड़ लिया जाए।

"और हक़ीक़त में वह नहीं गुमराह करते मगर अपने आपको और (ऐ नबी ﷺ) वह आप ﷺ को कुछ भी नुक़सान नहीं पहुँचा सकते।"

وَمَا يُضِلُّوْنَ اِلَّآ اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَضُرُّوْنَكَ مِنْ شَيْءٍ ۭ

हम ऐसे मौक़े पर बरवक़्त आप ﷺ को मुत्तलाअ करते रहेंगे।

"और अल्लाह ने आप ﷺ पर किताब नाज़िल की है और हिकमत भी, और आप ﷺ को वह कुछ सिखाया है जो आप ﷺ नहीं जानते थे।"

وَاَنْزَلَ اللّٰهُ عَلَيْكَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ ۭ

"और यक़ीनन अल्लाह का फ़ज़ल है आप ﷺ पर बहुत बड़ा।"

وَكَانَ فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ عَظِيْمًا ١١٣

आयत 114

"उन (मुनाफ़िक़ीन) की सरगोशियों में से अक्सर में कोई भलाई नहीं होती"

لَا خَيْرَ فِيْ كَثِيْرٍ مِّنْ نَّجْوٰىهُمْ

मुनाफ़िक़ीन की मन्फ़ी सरगर्मियों का ज़िक्र है। अलैहदा बैठ कर सरगोशियाँ करना, दूसरों को देख कर मुस्कुराना और साथ इशारे भी करना ताकि देखने वाले के दिल में ख़ल्जान (शक) पैदा हो कि मेरे बारे में बात हो रही है, आज भी हमारी मजलिसों में यह सब कुछ होता है। यह सारे मामले ज्यों के त्यों इंसानी मआशरे के अंदर वैसे ही आज भी मौजूद हैं। मगर अल्लाह का फ़रमान है कि इस अंदाज़ की ख़ुफ़िया सरग़ोशियों का ज़्यादा हिस्सा ऐसा होता है जिसमें कोई ख़ैर नहीं होती।

"इल्ला यह कि कोई तल्क़ीन करे सद्क़ा व ख़ैरात की, या नेकी की या लोगों के मामलात को दुरुस्त करने की।"

اِلَّا مَنْ اَمَرَ بِصَدَقَةٍ اَوْ مَعْرُوْفٍ اَوْ اِصْلَاحٍۢ بَيْنَ النَّاسِ ۭ

ख़ैर वाली सरग़ोशी यह हो सकती है कि ख़ामोशी से किसी को अलैहदगी में ले जाकर उसको सद्क़ा व ख़ैरात की तल्क़ीन की जाये कि भाई देखो आपको अल्लाह ने ग़नी किया है, फलाँ शख़्स मोहताज है, मैं उसको जानता हूँ, आपको उसकी मदद करनी चाहिये, वग़ैरह। फिर मारूफ़ और भलाई के उमूर (कामों) में ख़ुफ़िया सलाह मशवरे अगर किये जाएँ तो इसमें भी हर्ज नहीं। इसी तरह किसी ग़लतफ़हमी या झगड़े की सूरत में फ़रीक़ैन में सुलह सफ़ाई कराने की ग़र्ज़ से भी ख़ुफ़िया मुज़ाकरात किसी साज़िश के ज़ुमरे में नहीं आते। मसलन दो भाई झगड़ पड़े हैं, अब आप एक की बात अलैहदगी में सुने और दूसरे के पास जाकर उस बात को बेहतर अंदाज़ में पेश करें कि आपको मुग़ालता हुआ है, उन्होंने यह बात यूँ नहीं, यूँ कही थी। इस तरह की अलैहदा-अलैहदा ग़ुफ़्तगू जो नेक नीयती से की जा रही हो, यह यक़ीनन नेकी और भलाई की बात है, जो बाइसे अज्रो सवाब है।

وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ ابْتِغَآءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝۱۱۴

"और जो शख़्स इस तरह (की शरग़ोशी) करेगा अल्लाह तआला की रज़ाजोई के लिये तो अनक़रीब हम उसे देंगे बहुत बड़ा अजर।"

आयत 115

وَمَنْ يُّشَاقِقِ الرَّسُوْلَ مِنْۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدٰى

"और जो रसूल अल्लाह ﷺ की मुख़ालफ़त पर तुल गया, इसके बाद कि उस पर हिदायत वाज़ेह हो चुकी"

यानि जो कोई ख़ुफ़िया साज़िशों और चोरी-छुपे की लगाई-बुझाई के ज़रिये लोगों को अल्लाह के रसूल ﷺ के ख़िलाफ़ भड़काता है कि देखो जी यह अपने लोगों को नवाज़ रहे हैं। जैसा कि ग़ज़वा-ए-हुनैन में हुआ था कि आप ﷺ ने मक्का मुकर्रमा के उन मुसलमानों को जो फ़तह मक्का के बाद मुसलमान हुए थे, माले ग़नीमत में से उनकी दिलजोई के लिये (जिसे क़ुरान में तालीफ़े क़ुलूब कहा गया है) ज़रा ज़्यादा माल दे दिया तो उस पर बाज़ लोगों ने शोर मचा दिया कि देख लिया, जब कड़ा वक़्त था, मुश्किल वक़्त था तो उसे हम झेलते रहे, अब यह अच्छा वक़्त आया है तो आपको रिश्तेदार याद आ गये हैं। ज़ाहिर है मक्के वाले हुज़ूर ﷺ के रिश्तेदार थे, क़ुरैश का क़बीला हुज़ूर ﷺ का अपना क़बीला था। तो तरह-तरह की बातें जो आज के दौर में भी होती हैं वैसी ही बातें हमेशा होती रही हैं। यह इंसान की फ़ितरत है जो हमेशा एक सी रही है, इसमें कोई तग़य्युर (परिवर्तन) व तबद्दुल (बदलाव) नहीं हुआ।

وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيْلِ الْمُؤْمِنِيْنَ

"और वह अहले ईमान के रास्ते के सिवा कोई दूसरा रास्ता इख़्तियार करें"

نُوَلِّهٖ مَا تَوَلّٰى وَنُصْلِهٖ جَهَنَّمَ

"तो हम भी उसको उसी तरफ़ फेर देते हैं जिस तरफ़ उसने ख़ुद रुख़ इख़्तियार कर लिया हो और हम उसे पहुँचाएँगे जहन्नम में।"

وَسَآءَتْ مَصِيْرًا ۝۱۱۵

"और वह बहुत बुरी जगह है लौटने की।"

यह आयत इस ऐतबार से बड़ी अहम है कि इमाम शाफ़ई रहि० के नज़दीक इज्मा-ए-उम्मत की सनद इस आयत में है। यह बात तो बहुत वाज़ेह है कि इस्लामी क़वानीन के लिये बुनियादी माख़ज़ (source) क़ुरान है, फिर हदीस व सुन्नत है। इस तरह इज्तिहाद का मामला भी समझ में आता है, मग़र इज्मा किसी चीज़ का नाम है? इसका ज़िक्र क़ुरान में कहाँ है? इमाम शाफ़ई रहि० फ़रमाते हैं कि मैंने इज्मा की दलील क़ुरान से तलाश करने की कोशिश की और क़ुरान को शुरू से आख़िर तक तीन सौ मर्तबा पढ़ा मगर मुझे इज्मा की कोई दलील नहीं मिली। फिर बिल्आख़िर तीन सौ एक

मर्तबा पढ़ने पर मेरी नज़र जाकर इस आयत पर जम गई: {وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيْلِ الْمُؤْمِنِيْنَ}। गोया अहले ईमान का जो रास्ता है, जिस पर इज्मा हो गया हो अहले ईमान का, वह ख़ुद अपनी जगह बहुत बड़ी सनद है। इसलिये कि रसूल अल्लाह ﷺ का इर्शाद है: ((اِنَّ أُمَّتِیْ لَا تَجْتَمِعُ عَلٰی ضَلَالَۃٍ)) "मेरी उम्मत कभी गुमराही पर जमा नहीं होगी।"

आयात 116 से 126 तक

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ ۭ وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ
فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيْدًا ۝۱۱۶ اِنْ يَّدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖٓ اِلَّآ اِنٰثًا ۚ وَاِنْ يَّدْعُوْنَ اِلَّا
شَيْطٰنًا مَّرِيْدًا ۝۱۱۷ لَّعَنَهُ اللّٰهُ ۘ وَقَالَ لَاَتَّخِذَنَّ مِنْ عِبَادِكَ نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا ۝۱۱۸
وَّلَاُضِلَّنَّهُمْ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمْ وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُبَتِّكُنَّ اٰذَانَ الْاَنْعَامِ وَلَاٰمُرَنَّهُمْ
فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلْقَ اللّٰهِ ۭ وَمَنْ يَّتَّخِذِ الشَّيْطٰنَ وَلِيًّا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَقَدْ خَسِرَ خُسْرَانًا
مُّبِيْنًا ۝۱۱۹ يَعِدُهُمْ وَيُمَنِّيْهِمْ ۭ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطٰنُ اِلَّا غُرُوْرًا ۝۱۲۰ اُولٰۗىِٕكَ
مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۡ وَلَا يَجِدُوْنَ عَنْهَا مَحِيْصًا ۝۱۲۱ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ
سَنُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا ۭ
وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ قِيْلًا ۝۱۲۲ لَيْسَ بِاَمَانِيِّكُمْ وَلَآ اَمَانِيِّ اَهْلِ الْكِتٰبِ ۭ مَنْ
يَّعْمَلْ سُوْۗءًا يُّجْزَ بِهٖ ۙ وَلَا يَجِدْ لَهٗ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا ۝۱۲۳ وَمَنْ يَّعْمَلْ مِنَ
الصّٰلِحٰتِ مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَاُولٰۗىِٕكَ يَدْخُلُوْنَ الْجَنَّةَ وَلَا يُظْلَمُوْنَ
نَقِيْرًا ۝۱۲۴ وَمَنْ اَحْسَنُ دِيْنًا مِّمَّنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ وَّاتَّبَعَ مِلَّةَ اِبْرٰهِيْمَ
حَنِيْفًا ۭ وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبْرٰهِيْمَ خَلِيْلًا ۝۱۲۵ وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَانَ
اللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ مُّحِيْطًا ۝۱۲۶

आयत 116

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ ۭ

"अल्लाह हरग़िज़ नहीं बख़्शेगा इस बात को कि उसके साथ शिर्क किया जाये, और बख़्श देगा इसके सिवा जिसके लिये चाहेगा।"

गोया यह भी कोई फ्री लाइसेंस नहीं है। याद रहे कि यह आयत इस सूरह मुबारका में दूसरी बार आ रही है।

وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيْدًا ۝۱۱۶

"और जो शिर्क करता है अल्लाह के साथ वह तो फिर गुमराह हो गया और गुमराही में भी बहुत दूर निकल गया।"

आयत 117

اِنْ يَّدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖٓ اِلَّآ اِنٰثًا ۚ وَاِنْ يَّدْعُوْنَ اِلَّا شَيْطٰنًا مَّرِيْدًا ۝۱۱۷

"नहीं पुकारते यह लोग अल्लाह के सिवा मगर देवियों को, और वह नहीं पुकारते किसी को सिवाये सरकश शैतान के।"

यहाँ पहली मर्तबा मुशरिकीने मक्का की बात भी हो रही है। मुशरिकीने मक्का ने अपने देवियों के मुअन्नस (female) नाम रखे हुए थे, जैसे लात, मनात, उज़्ज़ा वग़ैरह। लेकिन असल में ना लात का कोई वुजूद है और ना ही मनात की कुछ हक़ीक़त है। अलबत्ता शैतान ज़रूर मौजूद है जो उनकी पुकार सुन रहा है।

आयत 118

"अल्लाह ने उस पर लानत फ़रमा दी है।" لَّعَنَهُ اللّٰهُ

"और उसने कहा (ऐ अल्लाह) मैं तेरे बंदो में से एक मुक़र्रर हिस्सा तो लेकर ही छोड़ूँगा।" وَقَالَ لَاَتَّخِذَنَّ مِنۡ عِبَادِكَ نَصِيۡبًا مَّفۡرُوۡضًا ۙ

उन लोगों को मैं अपने साथ जहन्नम में पहुँचा कर रहूँगा। गोया:
"हम तो डूबे हैं सनम, तुमको भी ले डूबेंगे!"

आयत 119

"और मैं लाज़िमन उनको बहकाऊँगा और उनको बड़ी-बड़ी उम्मीदें दिलाऊँगा" وَّلَاُضِلَّنَّهُمۡ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمۡ

उनके दिलों में बड़ी उम्मीदों के चिराग़ रोशन करूँगा कि यह बहुत ताबनाक (bright) केरियर हैं, लगे रहो इस काम में, इसमें बड़ा फ़ायदा है, नाजायज़ है तो ख़ैर है, अल्लाह बख़्श ही देगा। हम तो अल्लाह के प्यारे रसूल ﷺ के उम्मती हैं, हमें ख़ौफ़ किस बात का है? जिस तरह यहूदियों को यह ज़अम (दावा) हो गया था कि हम तो अल्लाह के बेटे हैं, हम उसके बड़े चहेते हैं, वग़ैरह। उनको मैं इस तरह की लंबी-लंबी उम्मीदों और लंबे-लंबे मन्सूबों में उलझा दूँगा। इसी को 'तौले अमल' कहते हैं।

"और मैं उन्हें हुक्म दूँगा तो (उसकी तामील में) वह चौपायों के कान चीर देंगे" وَلَاٰمُرَنَّهُمۡ فَلَيُبَتِّكُنَّ اٰذَانَ الۡاَنۡعَامِ

इसकी तफ़सील सूरतुल अनआम में आयेगी कि फलाँ बुत या फलाँ देवी के नाम पर किसी जानवर के कान चीर कर उसे आज़ाद कर दिया गया है, अब इसको कोई छेड़ नहीं सकता, इसका ग़ोश्त नहीं खाया जा सकता, इस पर सवारी नहीं हो सकती।

"और मैं उन्हें हुक्म दूँगा तो (उसकी तामील में) वह अल्लाह की तख़्लीक़ में तब्दीली करेंगे।" وَلَاٰمُرَنَّهُمۡ فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلۡقَ اللّٰهِ ؕ

जैसे आज जो कुछ आप देख रहे हैं कि मर्दों में औरतों के से अंदाज़ अपनाये जा रहे हैं और औरतों में मर्दों के से तौर-तरीक़े इख़्तियार किये जा रहे हैं। लेकिन साइंस के मैदान में, ख़ास तौर पर Genetics में जो कुछ आज हो रहा है वह तो बहुत ही नाज़ुक सूरते हाल है। साइंसी तरक़्क़ी के सबब इंसान आज इस मक़ाम पर पहुँच गया है कि वह अपना इख़्तियार इस्तेमाल करके जीनियाती तब्दीलियों के ज़रिये से अल्लाह की तख़्लीक़ में तगय्युर व तबद्दुल कर रहा है।

"और जिस किसी ने भी अल्लाह को छोड़ कर शैतान को अपना दोस्त बना लिया तो वह बहुत खुले ख़सारे (और तबाही) में पड़ गया।" وَمَنۡ يَّتَّخِذِ الشَّيۡطٰنَ وَلِيًّا مِّنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ فَقَدۡ خَسِرَ خُسۡرَانًا مُّبِيۡنًا ؕ

आयत 120

"वह (शैतान) उनसे वादे भी करता है और उन्हें उम्मीदें भी दिलाता है, और नहीं वादा करता उनसे शैतान मग़र धोखे का।" يَعِدُهُمۡ وَيُمَنِّيۡهِمۡ ؕ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيۡطٰنُ اِلَّا غُرُوۡرًا ۙ

शैतान उनको वादों के बहलावे देता है और आरज़ुओं में फँसाता है, सब्ज़ बाग़ दिखाता है, मग़र शैतान के दावे सरासर फ़रेब हैं।

आयत 121

أُولَٰٓئِكَ مَأْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ وَلَا يَجِدُوْنَ عَنْهَا مَحِيْصًا ۝۱۲۱

"यह वह लोग हैं जिनका ठिकाना जहन्नम है, और वहाँ से वह फ़रार की कोई सूरत नहीं पाएँगे।"

वहाँ से भागने का उन्हें कोई रास्ता नहीं मिलेगा। दूसरी तरफ़ अहले ईमान की शान क्या होगी, अगली आयत में इसकी तफ़सील है। दो गिरोहों या दो पहलुओं के दरमियान फ़ौरी तक़ाबुल (simultaneous contrast) का यह अंदाज़ क़ुरान में हमें जगह-जगह नज़र आता है।

आयत 122

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَنُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ

"और जो लोग ईमान लाएँ और नेक अमल करें उन्हें हम अनक़रीब दाख़िल करेंगे ऐसे बाग़ात में जिनके नीचे नहरें बहती होंगी"

خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ؕ

"उनमें वह हमेशा-हमेश रहेंगे।"

وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا ؕ وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ قِيْلًا ۝۱۲۲

"अल्लाह का यह वादा सच्चा है, और कौन है जो अल्लाह से बढ़ कर अपनी बात में सच्चा हो सकता है?"

आयत 123

لَيْسَ بِاَمَانِيِّكُمْ وَلَآ اَمَانِيِّ اَهْلِ الْكِتٰبِ ؕ

"(ऐ मुसलमानों!) ना तुम्हारी ख़्वाहिशात पर (मौक़ूफ़ है) और ना अहले किताब की ख़्वाहिशात पर।"

तंबीह आ गई कि तुम्हारे अंदर भी बिला जवाज़ और बे बुनियाद ख़्वाहिशात पैदा हो जाएँगी। यहूद व नसारा की तरह तुम लोग भी बड़ी दिल ख़ुशकुन आरज़ुओं में (wishful thinkings) के आदी हो जाओगे, शफ़ाअत की उम्मीद पर तुम भी हरामख़ोरियाँ करोगे, अल्लाह की नाफ़रमानियाँ जैसी कुछ उन्होंने की थीं तुम भी करोगे। लेकिन जान लो कि अल्लाह का क़ानून अटल है, बदलेगा नहीं। तुम्हारी ख़्वाहिशात से, तुम्हारी आरज़ुओं से और तुम्हारी तमन्नाओं से कुछ नहीं होगा। बिल्कुल उसी तरह जैसे अहले किताब की ख़्वाहिशात से कुछ नहीं हुआ। बल्कि:

مَنْ يَّعْمَلْ سُوْٓءًا يُّجْزَ بِهٖ ۙ

"जो कोई बुरा काम करेगा उसकी सज़ा उसको मिल कर रहेगी"

अग़रचे अल्लाह के यहाँ इस क़ानून में नर्मी का एक पहलु मौजूद है, लेकिन अपनी जगह यह बहुत सख़्त अल्फ़ाज़ हैं। बाज़ अवक़ात बदी की जगह पर नेकी उसके मन्फ़ी असरात को धो देती है, लेकिन इस आयत के रू से बुराई का हिसाब तो होकर रहना है। मतलब यह है कि इंसान से जिस बदी का इरत्काब होता है वह उसके बारे में जवाबदेह है, उसका अहतसाब होकर रहेगा। अगर किसी की नेकी ने उसकी बदी को छुपा भी लिया, किसी ने ग़लती की और फिर सिद्क़े दिल से तौबा कर ली तो इसके सबब उसकी बदी के असरात जाते रहे, लेकिन मामला account for ज़रूर होगा। तौबा को दिखाया जायेगा, कि क्या तौबा वाक़िअतन सच्ची थी? तौबा करने वाला अपने किये पर नादिम (शर्मिंदा) हुआ था? वाक़ई उसने आदते बद को छोड़ दिया था? या सिर्फ़ ज़बान से "اَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ رَبِّیْ مِنْ كُلِّ ذَنْبٍ وَّ اَتُوْبُ اِلَيْهِ" की ग़रदान हो रही थी और साथ नाफ़रमानी और हरामख़ोरी भी ज्यों की त्यों चल रही थी। तो अहतसाब के कटहरे में हर शख़्स और हर मामले को

लाया जायेगा और खरा-खोटा देख कर फ़ैसला किया जायेगा। फिर जो मुजरिम पाया गया, उसे उसके किये की सज़ा ज़रूर मिलेगी।

وَلَا يَجِدْ لَهٗ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا ۝۱۲۳

"और वह नहीं पायेगा अपने लिये अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हिमायती और ना कोई मददगार।"

आयत 124

وَمَنْ يَّعْمَلْ مِنَ الصّٰلِحٰتِ مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَهُوَ مُؤْمِنٌ

"और जो कोई नेक अमल करेगा, ख़्वाह वह मर्द हो या औरत और हो वह साहिबे ईमान"

فَاُولٰٓئِكَ يَدْخُلُوْنَ الْجَنَّةَ وَلَا يُظْلَمُوْنَ نَقِيْرًا ۝۱۲۴

"तो यह वह लोग हैं जो जन्नत में दाख़िल होंगे और उनकी तिल के बराबर भी कोई हक़ तल्फ़ी नहीं की जायेगी।"

आयत 125

وَمَنْ اَحْسَنُ دِيْنًا مِّمَّنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ

"और उससे बेहतर दीन किसका होगा जिसने अपना चेहरा (सिर) अल्लाह के सामने झुका दिया, और (उसके बाद) अहसान (के दर्जे) तक पहुँच गया"

अल्लाह की बंदगी में ख़ूबसूरती लाकर, ख़ुलूस और लिल्लाहियत के साथ, पूरे दीन का इत्तेबाअ करके, تفريق بين الدّين से बच कर और total submission के ज़रिये से उसने अहसान के दर्जे तक रसाई हासिल कर ली।

وَّاتَّبَعَ مِلَّةَ اِبْرٰهِيْمَ حَنِيْفًا ۭ

"और उसने पैरवी की दीने इब्राहीम अलै० की यक्सू होकर (या पैरवी की उस इब्राहीम अलै० के दीन की, जो यक्सू था)।"

وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبْرٰهِيْمَ خَلِيْلًا ۝۱۲۵

"और अल्लाह ने तो इब्राहीम को अपना दोस्त बना लिया था।"

आयत 126

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ مُّحِيْطًا ۝۱۲۶

"और अल्लाह ही के लिये है जो कुछ आसमानों में और जो कुछ ज़मीन में है, और अल्लाह तआला हर शय का अहाता किये हुए हैं।"

आयात 127 से 134 तक

وَيَسْتَفْتُوْنَكَ فِي النِّسَاۗءِ ۭ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِيْهِنَّ ۙ وَمَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ فِي الْكِتٰبِ فِيْ
يَتٰمَى النِّسَاۗءِ الّٰتِيْ لَا تُؤْتُوْنَهُنَّ مَا كُتِبَ لَهُنَّ وَتَرْغَبُوْنَ اَنْ تَنْكِحُوْهُنَّ
وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الْوِلْدَانِ ۙ وَاَنْ تَقُوْمُوْا لِلْيَتٰمٰى بِالْقِسْطِ ۭ وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ
فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِهٖ عَلِيْمًا ۝۱۲۷ وَاِنِ امْرَاَةٌ خَافَتْ مِنْۢ بَعْلِهَا نُشُوْزًا اَوْ اِعْرَاضًا فَلَا
جُنَاحَ عَلَيْهِمَآ اَنْ يُّصْلِحَا بَيْنَهُمَا صُلْحًا ۭ وَالصُّلْحُ خَيْرٌ ۭ وَاُحْضِرَتِ الْاَنْفُسُ
الشُّحَّ ۭ وَاِنْ تُحْسِنُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ۝۱۲۸ وَلَنْ

تَسْتَطِيْعُوْٓا اَنْ تَعْدِلُوْا بَيْنَ النِّسَاۗءِ وَلَوْ حَرَصْتُمْ فَلَا تَمِيْلُوْا كُلَّ الْمَيْلِ فَتَذَرُوْھَا
كَالْمُعَلَّقَةِ ۭ وَاِنْ تُصْلِحُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ۝١٢٩ وَاِنْ يَّتَفَرَّقَا يُغْنِ
اللّٰهُ كُلًّا مِّنْ سَعَتِهٖ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ وَاسِعًا حَكِيْمًا ۝١٣٠ وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي
الْاَرْضِ ۭ وَلَقَدْ وَصَّيْنَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَاِيَّاكُمْ اَنِ اتَّقُوا اللّٰهَ ۭ
وَاِنْ تَكْفُرُوْا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَنِيًّا حَمِيْدًا ۝١٣١
وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ۝١٣٢ اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ
اَيُّھَا النَّاسُ وَيَاْتِ بِاٰخَرِيْنَ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰي ذٰلِكَ قَدِيْرًا ۝١٣٣ مَنْ كَانَ يُرِيْدُ ثَوَابَ
الدُّنْيَا فَعِنْدَ اللّٰهِ ثَوَابُ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًۢا بَصِيْرًا ۝١٣٤ ۧ

अब जो आयात आ रही हैं इनमें ख़िताब मुसलमानों ही से है लेकिन इनकी हैसियत "इस्तदराक (समझाने)" की है और इनका ताल्लुक़ इस सूरत की इब्तदाई आयतों के साथ है। सूरतुन्निसा के आग़ाज़ में ख्वातीन के मसलों के बारे में कुछ अहकाम नाज़िल हुए थे, जिनमें यतीम बच्चियों से निकाह के बारे में भी मामलात ज़ेरे बहस आये थे और कुछ तलाक़ वग़ैरह के मसले थे। इसमें कुछ निकात (points) लोगों के लिये वज़ाहत तलब थे, लिहाज़ा ऐसे निकात के बारे में मुसलमानों की तरफ़ से कुछ सवाल किये गये और हुज़ूर ﷺ से कुछ वज़ाहतें तलब की गईं। जवाब में अल्लाह तआला ने यह वज़ाहतें नाज़िल की हैं और उस सवाल का हवाला देकर बात शुरू की गई है जिसका जवाब दिया जाना मक़सूद है।

आयत 127

وَيَسْتَفْتُوْنَكَ فِي النِّسَاۗءِ

"(ऐ नबी ﷺ) यह लोग आप ﷺ से औरतों के मामले में फ़तवा पूछते हैं।"

قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِيْهِنَّ ۙ

"कह दीजिये कि अल्लाह तुम्हें फ़तवा देता है (वज़ाहत करता है) उनके बारे में"

وَمَا يُتْلٰي عَلَيْكُمْ فِي الْكِتٰبِ فِيْ يَتٰمَي النِّسَاۗءِ

"और जो तुम्हें (पहले से) सुनाया जा रहा है किताब में यतीम लड़कियों के बारे में"

यह इसी सूरत की आयत 3 की तरफ़ इशारा है। आयत ज़ेरे नज़र के साथ मिल कर उस आयत की तशरीह भी बिल्कुल वाज़ेह हो गई है और साबित हो गया कि वहाँ जो फ़रमाया गया था {وَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوْا فِي الْيَتٰمٰى} तो उससे असल मुराद "يَتٰمَي النِّسَاۗءِ" था। यानि अगर तुम्हें अंदेशा हो कि यतीम लड़कियों से शादी करोगे तो उनके साथ इंसाफ़ नहीं कर सकोगे (इसलिये कि उनकी तरफ़ से कोई नहीं जो उनके हुक़ूक़ का पासदार हो और तुमसे बाज़पुर्स कर सके) तो फिर उनसे शादी मत करो, बल्कि दूसरी औरतों से शादी कर लो। अगर एक से ज़्यादा निकाह करना चाहते हो तो अपनी पसंद की दूसरी औरतों से, दो-दो, तीन-तीन, या चार-चार से कर लो {فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَاۗءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ} मगर ऐसी बेसहारा यतीम लड़कियों से निकाह ना करो क्योंकि:

الّٰتِيْ لَا تُؤْتُوْنَھُنَّ مَا كُتِبَ لَھُنَّ وَتَرْغَبُوْنَ اَنْ تَنْكِحُوْھُنَّ

"जिनको तुम देते नहीं हो जो अल्लाह ने उनके लिये लिख दिया है और चाहते हो कि उनसे निकाह भी करो"

यतीम समझ कर महर दिये बग़ैर उनसे निकाह करने के ख़्वाहिशमंद रहते हो।

وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الْوِلْدَانِ ۙ

"और (इसी तरह) वह बच्चे जो कमज़ोर हैं (जिन पर ज़ुल्म होता है)"

وَاَنْ تَقُوْمُوْا لِلْيَتٰمٰى بِالْقِسْطِ ؕ

"और यह (हमने तुम्हें इतने तफ़सीलली अहकाम दिये हैं) कि यतीमों के मामले में इंसाफ़ पर कारबंद रहो।"

وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِهٖ عَلِيْمًا ۝۱۲۷

"और जो भलाई भी तुम करोगे अल्लाह उससे वाक़िफ़ है।"

वह तुम्हारी नीयतों को जानता है। उसने शरीअत के अहकाम नाज़िल कर दिये हैं, बुनियादी हिदायात तुम्हें दे दी गई हैं। अब इज़ाफ़ी चीज़ तो बस यही है कि तुम्हारी नीयत साफ़ होनी चाहिये। क्योंकि { وَاللّٰهُ يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ } (अल् बकरह:220) अल्लाह जानता है कि कौन हक़ीक़त में शरारती है और किसकी नीयत सही है।

आयत 128

وَاِنِ امْرَاَةٌ خَافَتْ مِنْۢ بَعْلِهَا نُشُوْزًا اَوْ اِعْرَاضًا

"और अगर किसी औरत को अंदेशा हो अपने शौहर से ज़्यादती या बेरुख़ी का"

एक "नुशूज़" तो वह था जिसका तज़किरा इसी सूरत की आयत 34 मे औरत के लिये हुआ था: {وَالّٰتِيْ تَخَافُوْنَ نُشُوْزَهُنَّ} "और जिन औरतों से तुम्हें शरकशी का अंदेशा हो।" यानि वह औरतें, वह बीवियाँ जो ख़ाविंदों से सरकशी करती हैं, उनके अहकाम नहीं मानती, उनकी इताअत नहीं करती, अपनी ज़िद पर अड़ी रहती हैं, उनके बारे में हुक्म था कि उनके साथ कैसा मामला किया जाये। अब यहाँ ज़िक्र है उस "नुशूज़" का जिसका इज़हार ख़ाविंद की तरफ़ से हो सकता है। यानि यह भी तो हो सकता है कि ख़ाविंद अपनी बीवी पर ज़ुल्म कर रहा हो, उसके हुक़ूक़ अदा करने में पहलु तही कर रहा हो, अपनी "क़व्वामियत" के हक़ को ग़लत तरीक़े से इस्तेमाल कर रहा हो, बेजा रौब डालता हो, धौंस देता हो, या बिना वजह सताता हो, तंग करता हो और तंग करके महर माफ़ करवाना चाहता हो, या फिर बीवी के वालिदैन अच्छे खाते-पीते हों तो हो सकता है उसे ब्लैकमेल करके उसके वालिदैन से दौलत हथियाना चाहता हो। यह सारी ख़बासतें हमारे मआशरे में मौजूद हैं और औरतें बेचारी ज़ुल्म व सितम की इस चक्की में पिसती रहतीं हैं। आयत ज़ेरे नज़र में इस मसले की वज़ाहत की गई है कि अगर किसी औरत को अपने शौहर से अंदेशा हो जाये कि वह ज़्यादती करेगा, या अगर शौहर ज़्यादती कर रहा हो और वह बीवी के हुक़ूक़ अदा ना कर रहा हो, या उसकी तरफ़ मैलान ही ना रखता हो, कोई नई शादी रचा ली हो और अब सारी तवज्जोह नई दुल्हन की तरफ़ हो।

فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَآ اَنْ يُّصْلِحَا بَيْنَهُمَا صُلْحًا ؕ

"तो उन दोनों पर कोई इल्ज़ाम नहीं होगा कि वह आपस में सुलह कर लें।"

यहाँ सुलह से मुराद यह है कि सारे मामले बाहम तय करके औरत ख़ुला ले ले। लेकिन ख़ुला लेने में, जैसा कि हम पढ़ चुके हैं जबकि औरत को महर छोड़ना पड़ेगा, और अगर लिया था तो कुछ वापस करना पड़ेगा।

وَالصُّلْحُ خَيْرٌ ۭ وَاُحْضِرَتِ الْاَنْفُسُ الشُّحَّ ۭ

"और सुलह बहरहाल बेहतर है। अलबत्ता इंसानी नफ़्स पर लालच मुसल्लत रहता है।"

मर्द चाहेगा कि मेरा पूरा महर वापस किया जाये जबकि औरत चाहेगी कि मुझे कुछ भी वापस ना करना पड़े। यह मज़ामीन सूरतुल बक़रह में बयान हो चुके हैं।

وَاِنْ تُحْسِنُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ۝۱۲۸

"और अगर तुम अहसान करो और तक़वा इख़्तियार करो तो जान लो कि अल्लाह तुम्हारे तमाम आमाल से बाख़बर है।"

तुम मर्द हो, मर्दानगी का सबूत दो, इस मामले में अपने अंदर नर्मी पैदा करो, बीवी का हक़ फ़राख़ दिली से अदा करो।

आयत 129

وَلَنْ تَسْتَطِيْعُوْٓا اَنْ تَعْدِلُوْا بَيْنَ النِّسَاۗءِ وَلَوْ حَرَصْتُمْ

"और तुम्हारे लिये मुमकिन ही नहीं कि तुम औरतों के दरमियान पूरा-पूरा इंसाफ कर सको, चाहे तुम इसके लिये कितने ही हरीस हो"

सूरह के आग़ाज़ (आयत 3) में फ़रमाया गया था: {فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تَعْدِلُوْا فَوَاحِدَةً} यानि अगर तुम्हें अंदेशा हो कि तुम अपनी बीवियों में (अग़र एक से ज़्यादा हैं) अद्ल नहीं कर सकोगे तो फिर एक पर ही इकतफ़ा (सन्तुष्टि) करो, दूसरी शादी मत करो। अगर तुम्हें कुल्ली तौर पर इत्मिनान है, अपने ऊपर ऐतमाद है कि तुम अद्ल कर सकते हो तब दूसरी शादी करो, वरना नहीं। लेकिन हक़ीक़त यह है कि कुछ चीज़ें तो गिनती और नाप-तौल की होती हैं, उनमें तो अद्ल करना मुमकिन है, लेकिन जो क़ल्बी मैलान है यह तो इंसान के इख़्तियार में नहीं है। हुज़ूर ﷺ ने अपनी तमाम अज़वाज के लिये हर चीज़ गिन-गिन कर तय की हुई थी। शब बसरी (रात गुज़ारने) के लिये सबकी बारियाँ मुक़र्रर थीं। दिन में भी आप ﷺ हर घर में चक्कर लगाते थे। अस्र और मग़रिब के दरमियान थोड़ी-थोड़ी देर हर ज़ौजा मोहतरमा के पास ठहरते थे। अगर कहीं ज़्यादा देर हो जाती तो गोया ख़लबली मच जाती थी कि आज वहाँ ज़्यादा देर क्यों ठहर गये? यह चीज़े इंसानी मआशरे में साथ-साथ चलती हैं। हुज़ूर ﷺ की अज़वाजे मुतहहरात रज़ि० का आपस का मामला बहुत अच्छा था, लेकिन सोकनापे (सोकनों) के असरात कुछ ना कुछ तो होते हैं, यह औरत की फ़ितरत है, जो उसके इख़्तियार में नहीं है। तो इसलिये फ़रमाया कि मुकम्मल इंसाफ़ करना तुम्हारे बस में नहीं। इससे मुराद दरअसल क़ल्बी मैलान है। एक हदीस में भी इसकी वज़ाहत मिलती है कि नबी अकरम ﷺ फ़रमाया करते थे कि ऐ अल्लाह मैंने ज़ाहिरी चीज़ों में पूरा-पूरा अद्ल किया है, बाक़ी जहाँ तक मेरे दिल के मैलान का ताल्लुक़ है तो मुझे उम्मीद है कि इस बारे में तू मुझसे मुवाख़ज़ा नहीं करेगा। इसी लिये यहाँ फ़रमाया गया कि तुम चाहो भी तो अद्ल नहीं कर सकते।

فَلَا تَمِيْلُوْا كُلَّ الْمَيْلِ فَتَذَرُوْھَا كَالْمُعَلَّقَةِ

"तो ऐसा ना हो कि तुम एक ही तरफ़ पूरे के पूरे झुक जाओ कि दूसरी बीवी को मुअल्लक़ करके छोड़ दो।"

दूसरी बीवी इस तरह मुअल्लक़ होकर ना रह जाये कि अब वह ना शौहर वाली है और ना आज़ाद है। उससे ख़ाविंद का गोया कोई ताल्लुक़ ही नहीं रहा।

وَاِنْ تُصْلِحُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا

"और अगर तुम इस्लाह कर लो और तक़्वा की रविश इख़्तियार करो तो अल्लाह तआला भी ग़फ़ी और रहीम है।"

अब अगली आयत में तलाक़ के मामले में एक अहम नुक्ता बयान हो रहा है। तलाक़ यक़ीनन एक निहायत संजीदा मसला है, इसलिये रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: ((اَبْغَضُ الْحَلَالِ اِلَى اللهِ تَعَالٰى الطَّلَاقُ)) "हलाल चीज़ों में अल्लाह तआला के नज़दीक सबसे ज़्यादा नापंसदीदा चीज़ तलाक़ है।" लेकिन हमारे मआशरे में इसको बसा अवक़ात कुफ़्र तक पहुँचा दिया जाता है। लड़ाईयाँ हो रही हैं, मुक़दमात चल रहे हैं, मिज़ाजों में मुवाफ़क़त (मेल-जोल) नहीं है, एक-दूसरे को कोस रहे हैं, दिन-रात का झगड़ा है, लेकिन तलाक़ नहीं देनी। यह तर्ज़े अमल निहायत अहमक़ाना है और शरीअत की मंशा के बिल्कुल ख़िलाफ़ भी। इस आयत में आप देखेंगे कि एक तरह से तलाक़ की तरगीब दी गई है।

आयत 130

وَاِنۡ يَّتَفَرَّقَا يُغۡنِ اللّٰهُ كُلًّا مِّنۡ سَعَتِهٖ

"और अगर वह (मियाँ-बीवी) दोनो अलैहदा हो जाएँगे तो अल्लाह उनको अपनी कुशादगी से ग़नी कर देगा।"

हो सकता है कि उस औरत को भी कोई बेहतर रिश्ता मिल जाये जो उसके साथ मिज़ाजी मुवाफ़क़त रखने वाला हो और उस शौहर को भी अल्लाह तआला कोई बेहतर बीवी दे दे। मियाँ-बीवी का हर वक़्त लड़ते रहना, दंगा-फ़साद करना और अदमे मुवाफ़क़त के बावजूद तलाक़ का इख़्तियार (option) इस्तेमाल ना करना, यह सोच हमारे यहाँ हिन्दु मआशरत और ईसाईयत के असरात की वजह से पैदा हुई है। हिन्दुमत की तरह ईसाईयत में भी तलाक़ हराम है। दरअसल इंजील में तो शरीअत और क़ानून है ही नहीं, सिर्फ़ अख़्लाक़ी तालीमात हैं। चुनाँचे जिस तरह नबी अकरम ﷺ ने फ़रमाया: ((اَبْغَضُ الْحَلَالِ اِلَى اللهِ تَعَالٰى الطَّلَاقُ)) ऐसी ही कोई बात हज़रत मसीह अलै० ने भी फ़रमाई थी कि कोई शख़्स बिना वजह अपनी बीवी को तलाक़ ना दे कि मआशरे में इसके मन्फ़ी असरात मुरत्तब होने का अंदेशा है। तलाक़ शुदा औरत की दूसरी शादी ना होने की सूरत में उसके आवारा हो जाने का इम्कान है और अगर ऐसा हुआ तो उसका बवाल उसे बिना वजह तलाक़ देने वाले के सर जायेगा। लेकिन यह महज़ अख़्लाक़ी तालीम थी, कोई क़ानूनी शिक़ (article) नहीं थी। ईसाईयत का क़ानून तो वही है जो तौरात के अंदर है और हज़रत मसीह अलै० फ़रमा गये हैं कि यह ना समझो कि मैं क़ानून को ख़त्म करने आया हूँ, बल्कि हज़रत मूसा अलै० की शरीअत तुम पर बदस्तूर नाफ़िज़ रहेगी। क़ानून बहरहाल क़ानून है, अख़्लाक़ी हिदायात को क़ानून का दर्जा तो नहीं दिया जा सकता। लेकिन ईसाईयत में इस तरह की अख़्लाक़ी तालीमात को क़ानून बना दिया गया, जिसकी वजह से बिलाजवाज़ पेचीदगियाँ पैदा हुईं। चुनाँचे उनके यहाँ कोई शख़्स अपनी बीवी को उस वक़्त तक तलाक़ नहीं दे सकता जब तक उस पर बद्कारी का जुर्म साबित ना करे। लिहाज़ा वह तलाक़ देने के लिये तरह-तरह के तरीक़े इस्तेमाल करके बीवी को पहले बद्कार बना देते हैं, फिर उसका सबूत फ़राहम करते हैं, तब जाकर उससे जान छुड़ाते हैं। तो शरीअत के दुरुस्त और आसान रास्ते अगर छोड़ दिये जाएँ तो फिर इसी तरह ग़लत और मुश्किल रास्ते इख़्तियार करने पड़ते हैं। यही वजह है कि इस आयत में अदमे मुवाफ़क़त की सूरत में तलाक़ के बारे में एक तरह की तरगीब नज़र आती है।

وَكَانَ اللّٰهُ وَاسِعًا حَكِيۡمًا

"और अल्लाह बड़ी वुसअत रखने वाला, हिकमत वाला है।"

अल्लाह के ख़ज़ाने बड़े वसीअ हैं और उसका हर हुक्म हिकमत पर मब्नी होता है।

आयत 131

وَلِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الۡاَرۡضِ

"और अल्लाह ही का है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है।"

وَلَقَدۡ وَصَّيۡنَا الَّذِيۡنَ اُوۡتُوا الۡكِتٰبَ مِنۡ قَبۡلِكُمۡ وَاِيَّاكُمۡ اَنِ اتَّقُوا اللّٰهَ

"और (देखो मुसलमानों!) तुमसे पहले जिन लोगों को किताब दी गई थी उन्हें भी हमने वसीयत की थी और अब तुम्हें भी यही वसीयत है कि अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो।"

अहकामे शरीअत की तामील के सिलसिले में असल जज़्बा-ए-मुहरका तक़वा है। तक़वा के बग़ैर शरीअत भी मज़ाक बन जायेगी। रसूल अल्लाह ﷺ के एक ख़ुत्बे के यह अल्फ़ाज़ बहुत मशहूर हैं और जुमे के ख़ुत्बों में भी अक्सर इन्हें शामिल किया जाता है: ((اُوْصِيْكُمْ وَ نَفْسِىْ بِتَقْوَى اللهِ)) "मुसलमानों! मैं तुम्हें भी और अपने नफ़्स को भी अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करने की वसीयत करता हूँ।" क़ुरान हकीम में जा-बजा (जगह-जगह) अल्लाह तआला का तक़वा इख़्तियार करने की हिदायत की गई है।

सूरह तहरीम (आयत:6) में इर्शाद है: {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قُوْٓا اَنْفُسَكُمْ وَاَهْلِيْكُمْ نَارًا} "ऐ ईमान वालो, बचाओ अपने आपको और अपने अहलो अयाल (घर वालों) को आग से।" यहाँ भी तक़वा का हुक्म इन्तहाई ताकीद (ज़ोर) के साथ दिया जा रहा है।

وَاِنْ تَكْفُرُوْا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَنِيًّا حَمِيْدًا ۝١٣١

"और अगर तुम ना मानोगे तो (याद रखो कि) जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है वह अल्लाह ही का है, और अल्लाह तआला तो ख़ुद ग़नी है, अपनी ज़ात में ख़ुद सतूदह (प्रशंसनीय) सिफ़ात हैं।"

आयत 132

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ۝١٣٢

"और आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है वह अल्लाह ही का है, और अल्लाह काफ़ी है कारसाज़ होने के ऐतबार से।"

अगर मियाँ-बीवी में वाक़ई निबाह नहीं हो रहा तो बेशक वह अलैहदगी इख़्तियार कर लें, दोनों का कारसाज़ अल्लाह है। औरत भी यह समझे कि मेरा शौहर मुझ पर जो ज़ुल्म कर रहा है और साथ इंसाफ़ नहीं कर रहा है, इस सूरत में अगर मैं इससे ताल्लुक़ मुन्क़तअ कर लूँगी तो अल्लाह कारसाज़ है, वह मेरे लिये कोई रास्ता पैदा कर देगा। और इसी तरह की सोच मर्द की भी होनी चाहिये। इसके बरअक्स यह सोच इन्तहाई अहमक़ाना और ख़िलाफ़े शरीअत है कि हर सूरत में औरत से निबाह करना है, चाहे अल्लाह से बग़ावत ही क्यों ना हो जाये। लिहाज़ा हर चीज़ को उसके मक़ाम पर रखना चाहिये।

आयत 133

اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ اَيُّهَا النَّاسُ وَيَاْتِ بِاٰخَرِيْنَ ۭ

"ऐ लोगों! वह चाहे तो तुम सबको ले जाये और दूसरे लोगों को ले आये।"

अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारी कोई हैसियत नहीं। उसके सामने तुम सब नफ़्से वाहिद की तरह हो, जब चाहे अल्लाह तआला सबको नस्यम-मन्सिया (नेस्तोनाबूद) कर दे और नये लोगों को पैदा कर दे।

وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰي ذٰلِكَ قَدِيْرًا ۝١٣٣

"और यक़ीनन अल्लाह तआला इस पर क़ादिर है।"

आयत 134

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ ثَوَابَ الدُّنْيَا فَعِنْدَ اللّٰهِ ثَوَابُ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۭ

"जो कोई भी दुनिया का सवाब चाहता है तो अल्लाह के पास है सवाब दुनिया का भी और आख़िरत का भी।"

जो शख़्स अपनी सारी भाग-दौड़ और दिन-रात की मेहनत दुनिया कमाने, दौलत और जायदाद बढ़ाने, ओहदों में तरक़्क़ी पाने और माद्दी तौर पर फलने-फूलने में लगा रहा है, दूसरी तरफ़ अल्लाह के अहकाम और हुक़ूक़ को नज़रअंदाज़ कर रहा है, उसे मालूम होना चाहिये कि अल्लाह तआला के पास तो पास दुनिया के ख़ज़ाने भी हैं और आख़िरत के भी। और यह कि वह सिर्फ़ दुनियावी चीज़ों की ख़्वाहिश करके गोया समुन्दर से क़तरा हासिल करने पर एकतफ़ा कर रहा है। बक़ौल अल्लामा इक़बाल:

तू ही नादान चंद कलियों पर क़नाअत कर गया
वरना गुलशन में इलाज-ए-तंगी-ए-दामाँ भी है!

लिहाज़ा अल्लाह से दुनिया भी माँगो और आख़िरत भी। और इस तरह माँगो जिस तरह उसने माँगने का तरीक़ा बताया है: (सूरतुल बक़रह,

आयत:201) {رَبَّنَآ اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ} तुम लोग अल्लाह के साथ अपने मामलात को दुरुस्त करो, उसके साथ अपना ताल्लुक़ ख़ुलूस व इख्लास की बुनियाद पर इस्तवार (stable) करो, उसकी तरफ़ से जो ज़िम्मेदारियाँ हैं उनको अदा करो, फिर अल्लाह तआला यक़ीनन दुनिया में भी नवाज़ेगा और आख़िरत में भी।

وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًا بَصِيْرًا ۝

“और अल्लाह तआला सब कुछ सुनने वाला और देखने वाला है।”

आयात 135 से 141 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ وَلَوْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ اَوِ
الْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ ۚ اِنْ يَّكُنْ غَنِيًّا اَوْ فَقِيْرًا فَاللّٰهُ اَوْلٰى بِهِمَا ۣ فَلَا تَتَّبِعُوا
الْهَوٰٓى اَنْ تَعْدِلُوْا ۚ وَاِنْ تَلْوٗٓا اَوْ تُعْرِضُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ۝١٣٥
يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْ نَزَّلَ عَلٰي رَسُوْلِهٖ
وَالْكِتٰبِ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنْ قَبْلُ ۭ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِاللّٰهِ وَمَلٰۗىِٕكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ
وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًۢا بَعِيْدًا ۝١٣٦ اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا ثُمَّ اٰمَنُوْا ثُمَّ
كَفَرُوْا ثُمَّ ازْدَادُوْا كُفْرًا لَّمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ سَبِيْلًا ۝١٣٧ بَشِّرِ
الْمُنٰفِقِيْنَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلِـيْمَۨا ۝١٣٨ الَّذِيْنَ يَتَّخِذُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَاۗءَ مِنْ دُوْنِ
الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ اَيَبْتَغُوْنَ عِنْدَهُمُ الْعِزَّةَ فَاِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيْعًا ۝١٣٩ وَقَدْ نَزَّلَ عَلَيْكُمْ
فِي الْكِتٰبِ اَنْ اِذَا سَمِعْتُمْ اٰيٰتِ اللّٰهِ يُكْفَرُ بِهَا وَيُسْتَهْزَاُ بِهَا فَلَا تَقْعُدُوْا مَعَهُمْ حَتّٰى
يَخُوْضُوْا فِيْ حَدِيْثٍ غَيْرِهٖٓ ڮ اِنَّكُمْ اِذًا مِّثْلُهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ جَامِعُ الْمُنٰفِقِيْنَ وَالْكٰفِرِيْنَ
فِيْ جَهَنَّمَ جَمِيْعَۨا ۝١٤٠ الَّذِيْنَ يَتَرَبَّصُوْنَ بِكُمْ ۚ فَاِنْ كَانَ لَكُمْ فَتْحٌ مِّنَ اللّٰهِ قَالُوْٓا اَلَمْ
نَكُنْ مَّعَكُمْ ڮ وَاِنْ كَانَ لِلْكٰفِرِيْنَ نَصِيْبٌ ۙ قَالُوْٓا اَلَمْ نَسْتَحْوِذْ عَلَيْكُمْ وَنَمْنَعْكُمْ
مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكٰفِرِيْنَ عَلَى
الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا ۝١٤١

आयत 135

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ

“ऐ अहले ईमान, खड़े हो जाओ पूरी क़ुव्वत के साथ अद्ल को क़ायम करने के लिये अल्लाह के गवाह बन कर”

यह आयत क़ुरान करीम की अज़ीम तरीन आयतों में से है। सूरह आले इमरान (आयत18) में हम पढ़ आये हैं: {شَهِدَ اللّٰهُ اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۙ وَالْمَلٰۗىِٕكَةُ وَاُولُوا الْعِلْمِ قَاۗىِٕمًۢا بِالْقِسْطِ} “अल्लाह गवाह है कि उसके सिवा कोई मअबूद नहीं, और सारे फ़रिश्ते और अहले इल्म भी इस पर गवाह हैं, वह अद्ल का क़ायम करने वाला है।” अल्लाह तआला इस ज़मीन पर अद्ल क़ायम करना चाहता है, इसके लिये वह अपने दीन का ग़लबा चाहता है, और इस अज़ीम काम के लिये उसके कारिन्दे और सिपाही अहले ईमान ही हैं। उन्हीं के ज़रिये से अल्लाह तआला इस दुनिया में अद्ल क़ायम करेगा। लेकिन अहले ईमान को इस अज़ीम मक़सद के लिये कोशिश करनी होगी, जानों का नज़राना पेश करना होगा, ईसार करना होगा, क़ुर्बानियाँ देनी होंगी, तब जाकर कहीं दीन ग़ालिब होगा। अल्लाह तआला के यहाँ यह बहुत ही अहम मामला है। मआशरे में अद्ल व क़िस्त के क़याम की अहमियत का अंदाज़ा इससे लगाएँ कि इसके लिये जद्दो-जहद करने वालों को “अल्लाह के गवाह” कहा गया है। अद्ले इज्तमाई (Social Justice) पर इस्लाम ने जितना ज़ोर दिया है बदक़िस्मती से आज हमारा मज़हबी तबक़ा उतना ही उससे बेपरवाह है। आज के मुस्लिम मआशरों में सिरे से शऊर ही नहीं की अद्ले इज्तमाई की भी कोई अहमियत इस्लाम में है। इस्लामी क़ानूने और हुदूद व ताज़ीरात के निफ़ाज़ की अहमियत तो सब जानते हैं, लेकिन बातिल

निज़ाम की नाइंसाफ़ियाँ, यह जागीरदाराना ज़ुल्म व सितम और ग़रीबों का इस्तहसाल (exploitation) किस तरह ख़त्म होगा? सरमायादार ग़रीबों का ख़ून चूस-चूस कर रोज़-ब-रोज़ मोटे होते जा रहे हैं। यह निज़ाम एक ऐसी चक्की है जो आटा पीस-पीस कर एक ही तरफ़ डालती जा है रही है, जबकि दूसरी तरफ़ महरूमी ही महरूमी है। यहाँ दौलत का तक़सीम का निज़ाम ही ग़लत है, एक तरफ़ वसाइल की रेल-पेल है तो दूसरी तरफ़ भूख ही भूख। एक तरफ़ अमीर अमीरतर हो रहे हैं दूसरी तरफ़ ग़रीब ग़रीबतर, और ग़ुरबत तो ऐसी लानत है जो इंसान को कुफ़्र तक पहुँचा देती है, अज़रुए हदीसे नबवी ﷺ: ((كَادَ الْفَقْرُ اَنْ يَّكُوْنَ كُفْرًا)) लिहाज़ा सबसे पहले वह निज़ाम क़ायम करने की ज़रूरत है जिसमें अद्ल हो, इंसाफ़ हो, जिसमें ज़मानत दी गई हो कि हर शहरी की बुनियादी ज़रूरतों की कफ़ालत होगी। कफ़ालते आम्मा की यह ज़मानत निज़ामे ख़िलाफ़त में दी जाती है। जब निज़ाम दुरुस्त हो जाए तो फिर हुदूद व ताज़ीरात का निफ़ाज़ हो। फिर जो कोई चोरी करे उसका हाथ काटा जाए। लेकिन मौजूदा हालात में अगर इस्लामी क़वानीन नाफ़िज़ होंगे तो उनका फ़ायदा उल्टा लुटेरों और हरामख़ोरों को होगा, ब्लैक मार्केटिंग करने वाले उनसे मुस्तफ़ीद होंगे। जिन्होंने हरामख़ोरी से दौलत जमा कर रखी है, वह ख़ूब पाँव फैला कर सोएंगे। चोर का हाथ कटेगा तो उन्हें चोरी का डर रहेगा ना डाके का। तो असल काम निज़ाम का बदलना है। इसका यह मतलब नहीं कि (मआज़ अल्लाह) शरीअत नाफ़िज़ ना की जाये, बल्कि मक़सद यह है कि शरीअत नाफ़िज़ करने से पहले निज़ाम (system) को बदला जाए, दीन का निज़ाम क़ायम किया जाए और फिर इस निज़ाम को क़ायम रखने के लिये, इसको मुस्तहकम और मज़बूत करने के लिये, इसे मुस्तक़िल तौर पर चलाने के लिये क़ानून नाफ़िज़ किया जाए। क्योंकि क़ानून ही किसी निज़ाम के इस्तहकाम (स्थिरता) का ज़रिया बनता है क़ानून के सही निफ़ाज़ से ही कोई निज़ाम मज़बूत होता है।

यही मज़मून आगे चल कर सूरतुल मायदा (आयत:8) में भी आयेगा, लेकिन वहाँ इसकी तरतीब बदल गई है। वहाँ तरतीब इस तरह है: { يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَاۗءَ بِالْقِسْطِ ۡ } इस तरतीब के बदलने में एक इशारा यह भी है कि अल्लाह और अद्ल व क़िस्त गोया मुतरादिफ़ (बराबर) अल्फ़ाज़ हैं। एक जगह हुक्म है “गवाह बन जाओ अल्लाह के” और दूसरी जगह फ़रमाया: “गवाह बन जाओ क़िस्त के।” एक जगह फ़रमाया: “खड़े हो जाओ क़िस्त (अद्ल व इंसाफ़) के लिये” जबकि दूसरी जगह इर्शाद हुआ है कि “खड़े हो जाओ अल्लाह के लिये।” मालूम हुआ कि अल्लाह और क़िस्त के अल्फ़ाज़ जो एक दूसरे की जगह आये हैं, आपस में मुतरादिफ़ हैं।

وَلَوْ عَلٰٓي اَنْفُسِكُمْ اَوِ الْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ

“ख़्वाह यह (इंसाफ़ की बात और शहादत) तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ हो या तुम्हारे वालिदैन के या तुम्हारे क़राबतदारों के।”

एक मोमिन का ताल्लुक़ अद्ल व इंसाफ़ और क़िस्त के साथ होना चाहिये, रिश्तेदारी के साथ नहीं। यहाँ पर हर्फ़े जार के बदलने से मायने में होने वाली तब्दीली मद्देनज़र रहे। شهادة علی का मतलब है लोगों पर गवाही, उनके ख़िलाफ़ गवाही, जबकि شهادة لله का मतलब है अल्लाह के लिये गवाही, लिहाज़ा شُهَدَاۗءَ لِلّٰهِ के मायने हैं अल्लाह के गवाह।

اِنْ يَّكُنْ غَنِيًّا اَوْ فَقِيْرًا فَاللّٰهُ اَوْلٰى بِهِمَا ۣ

“चाहे वह शख़्स ग़नी है या फ़क़ीर, अल्लाह ही दोनों का पुश्तपनाह है।”

अल्लाह हर किसी का कफ़ील है, तुम किसी के कफ़ील नहीं हो। तुम्हें तो फ़ैसला करना है जो अद्ल व इन्साफ पर मब्नी होना चाहिये, तुम्हें किसी की जानिबदारी नहीं करनी, ना माँ-बाप की, ना भाई की ना ख़ुद अपनी। एक चोर दरवाज़ा यह भी होता है कि इसका हक़ तो नहीं बनता, लेकिन यह ग़रीब है, लिहाज़ा इसके हक़ में फ़ैसला कर दिया जाये। फ़रमाया कि फ़रीक़े मामला ख़्वाह मालदार हो या ग़रीब, तुम्हें उसकी जानिबदारी नहीं करनी। यह हुक्म हमें वाज़ेह तौर पर हमारा फ़र्ज़ याद दिलाता है कि हम सब अल्लाह के गवाह बन कर खड़े हो जाएँ। हर हक़ बात जो अल्लाह की

तरफ़ से हो उसके अलम्बरदार बन जाएँ और उस हक़ को क़ायम करने के लिये तन, मन और धन की क़ुर्बानी देने के लिये अपनी कमर कस लें।

فَلَا تَتَّبِعُوا الْهَوٰٓى اَنْ تَعْدِلُوْا ۚ وَاِنْ تَلْوٗٓا اَوْ تُعْرِضُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ۝١٣٥

"तो तुम ख़्वाहिशात की पैरवी ना करो, मबादा कि तुम अद्ल से हट जाओ। अगर तुम ज़बानों को मरोड़ोगे या ऐराज़ करोगे तो (याद रखो कि) अल्लाह तआला तुम्हारे हर अमल से पूरी तरह बाख़बर है।"

यानि अगर तुमने लगी-लपटी बात कही या हक़गोई से पहलु तही की तो जान रखो कि जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह को उसकी पूरी-पूरी ख़बर है "تَلْوٗٓا" का सही मफ़हूम आज की ज़बान में होगा chewing your words. यानि इस तरीक़े से ज़बान को हरकत देना कि बात कहना भी चाहते हैं लेकिन कह भी नहीं पा रहे हैं, हक़ बात ज़बान से निकालना नहीं चाहते, ग़लत बात निकल नहीं रही है। या फिर वैसे ही हक़ बात कहने वाली सूरते हाल का सामना करने से कन्नी कतरा रहे हैं, मौक़े से ही बच निकलना चाहते हैं। लेकिन याद रखो कि ऐसी किसी कोशिश से इंसानो को तो धोखा दिया जा सकता है मगर अल्लाह तो तुम्हारी हर सोच, हर नीयत और हर हरकत से बाख़बर है।

इसके बाद जो मज़मून आ रहा है वह शायद इस सूरह मुबारका का अहमतरीन मज़मून है।

आयत 136

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْ نَزَّلَ عَلٰي رَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنْ قَبْلُ ۭ

"ऐ ईमान वालो! ईमान लाओ अल्लाह पर, उसके रसूल ﷺ पर और उस किताब पर जो उसने नाज़िल फ़रमाई अपने रसूल ﷺ पर और उस किताब पर जो उसने पहले नाज़िल फ़रमाई।"

ईमान वालों से यह कहना कि ईमान लाओ बज़ाहिर अजीब मालूम होता है। "ऐ ईमान वालो, ईमान लाओ!" क्या मायने हुए इसके? इसका मतलब है कि इक़रार बिल् लिसान वाला ईमान तो तुम्हें मौरूसी तौर पर हासिल हो चुका है। मुसलमान माँ-बाप के घर पैदा हो गए तो विरासत में ईमान भी मिल गया, या यह कि जब पूरा क़बीला इस्लाम ले आया तो उसमें पक्के मुसलमानों के साथ कुछ कच्चे मुसलमान भी शामिल हो गए। उन्होंने भी कहा: اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَ اَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَسُوْلُ اللّٰهِ इस तरह ईमान एक दर्जे (इक़रार बिल् लिसान) में तो हासिल हो गया। यह ईमान का क़ानूनी दर्जा है। पीछे इसी सूरत (आयत:94) में हम पढ़ आए हैं कि अगर कोई शख़्स रास्ते में मिले और वह अपना इस्लाम ज़ाहिर करे तो तुम उसको यह नहीं कह सकते हो कि तुम मोमिन नहीं हो, क्योंकि जिसने ज़बान से कलमा-ए-शहादत अदा कर लिया तो क़ानूनी तौर पर वह मोमिन है। लेकिन क्या हक़ीक़ी ईमान यही है? नहीं, बल्कि हक़ीक़ी ईमान है यक़ीने क़ल्बी। इसलिये फ़रमाया: "ऐ ईमान वालो! ईमान लाओ अल्लाह पर....." इस नुक्ते को समझने के लिये हम इस आयत का तर्जुमा इस तरह करेंगे कि "ऐ अहले ईमान! ईमान लाओ अल्लाह पर जैसा कि ईमान लाने का हक़ है, मानो रसूल ﷺ को जैसा कि मानने का हक़ है....." और यह हक़ उसी वक़्त अदा होगा जब अल्लाह और उसके रसूल ﷺ पर ईमान दिल में घर कर गया हो। जैसे सहाबा किराम रज़ि० के बारे में सूरतुल हुजरात (आयत:7) में फ़रमाया गया: { وَلٰكِنَّ اللّٰهَ حَبَّبَ اِلَيْكُمُ الْاِيْمَانَ وَزَيَّنَهٗ فِيْ قُلُوْبِكُمْ } "अल्लाह ने ईमान को तुम्हारे नज़दीक महबूब बना दिया है और उसे तुम्हारे दिलों में मुज़य्यन कर दिया है।" आगे चल कर इसी सूरह में कुछ लोगों के बारे यूँ फ़रमाया: { قَالَتِ الْاَعْرَابُ اٰمَنَّا ۭ قُلْ لَّمْ تُؤْمِنُوْا وَلٰكِنْ قُوْلُوْٓا اَسْلَمْنَا وَلَمَّا يَدْخُلِ الْاِيْمَانُ فِيْ قُلُوْبِكُمْ ۭ } (आयत:14) "यह बददु लोग दावा कर रहे हैं कि हम ईमान ले आये हैं। ऐ नबी (ﷺ) इनसे कह दीजिये कि तुम हरग़िज़ ईमान

नहीं लाये हो, हाँ यूँ कह सकते हो कि हम मुसलमान हो गए हैं, लेकिन अभी तक ईमान तुम्हारे दिलों में दाख़िल नहीं हुआ।" चुनाँचे असल ईमान वह है जो दिल में दाखिल हो जाए। यह दर्जा तस्दीक़ बिल् क़ल्ब का है। याद रहे कि आयत ज़ेरे मुताअला में दरअसल रूए सुख़न मुनाफ़िक़ीन की तरफ़ है। वह ज़बानी ईमान तो लाए थे लेकिन वह ईमान असल ईमान नहीं था, उसमें दिल की तस्दीक़ शामिल नहीं थी (अरबी ज़बान से वाक़फ़ियत रखने वाले हज़रात यह नुक्ता भी नोट करें कि क़ुरान के लिये इस आयत में लफ़्ज़ नज़्ज़ला और तौरात के लिए अन्ज़ला इस्तेमाल हुआ है।)

وَمَنۡ يَّكۡفُرۡ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓـئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ وَالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ فَقَدۡ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيۡدًا ۝١٣٦

"और जो कोई कुफ़्र (इन्कार) करेगा अल्लाह का, उसके फ़रिश्तों का, उसकी किताबों का, उसके रसूलों का और क़यामत के दिन का, तो वह गुमराह हो गया और गुमराही में बहुत दूर निकल गया।"

यह तमाम आयात बहुत अहम हैं और मफ़हूम के लिहाज़ से इनमें बड़ी गहराई है।

आयत 137

اِنَّ الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا ثُمَّ كَفَرُوۡا ثُمَّ اٰمَنُوۡا ثُمَّ كَفَرُوۡا ثُمَّ ازۡدَادُوۡا كُفۡرًا

"बेशक वह लोग जो ईमान लाये, फिर कुफ़्र किया, फिर ईमान लाये, फिर कुफ़्र किया, फिर कुफ़्र में बढ़ते चले गये"

यहाँ कुफ़्र से मुराद कुफ़्रे हक़ीक़ी, कुफ़्रे मायनवी, कुफ़्रे बातिनी यानि निफ़ाक़ है, क़ानूनी कुफ़्र नहीं। क्योंकि मुनाफ़िक़ीन के यहाँ कुफ़्र व ईमान के दरमियान जो भी कशमकश और खींचा-तानी हो रही थी, वह अंदर ही अंदर हो रही थी, लेकिन ज़ाहिरी तौर पर तो उन लोगों ने इस्लाम का इंकार नहीं किया था।

لَّمۡ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغۡفِرَ لَهُمۡ وَلَا لِيَهۡدِيَهُمۡ سَبِيۡلًا ۝١٣٧

"तो अल्लाह ना उनकी मग़फिरत करने वाला है और ना वह उन्हें राहे रास्त दिखाएगा।"

वाज़ेह रहे कि मुनाफ़क़त का मामला ऐसा नहीं है कि एक ही दिन में कोई मुनाफ़िक़ हो गया हो। मुनाफ़िक़ीन में एक तो शऊरी मुनाफ़िक़ थे, जो बाक़ायदा एक फ़ैसला करके अपनी हिकमते अमली इख़्तियार करते थे, जैसे हम सूरह आले इमरान में उनकी पॉलिसी के बारे में पढ़ आए हैं कि सुबह ईमान का ऐलान करेंगे, शाम को फिर क़ाफ़िर हो जाएँगे, मुर्तद हो जाएँगे। तो मालूम हुआ कि ईमान उन्हें नसीब हुआ ही नहीं और उन्हें भी मालूम था कि वह मोमिन नहीं हैं। वह दिल से जानते थे कि हम ईमान लाये ही नहीं हैं, हम तो धोखा दे रहे हैं यह शऊरी मुनाफ़क़त है।

दूसरी तरफ़ कुछ लोग ग़ैर शऊरी मुनाफ़िक़ थे। यह वह लोग थे जिन्होंने इस्लाम तो क़ुबूल किया था, उनके दिल में धोखा देने की नीयत भी नहीं थी, लेकिन उन्हें असल सूरते हाल का अंदाज़ा नहीं था। वह समझते थे कि यह फूलों की सेज है, लेकिन उनकी तवक्क़ुआत के बिल्कुल बरअक्स वह निकला काँटो वाला बिस्तर। अब उन्हें क़दम-क़दम पर रुकावट महसूस हो रही है, इरादे में पुख़्तगी नहीं है, ईमान में गहराई नहीं है, लिहाज़ा उनका मामला "हरचे बादा बाद" वाला नहीं है। ऐसे लोगों का हाल हम सूरतुल बक़रह के आग़ाज़ (आयत:20) में पढ़ आए हैं कि कुछ रोशनी हुई तो ज़रा चल पड़े, अँधेरा हुआ तो खड़े के खड़े रह गए। कुछ हिम्मत की, दो चार क़दम चले, फिर हालात ना मुवाफ़िक़ देख कर ठिठक गये, पीछे हट गये। नतीजा यह होता था कि लोग उनको मलामत करते कि यह तुम क्या करते हो? तो अब उन्होंने यह किया कि झूठे बहाने बनाने लगे, और फिर इससे भी बढ़ कर झूठी क़समें खानी शुरू कर दीं, कि ख़ुदा की क़सम यह मजबूरी थी, इसलिये मैं रुक गया था, ऐसा तो नहीं कि मैं जिहाद में जाना

नहीं चाहता था। मेरी बीवी मर रही थी, उसे छोड़ कर मैं कैसे जा सकता था? वग़ैरह वग़ैरह। इस तरह की झूठी क़समें खाना ऐसे मुनाफ़िक़ीन का आख़री दर्जे का हरबा होता है। तो ईमान और कुफ़्र का यह मामला उनके यहाँ यूँ ही चलता रहता है, अगरचे ऊपर ईमान बिल् लिसान का पर्दा मौजूद रहता है। जब कोई शख़्स ईमान ले आया और उसने इरतदाद (स्वधर्म त्याग) का ऐलान भी नहीं किया तो क़ानूनी तौर पर तो वह मुसलमान ही रहता है, लेकिन जहाँ तक ईमान बिल् क़ल्ब का ताल्लुक़ है तो वह "مُذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ" की कैफ़ियत में होता है और उसके अंदर हर वक़्त तज़बज़ुब और अहतज़ाज़ (oscillation) की कैफ़ियत रहती है कि अभी ईमान की तरफ़ आया, फिर कुफ़्र की तरफ़ गया, फिर ईमान की तरफ़ आया, फ़िर कुफ़्र की तरफ़ गया। इसकी मिसाल बैनही (बिल्कुल) उस शख़्स की सी है जो दरिया या तालाब के गहरे पानी में डूबते हुए कभी नीचे जा रहा है, फिर हाथ-पैर मारता है तो एक लम्हे के लिये फिर ऊपर आ जाता है मगर ऊपर ठहर नहीं सकता और फ़ौरन नीचे चला जाता है। बिल्आख़िर नीचे जाकर ऊपर नहीं आता और डूब जाता है। बिल्कुल यही नक़्शा है जो इस आयत में पेश किया जा रहा है। अगली आयत में खोल कर बयान कर दिया गया है कि यह किन लोगों का तज़किरा है।

आयत 138

بَشِّرِ الْمُنٰفِقِيْنَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمَا ۙ

"(ऐ नबी ﷺ) इन मुनाफ़िक़ों को बशारत दे दीजिये कि इनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

यानि वाज़ेह तौर पर फ़रमा दिया गया कि यह लोग मुनाफ़िक़ हैं और इनको अज़ाब की बशारत भी दे दी गई। यह अज़ाब की बशारत देना तंज़िया अंदाज़ है।

यहाँ पर क़ुबूले हक़ के दावेदारों को यह हक़ीक़त अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये कि जो लोग दायरा-ए-इस्लाम में दाख़िल होते हैं, अल्लाह को अपना रब मानते हैं, उनके लिये यहाँ फूलों की सेज नहीं है, इसलिये जो शख़्स इस गिरोह में शामिल होना चाहता है उसे चाहिये कि यकसू होकर आये, दिल में तहफ्फ़ुज़ात (reservations) रख कर ना आये। यहाँ तो क़दम-क़दम पर आज़माईशें आएँगी, यह अल्लाह का अटल फ़ैसला है: (सूरतुल बक़रह, आयत:155) { وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِّنَ الْخَوْفِ وَالْجُوْعِ وَنَقْصٍ مِّنَ الْاَمْوَالِ وَالْاَنْفُسِ وَالثَّمَرٰتِ } यहाँ तो अलल ऐलान बताया जा रहा है: (सूरह आले इमरान, आयत:186) { لَتُبْلَوُنَّ فِيْٓ اَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ ۣ وَلَتَسْمَعُنَّ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَمِنَ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْٓا اَذًى كَثِيْرًا } यहाँ तो माल व जान का नुक़सान उठाना पड़ेगा, हर तरह की तल्ख़ व नाज़ेबा बातें सुननी पड़ेंगी, कड़वे घूँट भी हलक़ से उतारने पड़ेंगे, क़दम-क़दम पर ख़तरात का सामना करना पड़ेगा।

दर रहे मंज़िले लैला कि ख़तर हास्त बसे
शर्ते अव्वल क़दम ईं अस्त कि मजनूँ बाशी!

आयत 139

الَّذِيْنَ يَتَّخِذُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَاۗءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ

"जो अहले ईमान को छोड़ कर कुफ़्फ़ार को अपना दोस्त बनाते हैं।"

इन मुनाफ़िक़ीन का तरीक़ा यह भी था कि वह कुफ़्फ़ार के साथ भी दोस्ती रखते थे और अपनी अक़्ल से इस पॉलिसी पर अमल पैरा थे कि: Don't keep all your eggs in one basket. उनका ख़्याल था कि आज अगर हम सब ताल्लुक़, दोस्तियाँ छोड़ कर, यकसू होकर मुसलमानों के साथ हो गए तो कल का क्या पता? क्या मालूम कल हालात बदल जाएँ, हालात का पलड़ा कुफ़्फ़ार की तरफ़ झुक जाये। तो ऐसे मुश्किल वक़्त में फिर यही लोग काम आएँगे, इसलिये वह उनसे दोस्तियाँ रखते थे।

"क्या वह उनके क़ुर्ब से इज़्ज़त चाहते हैं?" اَيَبْتَغُوْنَ عِنْدَهُمُ الْعِزَّةَ

क्या यह लोग इज़्ज़त की तलब में उनके पास जाते हैं? क्या उनकी महफ़िलों में जगह पाकर वह मुअज़्ज़ज़ बनना चाहते हैं? जैसे आज अमेरिका जाना और सदरे अमेरिका से मिलना गोया बहुत बड़ा ऐज़ाज़ है, जिसे पाने के लिये करोड़ों रुपये ख़र्च होते हैं। चंद मिनट की ऐसी मुलाक़ात के लिये किस-किस अंदाज़ से lobbying होती है, ख़्वाह उससे कुछ भी हासिल ना हो और उनकी पॉलिसियाँ ज्यों कि त्यों चलती रहें।

"हाँलाकि इज़्ज़त तो कुल की कुल अल्लाह के इख़्तियार में है।" فَاِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيْعًا

लेकिन वह अल्लाह को छोड़ कर कहाँ इज़्ज़त ढूँढ रहे हैं?

आयत 140

"और यह बात वह तुम पर नाज़िल कर चुका है किताब में" وَقَدْ نَزَّلَ عَلَيْكُمْ فِي الْكِتٰبِ

"कि जब तुम सुनो कि अल्लाह की आयात के साथ कुफ़्र किया जा रहा है और उनका मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है" اَنْ اِذَا سَمِعْتُمْ اٰيٰتِ اللّٰهِ يُكْفَرُ بِهَا وَيُسْتَهْزَاُ بِهَا

"तो उनके साथ मत बैठो यहाँ तक कि वह किसी और बात में लग जाएँ" فَلَا تَقْعُدُوْا مَعَهُمْ حَتّٰى يَخُوْضُوْا فِيْ حَدِيْثٍ غَيْرِهٖٓ

यह सूरतुल अनआम की आयत 68 का हवाला है जिसमें मुसलमानों को हुक्म दिया गया था कि जब तुम्हारे सामने काफ़िर लोग अल्लाह की आयात का इस्तहज़ाअ (मज़ाक) कर रहे हों, क़ुरान का मज़ाक़ उड़ा रहे हों तो तुम वहाँ बैठो नहीं, वहाँ से उठ जाओ। यह मक्की आयत है। चूँकि उस वक़्त मुसलमानों में इतना ज़ोर नहीं था कि कुफ्फ़ार को ऐसी हरकतों से ज़बरदस्ती मना कर सकते इसलिये उनको बताया गया कि ऐसी महफ़िलों में तुम लोग मत बैठो। अगर किसी महफ़िल में ऐसी कोई बात हो जाए तो अहतजाजन वहाँ से उठ कर चले जाओ। ऐसा ना हो कि ऐसे बातों से तुम्हारी ग़ैरते ईमानी में भी कुछ कमी आ जाए या तुम्हारी ईमानी हिस्स कुन्द (कुंठित) पड़ जाए। हाँ जब वह लोग दूसरी बातों में मशगूल हो जाएँ तो फिर दोबारा उनके पास जाने में कोई हर्ज नहीं। दरअसल यहाँ ग़ैर मुस्लिमों से ताल्लुक़ मुन्क़तअ करना मक़सूद नहीं क्योंकि उनको तब्लीग़ करने के लिये उनके पास जाना भी ज़रूरी है।

"वरना तुम उन्हीं के मानिंद हो जाओगे।" اِنَّكُمْ اِذًا مِّثْلُهُمْ

अगर इस हालत में तुम भी उन्हीं के साथ बैठे रहोगे तो फिर तुम भी उन जैसे हो जाओगे।

"यक़ीनन अल्लाह तआला जमा करने वाला है मुनाफ़िक़ों को भी और काफ़िरों को भी जहन्नम में सबके सब।" اِنَّ اللّٰهَ جَامِعُ الْمُنٰفِقِيْنَ وَالْكٰفِرِيْنَ فِيْ جَهَنَّمَ جَمِيْعًا

आयत 141

"वो लोग जो तुम्हारे लिये इन्तेज़ार की हालत में हैं।" الَّذِيْنَ يَتَرَبَّصُوْنَ بِكُمْ

मुनाफ़िक़ तुम्हारे मामले में गर्दिशे ज़माना के मुन्तज़िर हैं। देखना चाहते हैं कि हालात का ऊँट किस करवट बैठता है। यह लोग “तेल देखो, तेल की धार देखो” की पॉलिसी अपनाये हुए हैं और नतीजे के इन्तेज़ार में हैं कि आख़री फ़तह किसकी होती है। इसलिये कि उनका तयशुदा मन्सूबा है कि दोनों तरफ़ कुछ ना कुछ ताल्लुक़ात रखो, ताकि वक़्त जैसा भी आये, जो भी सूरते हाल हो, हम उसके मुताबिक़ अपने बचाव की कुछ सूरत बना सकें।

فَاِنْ كَانَ لَكُمْ فَتْحٌ مِّنَ اللّٰهِ قَالُوْٓا اَلَمْ نَكُنْ مَّعَكُمْ

“तो अगर तुम लोगों को अल्लाह की तरफ़ से कोई फ़तह हासिल हो जाये तो यह कहेंगे कि क्या हम तुम्हारे साथ नहीं थे?”

अगर अल्लाह तआला की मदद से मुसलमान फ़तह हासिल कर लेते हैं तो वह आ जाएँगे बाते बनाते हुए कि हम भी तो आपके साथ थे, मुसलमान थे, माले ग़नीमत में से हमारा भी हिस्सा निकालिये।

وَاِنْ كَانَ لِلْكٰفِرِيْنَ نَصِيْبٌ

“और अगर कोई हिस्सा पहुँच जाबा काफ़िरों को”

कभी वक़्ती तौर पर कुफ़्फ़ार को फ़तह हासिल हो जाये, जंग में उनका पलड़ा भारी हो जाये।

قَالُوْٓا اَلَمْ نَسْتَحْوِذْ عَلَيْكُمْ وَنَمْنَعْكُمْ مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ

“तो वह कहेंगे (अपने काफ़िर साथियों से) क्या हमने तुम्हारा घेराव नहीं कर लिया था? और हमने बचाया नहीं तुमको मुसलमानों से?”

यानि हमने तो आपको मुसलमानों से बचाने का मन्सूबा बनाया हुआ था, हम तो आपके लिये आड़ बने हुए थे। आप समझते हैं कि हम मुसलमानों के साथ होकर जंग करने आये थे? नहीं, हम तो इसलिये आये थे कि वक़्त आने पर मुसलमानों के हमलों से आपको बचा सकें।

فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ

“तो अल्लाह ही फ़ैसला करेगा तुम्हारे माबैन क़यामत के दिन।”

وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكٰفِرِيْنَ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا ١٤١

“और अल्लाह अहले ईमान के मुक़ाबले में काफ़िरों को राहयाब नहीं करेगा।”

जैसा कि इससे पहले बताया जा चुका है कि सुरतुन्निसा का बड़ा हिस्सा मुनाफ़िक़ीन से ख़िताब पर मुश्तमिल है, अगरचे उनसे बराहे रास्त ख़िताब में يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ نَافَقُوْا के अल्फ़ाज़ कहीं इस्तेमाल नहीं हुए, बल्कि يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا के अल्फ़ाज़ से ही मुख़ातिब किया गया है। क्योंकि वह भी ईमान के दावेदार थे, ईमान के मुद्दई थे, क़ानूनी तौर पर मुसलमान थे। यह एक तवील मज़मून है जो आइंदा आयाते मुबारका में अंजाम पज़ीर (concluded) हो रहा है।

आयात 142 से 152 तक

اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ يُخٰدِعُوْنَ اللّٰهَ وَهُوَ خَادِعُهُمْ ۚ وَاِذَا قَامُوْٓا اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوْا كُسَالٰى ۙ
يُرَاۗءُوْنَ النَّاسَ وَلَا يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ اِلَّا قَلِيْلًا ١٤٢ۡ مُّذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ ڰ لَآ اِلٰى
هٰٓؤُلَاۗءِ وَلَآ اِلٰى هٰٓؤُلَاۗءِ ۭ وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا ١٤٣ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا
لَا تَتَّخِذُوا الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَاۗءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ
عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ١٤٤ اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ فِي الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ ۚ وَلَنْ
تَجِدَ لَهُمْ نَصِيْرًا ١٤٥ۙ اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا وَاَصْلَحُوْا وَاعْتَصَمُوْا بِاللّٰهِ وَاَخْلَصُوْا

دِيْنَهُمْ لِلّٰهِ فَاُولٰٓئِكَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ وَسَوْفَ يُؤْتِ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝١٤٦
مَا يَفْعَلُ اللّٰهُ بِعَذَابِكُمْ اِنْ شَكَرْتُمْ وَاٰمَنْتُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ شَاكِرًا عَلِيْمًا ۝١٤٧ لَا يُحِبُّ
اللّٰهُ الْجَهْرَ بِالسُّوْۗءِ مِنَ الْقَوْلِ اِلَّا مَنْ ظُلِمَ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًا عَلِيْمًا ۝١٤٨ اِنْ تُبْدُوْا
خَيْرًا اَوْ تُخْفُوْهُ اَوْ تَعْفُوْا عَنْ سُوْۗءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيْرًا ۝١٤٩ اِنَّ الَّذِيْنَ
يَكْفُرُوْنَ بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ يُّفَرِّقُوْا بَيْنَ اللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَيَقُوْلُوْنَ نُؤْمِنُ
بِبَعْضٍ وَّنَكْفُرُ بِبَعْضٍ ۙ وَّيُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّتَّخِذُوْا بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيْلًا ۝١٥٠ اُولٰٓئِكَ هُمُ
الْكٰفِرُوْنَ حَقًّا ۚ وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ۝١٥١ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ
وَلَمْ يُفَرِّقُوْا بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ اُولٰٓئِكَ سَوْفَ يُؤْتِيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا
رَّحِيْمًا ۝١٥٢

आयत 142

اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ يُخٰدِعُوْنَ اللّٰهَ

"यक़ीनन मुनाफ़िक़ कोशिश कर रहे हैं अल्लाह को धोखा देने की"

यह मज़मून सूरतुल बक़रह के दूसरे रुकूअ में भी आ चुका है। مُخَادَعَۃ बाब मुफ़ाअला का मसदर है। इस बाब में किसी के मुक़ाबले में कोशिश के मायने शामिल होते हैं। इसी सूरत में दो फ़रीक़ों में मुक़ाबला होता है और पता नहीं होता कि कौन जीतेगा और कौन हारेगा। लिहाज़ा इसका सही तर्जुमा होगा कि "वह धोखा देने की कोशिश कर रहे हैं।" इसके जवाब में अल्लाह की तरफ़ से फ़रमाया गया है:

وَهُوَ خَادِعُهُمْ ۚ

"और वह उनको धोखा देकर रहेगा।"

خَادِع सलासी मुजर्रद से इस्मुल फ़ाइल है और यह निहायत ज़ोरदार ताकीद के लिये आता है, इसलिये तर्जुमे में ताकीदी अल्फ़ाज़ आएँगे। यहाँ मुनाफ़िक़ीन के लिये धोखे वाला पहलु यह है कि अल्लाह ने उनको जो ढ़ील दी हुई है उससे वह समझ रहें हैं कि हम कामयाब हो रहे हैं, हमारे ऊपर अभी तक कोई आँच नहीं आई, कोई पकड़ नहीं हुई, कोई गिरफ़्त नहीं हुई, हम दोनों तरफ़ से बचे हुए हैं। इस हवाले से वह अपनी इस ढ़ील की वजह से बढ़ते चले जा रहे हैं। और दरहक़ीकत यही धोखा है जो अल्लाह की तरफ़ से उनको दिया जा रहा है। यानि अल्लाह ने उनको धोखे में डाल रखा है।

وَاِذَا قَامُوْٓا اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوْا كُسَالٰى ۙ

"और जब वह खड़े होते हैं नमाज़ के लिये तो खड़े होते हैं बड़ी कसलमंदी (थकावट) के साथ"

यह मुनाफ़िक़ीन जब नमाज़ के लिये खड़े होते हैं तो साफ़ नज़र आता है कि तबीयत में बशाशत नहीं है, आमादगी नहीं है। लेकिन चूँकि अपने आपको मुसलमान ज़ाहिर करना भी ज़रूरी है लिहाज़ा मजबूरन खड़े हो जाते हैं। قَامَ फ़अल है और इसके मायने हैं खड़े होना, जबकि قَائِم इससे इस्मुल फ़ाइल है। मुख़्तलिफ़ ज़बानों में आम तौर पर verb के बाद prepositions की तब्दीली से मायने और मफ़हूम बदल जाते हैं। मसलन अँग्रेज़ी में to give एक ख़ास मसदर है। अग़र to give up हो तो मायने यक्सर (radically) बदल जाएँगे। फिर यह to give in हो तो बिल्कुल ही उल्टी बात हो जायेगी। इसी तरह अरबी में भी हुरूफ़े जार के तब्दील होने से मायने बदल जाते हैं। लिहाज़ा अग़र قَامَ عَلٰی हो, जैसे {اَلرِّجَالُ قَوّٰمُوْنَ عَلَی النِّسَآءِ} में है तो इसके मायने होंगे हाकिम होना, सरबराह होना, किसी के हुक्म का नाफ़िज़ होना। लेकिन अग़र قَامَ اِلٰی हो (जैसे आयत ज़ेरे नज़र में है) तो इसका मतलब होगा किसी शय के लिये खड़े होना, किसी शय की तरफ़ खड़े होना, कोई काम करने के लिये उठना, कोई काम करने का इरादा करना। इससे पहले हम قَامَ "بِ" के साथ भी पढ़ चुके हैं: قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ ओर قَائِمًا بِالْقِسْطِ. यहाँ इसके मायने हैं किसी शय को क़ायम करना। तो आपने मुलाहिज़ा किया कि हुरूफ़े

जार (prepositions) की तब्दीली से किसी फ़अल के अंदर किस तरह इज़ाफ़ी मायने पैदा हो जाते हैं।

"महज़ लोगों को दिखाने के लिये" يُرَآءُوْنَ النَّاسَ

"और अल्लाह का ज़िक्र नहीं करते मगर बहुत कम।" وَلَا يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ اِلَّا قَلِيْلًا

यानि ज़िक्रे इलाही जो नमाज़ का असल मक़सद है {وَاَ قِمِ الصَّلٰوةَ لِذِكْرِيْ} (ताहा:14) वह उन्हें नसीब नहीं होता। मगर मुमकिन है इस बेध्यानी में किसी वक़्त कोई आयत बिजली के कड़के की तरह कड़क कर उनके शऊर में कुछ ना कुछ असरात पैदा कर दे।

.

आयत 143

"यह उसके माबैन मुज़बज़ब (होकर रह गये) हैं।" مُّذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ

कुफ़्र और ईमान के दरमियान डवाँडोल हैं, किसी तरफ़ भी यकसू नहीं हो रहे। इसी लिये क़ुरान में हज़रत इब्राहीम अलै० के तज़किरे के साथ हनीफ़ का लफ़्ज़ बार-बार आता है। दीन के बारे में अल्लाह की तरफ़ से तरगीब यही है कि यकसू हो जाओ। दुनिया में अगर इंसान कुफ़्र पर भी यकसू होगा तो कम से कम उसकी दुनिया तो बन जायेगी, लेकिन अगर दुनिया और आख़िरत दोनों बनाने हैं तो फिर ईमान के साथ यकसू होना ज़रूरी है। लेकिन जो लोग बीच में रहेंगे, इधर के ना उधर के, उनके लिये तो {خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ} के मिस्दाक़ दुनिया और आख़िरत दोनों का घाटा और नुक़सान होगा।

"ना तो यह इनकी जानिब हैं और ना ही उनकी जानिब हैं।" لَاۤ اِلٰى هٰۤؤُلَاۤءِ وَلَاۤ اِلٰى هٰۤؤُلَاۤءِ

ना अहले ईमान के साथ मुख़्लिस हैं और ना अहले कुफ़्र के साथ। ना इनके साथ यकसू हैं और ना उनके साथ।

"और जिसे अल्लाह ही ने गुमराह कर दिया हो तो उसके लिये तुम कोई रास्ता ना पाओगे।" وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا

यानि जिसकी गुमराही पर अल्लाह की तरफ़ से मोहर तस्दीक़ सब्त हो चुकी हो, उसके राहे रास्त पर आने का कोई इम्कान बाक़ी नहीं रहता।

आयत 144

"ऐ अहले ईमान, मत बनाओ काफ़िरों को अपना दिली दोस्त मुसलमानों को छोड़ कर।" يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ

यह मज़मून पहले आयत 139 में भी आ चुका है। यह भी निफ़ाक़ की एक अलामत है कि अहले ईमान को छोड़ कर काफ़िरों के साथ दोस्तियों की पींगें बढ़ाई जायें, उनको अपना हिमायती, मददगार और राज़दार बनाया जाये।

"क्या तुम चाहते हो कि तुम अपने ख़िलाफ़ अल्लाह के हाथ में एक सरीह हुज्जत दे दो?" اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا

इस तरह तुम लोग ख़ुद ही अपने ख़िलाफ़ एक हुज्जत फ़राहम कर रहे हो। जब अल्लाह तआला आख़िरत में तुम्हारा मुहासबा करेगा, तब इस सवाल का क्या जवाब दोगे कि तुम्हारी दोस्तियाँ काफ़िरों के साथ क्यों थी? इस तरह तुम्हारा यह फ़अल तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ हुज्जते क़ातअ (transverse) बन जायेगा।

अब जो आयत आ रही है वह एक ऐतबार से मुनाफ़िक़ीन के हक़ में क़ुराने हकीम की सख़्त तरीन आयत है। अगरचे बाज़ दूसरे ऐतबारात से, बल्कि एक ख़ास लतीफ़ पहलु से एक आयत इससे भी सख़्त तर है जो सूरह तौबा में आयेगी। दरअसल तवील सूरतों में से सुरतुन्निसा और सूरतुत्तौबा दो ऐसी सूरतें हैं जिनमें निफ़ाक़ का मज़मून बहुत ज़्यादा तफ़सील के साथ आया है।

आयत 145

إِنَّ الْمُنَافِقِينَ فِي الدَّرْكِ الْأَسْفَلِ مِنَ النَّارِ وَلَنْ تَجِدَ لَهُمْ نَصِيرًا

"यक़ीनन मुनाफ़िक़ीन आग के सबसे निचले तब्क़े में होंगे, और तुम ना पाओगे उनके लिये कोई मददगार।"

अगली आयत में उन लोगों के लिये एक रिआयत का ऐलान है। मुनाफ़क़त का पर्दा कुल्ली तौर पर तो सूरह तौबा में चाक होगा। यानि उनके लिये आख़री अहकाम सन् 9 हिजरी में आये थे, जबकि अभी सन् 4 हिजरी के दौर की बातें हो रही हैं। तो अभी उनके लिये रिआयत रखी गई है कि तौबा का दरवाज़ा अभी खुला है। फ़रमाया:

आयत 146

إِلَّا الَّذِينَ تَابُوا وَأَصْلَحُوا وَاعْتَصَمُوا بِاللَّهِ

"सिवाय उन लोगों के जो तौबा करें और इस्लाह कर लें और अल्लाह से चिमट जायें"

अल्लाह का दामन मज़बूती से थाम लें, ईमान के साथ यकसू हो जायें। "كُونُوا رَبَّانِيِّينَ" के मिस्दाक़ अल्लाह वाले बन जायें। शैतान से मोहब्बत की पींगें ना बढ़ायें, शैतान के एजेंटों से दोस्तियाँ ना करें, और अपने आपको दीन इस्लाम के साथ वाबस्ता कर लें कि हरचे बादा बाद, अब तो हम इस्लाम की इस कश्ती पर सवार हो गये हैं, अगर यह तैरती है तो हम तैरेंगे, और अगर ख़ुदा ना ख़ास्ता इसके मुक़द्दर में कोई हादसा है तो हम भी उस हादसे में शामिल होंगे।

وَأَخْلَصُوا دِينَهُمْ لِلَّهِ

"और अपनी इताअत को अल्लाह के लिये ख़ालिस कर लें"

यह ना हो कि ज़िन्दगी के कुछ हिस्से में इताअत अल्लाह की हो रही है, कुछ हिस्से में किसी और की हो रही है कि क्या करें जी! यह मामला तो रिवाज का है, बिरादरी को छोड़ तो नहीं सकते ना! मालूम हुआ आपने अपनी इताअत के अलैहदा-अलैहदा हिस्से कर लिये हैं और फिर उनमें इंतख़ाब करते हैं कि यह हिस्सा तो बिरादरी की इताअत में जायेगा और यह हिस्सा अल्लाह की इताअत के लिये होगा। इताअत जब तक कुल की कुल अल्लाह के लिये ना हो, अल्लाह के यहाँ क़ाबिले क़ुबूल नहीं है। सूरतुल बक़रह (आयत:193) में हमने पढ़ा था: { وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ } यहाँ पर दीन पूरे का पूरा अल्लाह के लिये हो जाने का मतलब यह है कि इज्तमाई सतह पर दीन अल्लाह के लिये हो जाये, यानि इस्लामी रियासत क़ायम हो जाये, पूरा इस्लामी निज़ाम क़ायम हो जाये, शरीअते इस्लामी का निफ़ाज़ अमल में आ जाये। और अगर यह नहीं है तो कम से कम एक शख़्स इन्फ़रादी सतह पर तो अपनी इताअत अल्लाह के लिये ख़ालिस कर ले। यह गोया इन्फ़रादी तौहीदी अमली है।

فَاُولٰۗىِٕكَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ وَسَوْفَ يُؤْتِ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ١٤٦

"तो फिर यह लोग अहले ईमान में शामिल हो जाएँगे, और अल्लाह अहले ईमान को अनक़रीब बहुत बड़ा अजर अता फ़रमाएगा।"

यानि अभी तौबा का दरवाज़ा खुला है, सच्ची तौबा करने के बाद उनको माफ़ी मिल सकती है। अभी उनके लिये point of no return नहीं आया है।

आयत 147

مَا يَفْعَلُ اللّٰهُ بِعَذَابِكُمْ

"(ऐ मुनाफ़िक़ों ज़रा सोचो!) अल्लाह तुम्हें अज़ाब देकर क्या करेगा?"

अल्लाह तआला मआज़ अल्लाह कोई इज़ा पसंद (sadist) हस्ती नहीं है कि उसे लोगों को दुख पहुँचा कर खुशी होती हो। इस तरह के रवैये तो perverted क़िस्म के इंसानों के होते हैं, जिनकी शख़्सियतें मस्ख़ हो चुकी होती हैं, जो दूसरों को तकलीफ़ में देखते हैं तो ख़ुश होते हैं, दूसरों को तकलीफ़ और कोफ़्त पहुँचा कर उन्हें राहत हासिल होती है। लेकिन अल्लाह तो ऐसा नहीं है। इसलिये फ़रमाया कि अल्लाह तुम्हें अज़ाब देकर तुमसे क्या लेगा?

اِنْ شَكَرْتُمْ وَاٰمَنْتُمْ ۭ

"अगर तुम शुक्र और ईमान की रविश इख़्तियार करो।"

وَكَانَ اللّٰهُ شَاكِرًا عَلِــيْمًا ١٤٧

"और अल्लाह बहुत ही क़दरदानी फ़रमाने वाला और हर शय का इल्म रखने वाला है।"

जो बंदा उसके लिये काम करे, मेहनत करे, अल्लाह तआला उसकी क़द्र फ़रमाता है। और जो कोई जो कुछ भी करता है सब उसके इल्म में होता है। इंसान का कोई अमल ऐसा नहीं है जो अल्लाह के यहाँ unaccounted रह जाये, और उसे उसका अजर ना मिल सके।

अब इस सूरत के आख़री हिस्से में फ़लसफ़ा-ए-दीन के बहुत अहम बुनियादी निकात की कुछ तफ़सील आयेगी। इस ज़िमन में पहली बात तो तमद्दुनी और मआशरती मामलात ही से मुताल्लिक़ है। मआशरे के अंदर किसी बुरी बात का चर्चा करना बिलफ़अल कोई अच्छी बात नहीं है, लेकिन इसमें एक इस्तसना रखा गया है, और वह है मज़लूम का मामला। अगर मज़लूम की ज़बान से ज़ुल्म के रद्दे अमल के तौर पर कुछ नाज़ेबा कलिमात, जले-कटे अल्फ़ाज़ भी निकल जायें तो अल्लाह तआला उन्हें माफ़ कर देगा।

आयत 148

لَا يُحِبُّ اللّٰهُ الْجَــهْرَ بِالسُّوْۗءِ مِنَ الْقَوْلِ اِلَّا مَنْ ظُلِمَ ۭ

"अल्लाह को बिल्कुल पसंद नहीं है कि किसी बुरी बात को बुलन्द आवाज़ से कहा जाये, सिवाय उसके जिस पर ज़ुल्म हुआ है।"

जिसका दिल दुखा है, जिसके साथ ज़्यादती हुई है, ना सिर्फ़ यह कि उसके जवाब में उसकी ज़बान से निकलने वाले कलिमात पर गिरफ़्त नहीं, बल्कि मज़लूम की दुआ को भी क़ुबूलियत की सनद अता होती है। किसी फ़ारसी शायर ने इस मज़मून को इस तरह अदा किया है:

बतरस अज़ आहे मज़लूमा की हंगामे दुआ कर दन
इजाबत अज़ दरे हक़ बहरे इस्तक़बाल मी आयद

कि मज़लूम की आहों से डरो कि उसकी ज़बान से निकलने वाली फ़रियाद ऐसी दुआ बन जाती है जिसकी क़ुबूलियत ख़ुद अल्लाह तआला की तरफ़ से उसका इस्तक़बाल करने के लिये अर्श से आती है।

وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًا عَلِيْمًا ۝۱۴۸

"और अल्लाह सुनने वाला और जानने वाला है।"

उसे सब मालूम है कि जिसके दिल से यह आवाज़ निकली है वह कितना दुखी है। उसके अहसासात कितने मजरूह (आहत) हुए हैं।

आयत 149

اِنْ تُبْدُوْا خَيْرًا اَوْ تُخْفُوْهُ

"अगर तुम भलाई को ज़ाहिर करो या उसे छुपाओ"

जहाँ तक तो खैर का मामला है तुम उसे बुलन्द आवाज़ से कहो, ज़ाहिर करो या छुपाओ बराबर की बात है। अल्लाह तआला के लिये खैर तो हर हाल में खैर ही है, अयाँ (ज़ाहिर) हो या ख़ुफ़िया।

اَوْ تَعْفُوْا عَنْ سُوْٓءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيْرًا ۝۱۴۹

"या तुम बुराई को माफ़ कर दिया करो तो यक़ीनन अल्लाह भी माफ़ फ़रमाने वाला, क़ुदरत रखने वाला है।"

अपने साथ होने वाली ज़्यादती को माफ़ कर देना यक़ीनन नेकी का एक ऊँचा दर्जा है। इसलिये यहाँ तरगीब के अंदाज़ में मज़लूम से भी कहा जा रहा है कि अगरचे तुम्हें छूट है, तुम्हारी बदगोई की भी तुम पर कोई गिरफ़्त नहीं, लेकिन ज़्यादती की तलाफ़ी का इससे आला और बुलन्दतर दर्जा भी है, तुम उस बुलन्द दर्जे को हासिल क्यों नहीं करते? वह यह कि तुम अपने साथ होने वाली ज़्यादती को माफ़ कर दो। इसके साथ अल्लाह की क़ुदरत का ज़िक्र भी हुआ है कि इन्सान तो बसा अवक़ात बदला लेने की ताक़त ना होने के बाइस माफ़ करने पर मजबूर भी हो जाता है, जबकि अल्लाह तआला क़ादिरे मुतलक़ है, क़दीर है, वह तो जब चाहे, जैसे चाहे (there & then) ख़ताकार को फ़ौरन सज़ा देकर हिसाब चुका सकता है। लेकिन इतनी क़ुदरत के बावजूद भी वह माफ़ फ़रमा देता है।

आइन्दा आयात में फिर वहदत अल अदयान जैसे अहम मज़मून का तज़किरा होने जा रहा है और इस सिलसिले में यहाँ तमाम ग़लत नज़रियात की जड़ काटी जा रही है। इससे पहले भी यह बात ज़ेरे बहस आ चुकी है कि फ़लसफ़ा-ए-वहदत-ए-अदयान का एक हिस्सा सही है। वह यह कि असल (origin) सब अदयान की एक है। लेकिन अगर कोई यह कहे कि मुख्तलिफ़ अदयान की मौजूदा शक्लों में भी एक रंगी और हम आहंगी है तो इससे बड़ी हिमाक़त, जहालत, ज़लालत और गुमराही कोई नहीं।

यहाँ पर अब कांटे की बात बताई जा रही है कि दीन में जिस चीज़ की वजह से बुनियादी खराबी पैदा होती है वह असल में क्या है। वह ग़लती या खराबी है अल्लाह और रसूलों में तफ़रीक़! एक तफ़रीक़ तो वह है जो रसूलों के दरमियान की जाती है, और दूसरी तफ़रीक़ अल्लाह और रसूल ﷺ को अलैहदा-अलैहदा कर देने की शक्ल में सामने आती है, और यह सबसे बड़ी जहालत है। फ़ितना इन्कारे हदीस और इन्कारे सुन्नत इसी जहालत व गुमराही का शाखसाना (नतीजा) है। यह लोग अपने आप को अहले क़ुरान समझते हैं और उनका नज़रिया यह है कि रसूल ﷺ का काम क़ुरान पहुँचा देना था, सो उन्होंने पहुँचा दिया, अब असल मामला हमारे और अल्लाह के दरमियान है। अल्लाह की किताब अरबी ज़बान में है, हम इसको ख़ुद समझेंगे और इस पर अमल करेंगे। रसूल ﷺ ने अपने ज़माने में मुसलमानों को जो इसकी तशरीह समझायी थी और उस ज़माने के लोगों ने उसे क़ुबूल किया था, वह उस ज़माने के लिये थी। गोया रसूल ﷺ की तशरीह कोई दाइमी चीज़ नहीं, दाइमी शय सिर्फ़ क़ुरान है। इस तरह उन्होंने अल्लाह और रसूल ﷺ को जुदा कर दिया। यहाँ उसी गुमराही का ज़िक्र आ रहा है।

आयत 150

اِنَّ الَّذِيْنَ يَكْفُرُوْنَ بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ
وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ يُّفَرِّقُوْا بَيْنَ اللّٰهِ وَرُسُلِهٖ

"यक़ीनन वह लोग जो कुफ़्र करते हैं अल्लाह और उसके रसूलों का और वह चाहते हैं कि तफ़रीक़ कर दें अल्लाह और उसके रसूलों के माबैन"

अकबर के "दीन-ए-इलाही" का बुनियादी फ़लसफ़ा भी यही था कि बस दीन तो अल्लाह ही का है, रसूल ﷺ की निस्बत ज़रूरी नहीं, क्योंकि जब दीन की निस्बत रसूल के साथ हो जाती है तो फिर दीन रसूल के साथ मंसूब हो जाता है कि यह दीने मूसा (अलै०) है, यह दीने ईसा (अलै०) है, यह दीने मुहम्मदी ﷺ है। अगर रसूलों का यह तफ़रीक़ी अन्सर (differentiating factor) दरमियान से निकाल दिया जाये तो मज़ाहिब के इख्तलाफ़ात का ख़ात्मा हो जायेगा। अल्लाह तो सबका मुश्तरिक़ (common) है, चुनाँचे जो दीन उसी के साथ मंसूब होगा वह दीने इलाही होगा।

وَيَقُوْلُوْنَ نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَّنَكْفُرُ بِبَعْضٍ

"और वह कहते हैं कि हम कुछ को मानेंगे और कुछ को नहीं मानेंगे"

यानि अल्लाह को मानेंगे, रसूलों का मानना ज़रूरी नहीं है। अल्लाह की किताब को मानेंगे, रसूल ﷺ की सुन्नत का मानना कोई ज़रूरी नहीं है, वगैरह-वगैरह।

وَّيُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّتَّخِذُوْا بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيْلًا ۝١٥٠

"और वह चाहते हैं कि इसके बैन-बैन एक रास्ता निकाल लें।"

अल्लाह को एक तरफ़ कर दें और रसूल को एक तरफ़।

आयत 151

اُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ حَقًّا ۚ وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ۝١٥١

"यही लोग हक़ीक़त में पक्के काफ़िर हैं, और हमने इन काफ़िरों के लिये बड़ा अहानत आमेज़ अज़ाब तैयार कर रखा है।"

आयत 152

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَلَمْ يُفَرِّقُوْا بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ

"और जो लोग ईमान रखते हैं अल्लाह और उसके रसूलों पर और उन्होंने उनमें से किसी के माबैन कोई तफ़रीक़ नहीं की"

ना अल्लाह को रसूल से जुदा किया और ना रसूल को रसूल से जुदा किया। और वह कहते हैं कि हम सबको मानते हैं: لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْ رُّسُلِهٖ (अल बक़रह:285)। हम उन रसूलों को भी मानते हैं जिनके नाम क़ुरान मजीद में आ गये हैं, और यह भी मानते हैं कि उनके अलावा भी अल्लाह की तरफ़ से बेशुमार नबी और रसूल आये हैं।

اُولٰۗىِٕكَ سَوْفَ يُؤْتِيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ۝١٥٢

"यह वह लोग हैं कि जिन्हें अल्लाह उनके अज्र अता फ़रमायेगा, और अल्लाह तआला गफ़ूर और रहीम है।"

आयत 153 से 162 तक

يَسْـَٔــلُكَ اَهْلُ الْكِتٰبِ اَنْ تُنَزِّلَ عَلَيْهِمْ كِتٰبًا مِّنَ السَّمَاۗءِ فَقَدْ سَاَلُوْا مُوْسٰٓى اَكْبَرَ
مِنْ ذٰلِكَ فَقَالُوْٓا اَرِنَا اللّٰهَ جَهْرَةً فَاَخَذَتْهُمُ الصّٰعِقَةُ بِظُلْمِهِمْ ۚ ثُمَّ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ
مِنْۢ بَعْدِ مَا جَاۗءَتْهُمُ الْبَيِّنٰتُ فَعَفَوْنَا عَنْ ذٰلِكَ ۚ وَاٰتَيْنَا مُوْسٰى سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا
۝١٥٣ وَرَفَعْنَا فَوْقَهُمُ الطُّوْرَ بِمِيْثَاقِهِمْ وَقُلْنَا لَهُمُ ادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا وَّقُلْنَا
لَهُمْ لَا تَعْدُوْا فِي السَّبْتِ وَاَخَذْنَا مِنْهُمْ مِّيْثَاقًا غَلِيْظًا ۝١٥٤ فَبِمَا نَقْضِهِمْ
مِّيْثَاقَهُمْ وَكُفْرِهِمْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَقَتْلِهِمُ الْاَنْۢبِيَاۗءَ بِغَيْرِ حَقٍّ وَّقَوْلِهِمْ قُلُوْبُنَا
غُلْفٌ ۭ بَلْ طَبَعَ اللّٰهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝١٥٥ وَّبِكُفْرِهِمْ
وَقَوْلِهِمْ عَلٰي مَرْيَمَ بُهْتَانًا عَظِيْمًا ۝١٥٦ وَّقَوْلِهِمْ اِنَّا قَتَلْنَا الْمَسِيْحَ عِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ
رَسُوْلَ اللّٰهِ ۚ وَمَا قَتَلُوْهُ وَمَا صَلَبُوْهُ وَلٰكِنْ شُبِّهَ لَهُمْ ۭ وَاِنَّ الَّذِيْنَ اخْتَلَفُوْا فِيْهِ

لَفِيْ شَكٍّ مِّنْهُ ۭ مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ ۚ وَمَا قَتَلُوْهُ يَقِيْنًۢا ١٥٧ۙ بَلْ
رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ١٥٨ وَاِنْ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهٖ
قَبْلَ مَوْتِهٖ ۚ وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ يَكُوْنُ عَلَيْهِمْ شَهِيْدًا ١٥٩ۚ فَبِظُلْمٍ مِّنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا
حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبٰتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ وَبِصَدِّهِمْ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَثِيْرًا ١٦٠ۙ
وَّاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُهُوْا عَنْهُ وَاَكْلِهِمْ اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ ۭ وَاَعْتَدْنَا
لِلْكٰفِرِيْنَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ١٦١ لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُوْنَ
يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ وَالْمُقِيْمِيْنَ الصَّلٰوةَ وَالْمُؤْتُوْنَ
الزَّكٰوةَ وَالْمُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ اُولٰۗىِٕكَ سَنُؤْتِيْهِمْ اَجْرًا عَظِيْمًا ١٦٢ۧ

आयत 153

يَسْـَٔــلُكَ اَهْلُ الْكِتٰبِ اَنْ تُنَزِّلَ عَلَيْهِمْ كِتٰبًا مِّنَ السَّمَاۗءِ

"(ऐ नबी ﷺ!) अहले किताब आप ﷺ से यह मुतालबा कर रहे हैं कि आप उन पर एक किताब आसमान से उतार लायें"

यानि जैसे तौरात उतरी थी, वैसे ही तहरीरी शक्ल में एक किताब आसमान से उतरनी चाहिये। आप ﷺ तो कहते हैं मुझ पर वही आती है, लेकिन कहाँ लिखी हुई है वह वही? कौन लाया है? हमें तो पता नहीं। मूसा (अलै०) को तो उनकी किताब लिखी हुई मिली थी और वह पत्थर की तख्तियों की सूरत में उसे लेकर आये थे। आप ﷺ पर भी इसी तरह की किताब नाज़िल हो तो हम मानें।

فَقَدْ سَاَلُوْا مُوْسٰٓى اَكْبَرَ مِنْ ذٰلِكَ

"(यह तअज्जुब की बात नहीं) इन्होंने मूसा (अलै०) से इससे भी बढ़ कर मुतालबे किये थे"

ऐ नबी ﷺ आप फ़िक्र ना करें, इनकी परवाह ना करें। इन्होंने, इनके आबा व अजदाद ने हज़रत मूसा (अलै०) से इससे भी बड़े-बड़े मुतालबात किये थे।

فَقَالُوْٓا اَرِنَا اللّٰهَ جَهْرَةً

"उन्होंने तो (उनसे यह भी) कहा था कि हमें दिखाओ अल्लाह को ऐलानिया"

कि हम ख़ुद अपनी आँखों से उसे देखना चाहते हैं, जब देखेंगे तब मानेंगे।

فَاَخَذَتْهُمُ الصّٰعِقَةُ بِظُلْمِهِمْ ۚ

"तो उनको आ पकड़ा था कड़क ने उनके इस गुनाह की पादाश में।"

ثُمَّ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ مِنْۢ بَعْدِ مَا جَاۗءَتْهُمُ الْبَيِّنٰتُ

"फिर उन्होंने बछड़े को मअबूद बना लिया इसके बाद कि उनके पास बहुत वाज़ेह निशानियाँ आ चुकी थीं"

उन लोगों की नाहंजारी का अंदाज़ा करें कि नौ-नौ मौअज्जज़े हज़रत मूसा (अलै०) के हाथों देखने के बाद भी उन्होंने बछड़े की परस्तिश शुरू कर दी।

فَعَفَوْنَا عَنْ ذٰلِكَ ۚ وَاٰتَيْنَا مُوْسٰى سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ١٥٣

"तो हमने इन तमाम चीज़ों से भी दरगुज़र किया, और हमने मूसा (अलै०) को अता किया बड़ा वाज़ेह गलबा।"

फ़िरऔन और उसके लाव-लश्कर को उनकी आँखों के सामने गर्क़ कर दिया।

आयत 154

وَرَفَعْنَا فَوْقَهُمُ الطُّوْرَ بِمِيْثَاقِهِمْ وَقُلْنَا لَهُمُ ادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا

"और हमने उनके सरों पर मुअल्लक़ कर दिया था तूर पहाड़ को जबकि उनसे अहद लिया जा रहा था और हमने उनसे कहा कि दरवाज़े में दाख़िल हों झुक कर"

यानि जब अरीहा (Jericho) शहर तुम्हारे हाथों फ़तह हो जाये और उसमें दाख़िल होने का मरहला आये तो अपने सरों को झुका कर आजिज़ी के साथ दाख़िल होना।

"और हमने उनसे (यह भी) कहा था कि सब्त (हफ़्ते के दिन के क़ानून) में हद से तजावुज़ ना करना"

وَّقُلْنَا لَهُمْ لَا تَعْدُوْا فِي السَّبْتِ

"और हमने उनसे (इन तमाम बातों के बारे में) बड़े गाढ़े क़ौल व क़रार लिये थे।"

وَاَخَذْنَا مِنْهُمْ مِّيْثَاقًا غَلِيْظًا ۝

आयत 155

"तो उन्होंने जो अपने इस मीसाक़ को तोड़ डाला इसके सबब"

فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ

अब उनके जराइम (जुर्मों) की फ़ेहरिस्त आ रही है, और यूँ समझिये कि मुब्तदा ही की तकरार हो रही है और इसमें जो असल ख़बर है वह गोया महज़ूफ़ है। गोया बात यूँ बनेगी: فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ لَعَنّٰهُمْ कि उन्होंने जो अपने मीसाक़ को तोडा और तोड़ते रहे, हमारे साथ उन्होंने जो भी वादे किये थे, जब उनका पास (guard) उन्होंने ना किया तो हमने उन पर लानत कर दी। लेकिन यह "لَعَنّٰهُمْ" इतनी वाज़ेह बात थी कि इसको कहने की ज़रूरत महसूस नहीं की गयी, बल्कि उनके जराइम की फ़ेहरिस्त बयान कर दी गयी।

"और उनके अल्लाह की आयात के इन्कार और अम्बिया को नाहक़ क़त्ल करने (के सबब)"

وَكُفْرِهِمْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَقَتْلِهِمُ الْاَنْۢبِيَآءَ بِغَيْرِ حَقٍّ

"और उनके इस तरह कहने (की पादाश) में कि हमारे दिल तो गिलाफ़ों में बंद हैं। बल्कि (हक़ीक़त यह है कि) अल्लाह ने उन (के दिलों) पर मोहर कर दी है उनके कुफ़्र के बाइस, पस अब वह ईमान नहीं लायेंगे मगर बहुत ही शाज़।"

وَّقَوْلِهِمْ قُلُوْبُنَا غُلْفٌ ۭ بَلْ طَبَعَ اللّٰهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝

आयत 156

"और बसबब उनके कुफ़्र के और उन बातों के जो उन्होंने मरयम के ख़िलाफ़ कीं एक बहुत बड़े बोहतान के तौर पर।"

وَّبِكُفْرِهِمْ وَقَوْلِهِمْ عَلٰي مَرْيَمَ بُهْتَانًا عَظِيْمًا ۝

हज़रत मरयम सलामुन अलैहा पर यहूदियों ने बोहतान लगाया कि उन्होंने (माज़ अल्लाह) ज़िना किया है और मसीह (अलै०) दरअसल युसुफ़ नज्जार का बेटा है। उनकी रिवायात के मुताबिक़ युसुफ़ नज्जार के साथ हज़रत मरयम की निस्बत हो चुकी थी, लेकिन अभी रुख्सती नहीं हुई थी कि उनके माबैन ताल्लुक़ क़ायम हो गया, जिसके नतीजे में यह बेटा पैदा हो गया। इस तरह उन्होंने हज़रत मसीह (अलै०) को वलदुज़्ज़िना क़रार दिया। यह है वह इतनी बड़ी बात जो यहूदी कहते हैं और आज भी इस गुमराहकुन नज़रिये पर मब्नी "Son of Man" जैसी फ़िल्में बना कर अमेरिका में चलाते हैं, जिनमें ईसाईयों को बताया जाता है कि जिस मसीह को तुम लोग Son of God कहते हो वह हक़ीक़त में Son of Man है।

आयत 157

"और बसबब उनके यह कहने के कि हमने क़त्ल किया मसीह ईसा इब्ने मरयम को, अल्लाह के रसूल को!"

وَّقَوْلِهِمْ اِنَّا قَتَلْنَا الْمَسِيْحَ عِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ رَسُوْلَ اللّٰهِ ۚ

यानि अल्लाह के रसूल को क़त्ल कर दिया! यहाँ यह "رَسُوْلَ اللّٰهِ" के अल्फ़ाज़ उनके नहीं हैं, बल्कि यह अल्लाह की तरफ़ से हैं इस्तेजाबिया निशान (sign

of exclamation) के साथ, कि अच्छा उनका दावा यह है कि उन्होंने अल्लाह के रसूल को क़त्ल किया है! जबकि रसूल तो क़त्ल हो ही नहीं सकता। अल्लाह का तो फ़ैसला है, एक तयशुदा अम्र है, अल्लाह की तरफ़ से लिखा हुआ है कि मैं और मेरे रसूल ग़ालिब आकर रहेंगे { كَتَبَ اللّٰهُ لَاَغْلِبَنَّ اَنَا وَرُسُلِيْ } (अल मुजादला:21) तो उनकी यह जुर्रात कि वह समझते हैं कि उन्होंने अल्लाह के रसूल को क़त्ल किया है!

وَمَا قَتَلُوْهُ وَمَا صَلَبُوْهُ وَلٰكِنْ شُبِّهَ لَهُمْ ۭ

"हालाँकि ना तो उन्होंने उसे क़त्ल किया और ना ही उसे सूली दी, बल्कि उसकी शबीहा (image) बना दी गयी उनके लिये।"

मामला उनके लिये मुशतबा (संदिग्ध) कर दिया गया और एक शख़्स की हज़रत मसीह अलै० जैसी सूरत बना दी गयी, उनके साथ मुशाबिहत कर दी गयी। चुनाँचे उन्होंने जिसको मसीह समझ कर सूली पर चढ़ाया, वह मसीह अलै० नहीं था, उनकी जगह कोई और था। इन्जील बरनबास से मालूम होता है कि उस शख़्स का नाम "यहूदा इस्केरियोट" (Judas Iscariot) था और वह आप (अलै०) के हवारियों में से था, वैसे उसकी नीयत कुछ और थी, उसमें बदनीयती बहरहाल नहीं थी (तफ़सील का यहाँ मौक़ा नहीं है) लेकिन चूँकि उसने आप (अलै०) को गिरफ़्तार कराया था, चुनाँचे इस गुस्ताखी की पादाश में अल्लाह तआला ने उसकी शक्ल हज़रत मसीह (अलै०) जैसी बना दी और हज़रत मसीह (अलै०) की जगह वह पकड़ा गया और सूली चढ़ा दिया गया।

وَاِنَّ الَّذِيْنَ اخْتَلَفُوْا فِيْهِ لَفِيْ شَكٍّ مِّنْهُ ۭ

"और जो लोग उसके बारे में इख़्तिलाफ़ में पड़े हुए हैं वह यक़ीनन शुकूक व शुबहात में हैं।"

उन्हें ख़ुद पता नहीं कि क्या हुआ? कैसे हुआ?

مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ ۚ وَمَا قَتَلُوْهُ يَقِيْنًا ١٥٧ۙ

"उनके पास इस ज़िमन में कोई इल्म नहीं है सिवाय इसके कि गुमान की पैरवी कर रहे हैं, और यह बात यक़ीनी है कि उन्होंने उसे क़त्ल नहीं किया।"

हज़रत मसीह अलै० हरगिज़ क़त्ल नहीं हुए और ना ही आप अलै० को सलैब पर चढ़ाया गया।

आयत 158

بَلْ رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ١٥٨

"बल्कि अल्लाह ने उसे उठा लिया अपनी तरफ़, और अल्लाह तआला ज़बरदस्त है कमाले हिकमत वाला।"

इस वाक़्ये की तफ़सील इन्जील बरनबास में मौजूद है।

आयत 159

وَاِنْ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهٖ قَبْلَ مَوْتِهٖ ۚ

"और नहीं होगा अहले किताब में से कोई भी मगर उस पर ईमान लाकर रहेगा उसकी मौत से क़ब्ल।"

यानि हज़रत मसीह अलै० फ़ौत नहीं हुए, ज़िन्दा हैं, उन्हें आसमान पर उठा लिया गया था और वह दोबारा ज़मीन पर आएंगे, और जब आएंगे तो अहले किताब में से कोई शख़्स नहीं रहेगा कि जो उन पर ईमान ना ले आये।

وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ يَكُوْنُ عَلَيْهِمْ شَهِيْدًا ١٥٩ۚ

"और क़यामत के दिन वही उनके ख़िलाफ़ गवाह (बन कर खड़ा) होगा।"

यह गवाही वाला मामला वही है जिसकी तफ़सील हम आयत 41 में पढ़ आये हैं: { فَكَيْفَ اِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍۢ بِشَهِيْدٍ وَّجِئْنَا بِكَ عَلٰي هٰٓؤُلَاۗءِ شَهِيْدًا }। कि हर नबी को अपनी उम्मत के ख़िलाफ़ गवाही देनी है। लिहाज़ा हज़रत मसीह अलै० अपनी उम्मत के ख़िलाफ़ गवाही देंगे।

आयत 160

فَبِظُلْمٍ مِّنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبٰتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ

"तो बसबब उन यहूदी बन जाने वालों की ज़ालिमाना रविश के हमने उन पर वह पाकीज़ा चीज़ें भी हराम कर दीं जो असलन उनके लिये हलाल थीं"

अल्लाह तआला की एक सुन्नत यह भी है कि कोई क़ौम अगर किसी मामले में हद से गुज़रती है तो सज़ा के तौर पर उसे हलाल चीज़ों से भी महरूम कर दिया जाता है। यहाँ पर यही उसूल बयान हो रहा है। मसलन अगर याक़ूब अलै० ने ऊँट का गोश्त खाना छोड़ दिया था तो अल्लाह तआला ने तौरात में इसकी सराहत नहीं की कि यह हराम नहीं है, यह तो महज़ तुम्हारे नबी (अलै०) का बिल्कुल ज़ाती क़िस्म का फ़ैसला है, बल्कि अल्लाह ने कहा कि ठीक है, इनकी यही सज़ा है कि इन पर तंगी रहे और इस तरह इनके करतूतों की सज़ा के तौर पर हलाल चीज़ें भी उन पर हराम कर दीं।

وَبِصَدِّهِمْ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَثِيْرًا ۝

"और बसबब इसके कि यह बकसरत अल्लाह के रास्ते से (ख़ुद रुकते हैं और दूसरों को भी) रोकते हैं।"

यह लोग अल्लाह के रास्ते से ख़ुद भी रुकते हैं और दूसरे लोगों को भी रोकते हैं। तो इस वजह से अल्लाह तआला ने इनको सज़ा दी और इन पर बाज़ हलाल चीज़ें भी हराम कर दीं।

आयत 161

وَّاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُهُوْا عَنْهُ

"और बसबब उनके सूद खाने के जबकि इससे उन्हें मना किया गया था"

शरीअते मूसवी में सूद हराम था, आज भी हराम है, लेकिन उन्होंने इस हुक्म का अपना एक मनपसंद मफ़हूम निकाल लिया, जिसके मुताबिक़ यहूदियों का आपस में सूद का लेन-देन तो हराम है, कोई यहूदी दूसरे यहूदी से सूदी लेन-देन नहीं कर सकता, लेकिन गैर यहूदी से सूद लेना जायज़ है, क्योंकि वह उनके नज़दीक Gentiles और Goyems हैं, इन्सान नुमा हैवान हैं, जिनसे फ़ायदा उठाना और उनका इस्तेहसाल करना उनका हक़ है। हम सूरह आले इमरान (आयत:75) में यहूद का यह क़ौल पढ़ चुके हैं: { لَيْسَ عَلَيْنَا فِي الْاُمِّيّٖنَ سَبِيْلٌ ۚ } कि इन उम्मिय्यीन के बारे में हम पर कोई गिरफ़्त है ही नहीं, कोई ज़िम्मेदारी है ही नहीं। हम जैसे चाहें लूट-मार करें, जिस तरह चाहें इन्हें धोखा दें, हम पर कोई मुआखज़ा नहीं। लिहाज़ा सूद खाने में उनके यहाँ अमूमी तौर पर कोई क़बाहत नहीं है।

وَاَكْلِهِمْ اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ ۭ

"और बसबब उनके लोगों के माल नाहक़ हड़प करने के।"

وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۝

"और उनमें से जो काफ़िर हैं उनके लिये हमने बहुत दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है।"

आयत 162

لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُوْنَ

"अलबत्ता जो लोग उनमें से पुख्ता इल्म वाले हैं और अहले ईमान हैं"

यानि यहूद में से अहले इल्म लोग जैसे अब्दुल्लाह बिन सलाम (अलै०) और ऐसे ही रास्तबाज़ लोग जिन्होंने तौरात के इल्म की बिना पर नबी आखिरुज्ज़मान ﷺ की तस्दीक़ की और आप ﷺ पर ईमान लाये।

يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ

"वह ईमान रखते हैं उस पर जो (ऐ नबी ﷺ) आप ﷺ पर नाज़िल किया गया और उस पर भी जो आप ﷺ से पहले नाज़िल किया गया"

وَالْمُقِيْمِيْنَ الصَّلٰوةَ وَالْمُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَالْمُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ

"और वह नमाज़ क़ायम करने वाले हैं, ज़कात अदा करने वाले हैं, और ईमान रखने वाले हैं अल्लाह पर भी और यौमे आख़िरत पर भी"

اُولٰۗىِٕكَ سَنُؤْتِيْهِمْ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝١٦٢ۧ

"यह वह लोग हैं जिन्हें हम ज़रूर अज्रे अज़ीम अता फ़रमाएंगे।"

इन आयात में अभी भी थोड़ी सी गुंजाइश रखी जा रही है कि अहले किताब में से कोई ऐसा अन्सर (तत्व) अगर अब भी मौजूद हो जो हक़ की तरफ़ माइल हो, अब भी अगर कोई सलीमुल फ़ितरत फ़र्द कहीं कोने खुदरे में पड़ा हो, अगर इस कान में हीरे का कोई टुकड़ा कहीं अभी तक पड़ा रह गया हो, तो वह भी निकल आये इससे पहले कि आखरी दरवाज़ा भी बंद कर दिया जाये। तो अभी आखरी दरवाज़ा ना तो मुनाफ़िक़ीन पर बंद किया गया है और ना इन अहले किताब पर, बल्कि لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ फ़रमा कर एक दफ़ा फिर सिलाये आम दे दी गयी है कि अहले किताब में से अब भी अगर कुछ लोग माइल बाहक़ हैं तो वह मुतवज्ज हो जायें।

आयत 163 से 169 तक

اِنَّآ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ كَمَآ اَوْحَيْنَآ اِلٰى نُوْحٍ وَّالنَّبِيّٖنَ مِنْۢ بَعْدِهٖ ۚ وَاَوْحَيْنَآ اِلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ
وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ وَعِيْسٰى وَاَيُّوْبَ وَيُوْنُسَ وَهٰرُوْنَ
وَسُلَيْمٰنَ ۚ وَاٰتَيْنَا دَاوٗدَ زَبُوْرًا ۝١٦٣ۚ وَرُسُلًا قَدْ قَصَصْنٰهُمْ عَلَيْكَ مِنْ قَبْلُ
وَرُسُلًا لَّمْ نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ ۭ وَكَلَّمَ اللّٰهُ مُوْسٰى تَكْلِيْمًا ۝١٦٤ۚ رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ
وَمُنْذِرِيْنَ لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌۢ بَعْدَ الرُّسُلِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا
۝١٦٥ لٰكِنِ اللّٰهُ يَشْهَدُ بِمَآ اَنْزَلَ اِلَيْكَ اَنْزَلَهٗ بِعِلْمِهٖ ۚ وَالْمَلٰۗىِٕكَةُ يَشْهَدُوْنَ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ
شَهِيْدًا ۝١٦٦ۭ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ قَدْ ضَلُّوْا ضَلٰلًۢا بَعِيْدًا ۝١٦٧
اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَظَلَمُوْا لَمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ طَرِيْقًا ۝١٦٨ۙ اِلَّا
طَرِيْقَ جَهَنَّمَ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَي اللّٰهِ يَسِيْرًا ۝١٦٩

इस रुकूअ के शुरू में अम्बिया और रसूलों के नामों का एक ख़ूबसूरत गुलदस्ता नज़र आता है। क़ुरान पाक में मुतअद्दिद (कई) ऐसे मक़ामात हैं जहाँ ऐसे गुलदस्ते ख़ूबसूरती से सजाये गये हैं। यहाँ आपको पे-बा-पे अम्बिया और रसूलों के नाम मिलेंगे और फिर उनमें से बाज़ की इज़ाफ़ी शानों का ज़िक्र भी मिलेगा। इसके बाद फ़लसफ़ा-ए-क़ुरान के ऐतबार से एक बहुत अहम आयत भी आयेगी, जिसमें नबुवत का बुनियादी मक़सद और असासी फ़लसफ़ा बयान किया गया है।

आयत 163

اِنَّآ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ كَمَآ اَوْحَيْنَآ اِلٰى نُوْحٍ وَّالنَّبِيّٖنَ مِنْۢ بَعْدِهٖ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ) हमने आप ﷺ की जानिब भी वही की है जैसे हमने नूह (अलै०) और उनके बाद बहुत से अम्बिया पर वही की थी।"

وَاَوْحَيْنَآ اِلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ

"और हमने इब्राहीम (अलै०), इस्माइल (अलै०), इस्हाक़ (अलै०), याक़ूब (अलै०) और उनकी औलाद की तरफ़ भी वही की"

وَعِيۡسٰى وَاَيُّوۡبَ وَيُوۡنُسَ وَهٰرُوۡنَ وَسُلَيۡمٰنَ‌ۚ وَاٰتَيۡنَا دَاوٗدَ زَبُوۡرًا‌ ۚ‏

"और ईसा (अलै०), अय्यूब (अलै०), युनुस (अलै०), हारुन (अलै०) और सुलेमान (अलै०) की तरफ़ (भी वही की)। और दाऊद (अलै०) को तो हमने ज़बूर (जैसी किताब) अता फ़रमायी।"

आयत 164

وَرُسُلًا قَدۡ قَصَصۡنٰهُمۡ عَلَيۡكَ مِنۡ قَبۡلُ وَرُسُلًا لَّمۡ نَقۡصُصۡهُمۡ عَلَيۡكَ‌ ؕ

"और (भेजे) वह रसूल जिनका हम इससे पहले आप ﷺ के सामने तज़किरा कर चुके हैं और ऐसे रसूल (भी) जिनके हालात हमने आप ﷺ के सामने बयान नहीं किये"

पूरी दुनिया की तारीख बयान करना तो क़ुरान मजीद का मक़सद नहीं है कि तमाम अम्बिया व रुसुल (अलै०) की मुकम्मल फ़ेहरिस्त दे दी जाती। यह तो किताबे हिदायत है, तारीख की किताब नहीं है।

وَكَلَّمَ اللّٰهُ مُوۡسٰى تَكۡلِيۡمًا‌ ۚ‏

"और मूसा अलै० से तो कलाम किया अल्लाह ने जैसा कि कलाम किया जाता है।"

यह ख़ास हज़रत मूसा अलै० की इम्तियाज़ी शान बयान हुई है। लेकिन यह मुकलमा "مِنۡ وَرَآءِ حِجَابٍ" था, यानि परदे के पीछे से, अलबत्ता था दू-बर-दू कलाम। अब इसके बाद वह आयत आ रही है जिसमें नबुवत का असासी मक़सद (basic purpose) बयान हुआ है कि यह तमाम रसूल (अलै०) किस लिये भेजे गये थे।

आयत 165

رُسُلًا مُّبَشِّرِيۡنَ وَمُنۡذِرِيۡنَ

"यह रसूल अलै० (भेजे गये) बशारत देने वाले और ख़बरदार करने वाले बना कर"

لِئَلَّا يَكُوۡنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌ ۢ بَعۡدَ الرُّسُلِ‌ ؕ

"ताकि ना रह जाये लोगों के पास अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हुज्जत (दलील) रसूलों के आने के बाद।"

यहाँ पर एक तरफ़ لِلنَّاسِ का "ل" नोट कीजिये और दूसरी तरफ़ عَلَي اللهِ का "عَلَي"। यह दोनों हुरूफ़ मुतज़ाद (विपरीत) मायने पैदा कर रहे हैं। لِلنَّاسِ के मायने हैं लोगों के हक़ में हुज्जत, जबकि عَلَي اللهِ के मायने हैं अल्लाह के ख़िलाफ़ हुज्जत।

وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيۡزًا حَكِيۡمًا‏

"और अल्लाह ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।"

अब आप आख़िरत के अहतसाब के फ़लसफ़े को समझिये। क़यामत के दिन हर किसी का इम्तिहान होगा और इम्तिहान से फिर नतीजे निकलेंगे, कोई पास होगा और कोई फ़ेल। लेकिन इम्तिहान से पहले कुछ पढ़ाया जाना भी ज़रूरी है, किसी को जाँचने से पहले उसे कुछ दिया भी जाता है। चुनाँचे हमें देखना है कि क़यामत के इम्तिहान के लिये हमें क्या पढ़ाया गया है? इस आखरी जाँच पड़ताल से पहले हमें क्या कुछ दिया गया है? क़ुरान मजीद के बुनियादी फ़लसफ़े के मुताबिक़ अल्लाह तआला ने इन्सान को समअ, बसर और अक़्ल तीन बड़ी चीज़ें दी हैं। फिर अल्लाह तआला ने इन्सान के अन्दर रूह भी वदीयत की है और नफ्से इंसानी में खैर और शर का इल्म भी रखा है। इन बातों की बिना पर इन्सान वही-ए-इलाही की रहनुमाई के बगैर भी अल्लाह के हुज़ूर जवाबदेह (accountable) है कि जब तुम्हारी फ़ितरत में नेकी और बदी की तमीज़ रख दी गयी थी तो तुम बदी की तरफ़ क्यों गये? तो गोया अगर कोई नबी या रसूल ना भी आता, कोई किताब नाज़िल ना भी होती, तब भी अल्लाह तआला की तरफ़ से मुहासबा नाहक़ नहीं था। इसलिये कि वह बुनियादी चीज़ें जो इम्तिहान

और अहतसाब के लिये ज़रूरी थीं वह अल्लाह तआला इन्सान को दे चुका था। अलबत्ता अल्लाह तआला की सुन्नत यह रही है कि वह फिर भी इंसानों पर इत्मामे हुज्जत करता है। अब हमने यह देखना है कि हुज्जत क्या है? बुनियादी हुज्जत तो अक़्ल है जो अल्लाह ने हमें दे रखी है: { اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰٓئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْـــُٔوْلًا} (बनी इसराइल:36) इंसानी नफ्स के अन्दर नेकी और बदी की तमीज़ भी वदीयत कर दी गयी है: {وَنَفْسٍ وَّمَا سَوّٰىهَا فَاَلْهَمَهَا فُجُوْرَهَا وَتَقْوٰىهَا} (अश्शम्स:7-8) फिर इन्सान के अन्दर अल्लाह तआला की तरफ़ से रूह फूँकी गयी है। इन तमाम सलाहियतों और अहलियतों (skills) की बिना पर जवाबदेही (accountability) का जवाज़ बरहक़ है। कोई नबी आता या ना आता, अल्लाह की यह हुज्जत तमाम इंसानों पर बहरहाल क़ायम है।

इसके बावजूद भी अल्लाह तआला ने इत्मामे हुज्जत करने के लिये अपने नबी और रसूल भेजे। यह इज़ाफ़ी शय है कि अल्लाह ने तुम्ही में से कुछ लोगों को चुना, जो बड़े ही आला किरदार के लोग थे। तुम जानते थे कि यह हमारे यहाँ के बेहतरीन लोग हैं, इनके दामने किरदार पर कोई दाग़-धब्बा नहीं है, इनकी सीरत व अख़्लाक़ खुली किताब की मानिन्द तुम्हारे सामने थे। इनके पास अल्लाह ने अपनी वही भेजी और वाज़ेह तौर पर बता दिया कि इन्सान को क्या करना है और क्या नहीं करना है। इस तरह उसने तुम्हारे लिये इस इम्तिहान को आसान कर दिया, ताकि अब किसी के पास कोई उज़्र (बहाना) बाक़ी ना रह जाये, कोई यह दलील पेश ना कर सके कि मुझे तो इल्म ही नहीं था। परवरदिगार! मैं तो बेदीन माहौल में पैदा हो गया था, वहाँ सबके सब इसी रंग में रंगे हुए थे। परवरदिगार! मैं तो अपनी दो वक़्त की रोटी के धंधे में ही ऐसा मसरूफ़ रहा कि मुझे कभी होश ही नहीं आया कि दीन व ईमान और अल्लाह व आख़िरत के बारे में सोचता। लेकिन जब रसूल (अलै०) आ जाते हैं और रसूलों के आ जाने के बाद हक़ खुल कर सामने आ जाता है, हक़ व बातिल के दरमियान इम्तियाज़ बिल्कुल वाज़ेह तौर पर क़ायम हो जाता है तो फिर कोई उज़्र बाक़ी नहीं रहता। लोगों के पास अल्लाह के सामने मुहासबे के मुक़ाबले में पेश करने के लिये कोई हुज्जत बाक़ी नहीं रहती। तो यह है इत्मामे हुज्जत का फ़लसफ़ा और तरीक़ा अल्लाह की तरफ़ से।

रसूल (अलै०) इसके अलावा और क्या कर सकते हैं? किसी को ज़बरदस्ती तो हिदायत पर नहीं ला सकते। हाँ जिनके अन्दर अहसास जाग जायेगा वह रसूल (अलै०) की तालीमात की तरफ़ मुतवज्जह होंगे, उनसे फ़ायदा उठाएँगे, सीधे रास्ते पर चलेंगे। उनके लिये अल्लाह के रसूल "मुबश्शिर" होंगे, अल्लाह के फ़ज़ल और जन्नत की नेअमतों की बशारत देने वाले: { فَرَوْحٌ وَّرَيْحَانٌ ڏ وَّجَنَّتُ نَعِيْمٍ } (अल वाक़िया:89)। और जो लोग इसके बाद भी ग़लत रास्तों पर चलते रहेंगे, तअस्सुब में, ज़िद और हठधर्मी में, मफ़ादात के लालच में, अपनी चौधराहटें क़ायम रखने के लालच में, उनके लिये रसूल (अलै०) "नज़ीर" होंगे। उनको ख़बरदार करेंगे कि अब तुम्हारे लिये बदतरीन अंजाम के तौर पर जहन्नम तैयार है। तो रसूलों (अलै०) की बेअसत का बुनियादी मक़सद यही है, यानि तब्शीर और इन्ज़ार।

इस सारी वज़ाहत के बाद अब दोबारा आयत के अल्फ़ाज़ को सामने रखिये: {رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ } "रसूल भेजे गये बशारत देने वाले और ख़बरदार करने वाले बना कर।" यह तब्शीर और इन्ज़ार किस लिये? { لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَي اللّٰهِ حُجَّــةٌۢ بَعْدَ الرُّسُلِ } "ताकि बाक़ी ना रह जाये लोगों के पास अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हुज्जत, कोई उज़्र, कोई बहाना, रसूलों के आने के बाद।" {وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا} "और अल्लाह ज़बरदस्त है हकीम है।" वह अज़ीज़ है, ग़ालिब है, ज़बरदस्त है, बगैर रसूलों के भी मुहासबा कर सकता है, उसका इख़्तियार मुतलक़ है। लेकिन साथ ही साथ वह हकीम भी है, उसने मुहासबा-ए-उखरवी के लिये यह मब्नी बर हिकमत निज़ाम बनाया है। इस ज़िमन में एक बात और नोट कर लीजिये कि रिसालत का एक तकमीली मक़सद भी है जो मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर कामिल हुआ, और वह है रुए अर्ज़ी पर अल्लाह के दीन को ग़ालिब करना। आप ﷺ ने दावत का आगाज़ इसी तब्शीर और इन्ज़ार ही से फ़रमाया, जैसा कि सूरतुल अहज़ाब में इरशाद है: { يٰٓاَيُّهَا النَّبِيُّ اِنَّآ اَرْسَلْنٰكَ شَاهِدًا وَّمُبَشِّرًا وَّنَذِيْرًا } { وَّدَاعِيًا اِلَى اللّٰهِ بِاِذْنِهٖ وَسِرَاجًا مُّنِيْرًا } (आयत 45-46) बहैसियते रसूल ﷺ यह आप ﷺ की रिसालत के बुनियादी मक़सद का इज़्हार है, लेकिन

इससे बुलन्दतर दर्जे में आपकी रिसालत की तकमीली हैसियत का इज़हार सूरतुत्तौबा:33, सूरह फ़तह:28 और सूरतुस्सफ़:9 में एक जैसे अल्फ़ाज़ में हुआ है: { هُوَ الَّذِيْٓ اَرْسَلَ رَسُوْلَهٗ بِالْهُدٰى وَدِيْنِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهٗ عَلَي الدِّيْنِ كُلِّهٖ } "वही है (अल्लाह) जिसने भेजा अपने रसूल (मुहम्मद ﷺ) को अल् हुदा (क़ुरान हकीम) और दीने हक़ देकर ताकि वह उसे ग़ालिब कर दे पूरे दीन पर।" तमाम अम्बिया व रुसुल (अलै०) में यह आप ﷺ की इम्तियाज़ी शान है। मेरी किताब "नबी अकरम ﷺ का मक़सदे बेअसत" में इस मौज़ू पर तफ़सील से बहस की गयी है।

आयत 166

لٰكِنِ اللّٰهُ يَشْهَدُ بِمَآ اَنْزَلَ اِلَيْكَ اَنْزَلَهٗ بِعِلْمِهٖ ۚ وَالْمَلٰۗىِٕكَةُ يَشْهَدُوْنَ ۭ وَكَفٰي بِاللّٰهِ شَهِيْدًا ١٦٦ۭ

"लेकिन अल्लाह गवाह है कि जो कुछ उसने नाज़िल किया है (ऐ नबी ﷺ) आप ﷺ की तरफ़ वह उसने नाज़िल किया है अपने इल्म से, और फ़रिश्ते भी इस पर गवाह हैं, अगरचे अल्लाह (अकेला ही) गवाह होने के ऐतबार से काफ़ी है।"

आयत 167

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ قَدْ ضَلُّوْا ضَلٰلًۢا بَعِيْدًا ١٦٧

"बिलाशुबा जिन लोगों ने कुफ़्र किया और अल्लाह के रास्ते से रोका (ख़ुद को भी और दूसरों को भी) तो यक़ीनन वह गुमराही में बहुत दूर निकल गये हैं।"

अब आखरी रसूल ﷺ के आने के बाद भी जो लोग कुफ़्र पर अड़े रहे, अल्लाह के रास्ते से रुके रहे और दूसरों को भी रोकते रहे, वह राहे हक़ से बहक गये, भटक गये, और अपने भटकने में, बहकने में, गुमराही में बहुत दूर निकल गये हैं।

आयत 168

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَظَلَمُوْا لَمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ طَرِيْقًا ١٦٨ۙ

"यक़ीनन वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया और ज़ुल्म (शिर्क) के मुरतकिब हुए अल्लाह उन्हें हरगिज़ बख़्शने वाला नहीं है, और ना उन्हें किसी रास्ते की हिदायत देगा।"

आयत 169

اِلَّا طَرِيْقَ جَهَنَّمَ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَي اللّٰهِ يَسِيْرًا ١٦٩

"सिवाय जहन्नम के रास्ते के जिसमें वह हमेशा-हमेश रहेंगे, और यह अल्लाह पर बहुत आसान है।"

अब ज़रा इस आयत का तक़ाबुल कीजिये (इस ही सूरह की) आयत 147 के साथ {مَا يَفْعَلُ اللّٰهُ بِعَذَابِكُمْ....} "अल्लाह तुम्हें अज़ाब देकर क्या करेगा....?" यक़ीनन अल्लाह ईज़ा पसंद (sadist) नहीं है, उसे लोगों को अज़ाब देकर ख़ुशी नहीं होगी। लेकिन यह उसका ज़ाब्ता और क़ानून है, इसी पर उसने दुनिया बनाई है, और अपने इसी ज़ाब्ते और क़ानून के ऐन मुताबिक़ वह मुस्तहिक़ीन (लाभार्थियों) को जज़ा व सज़ा देगा। यह उस पर कोई भारी गुज़रने वाली बात नहीं है कि वह अपनी ही मख्लूक़ को सज़ा दे। बाज़ मलंग क़िस्म के सूफ़ी इस तरह की बातें भी करते हैं कि अल्लाह बड़ा रहीम है, क्या वह अपनी ही मख्लूक़ को जहन्नम में झोंक देगा? यह तो ऐसे ही डरावे के लिये, लोगों को राहे रास्त पर लाने के लिये अज़ाब और सज़ा की बातें की गयी हैं। जैसे बाप बच्चों को डाँटता है मैं तेरी हड्डियाँ तोड़ दूँगा, माँ कहती है मैं तेरा क़ीमा कर दूँगी। तो क्या वह सचमुच अपने बच्चों का क़ीमा कर देगी? लिहाज़ा यह तो सिर्फ़ डरावा है, हक़ीक़त में ऐसा नहीं होगा, वगैरह-वगैरह। इस तरह के ख्यालात व नज़रियात गुमराहकुन हैं। माँ के लिये तो अपने बच्चे को बड़े से बड़े क़ुसूर पर भी आग में डालना मुमकिन

नहीं है, मगर अल्लाह तआला ने फ़रमाया है: {وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيْرًا} अल्लाह के लिये यह बहुत आसान है, बहुत हल्की बात है।

आयत 170 से 175 तक

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ قَدۡ جَآءَكُمُ الرَّسُوۡلُ بِالۡحَـقِّ مِنۡ رَّبِّكُمۡ فَاٰمِنُوۡا خَيۡرًا لَّـكُمۡ‌ؕ وَاِنۡ
تَكۡفُرُوۡا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ‌ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيۡمًا حَكِيۡمًا ۝ يٰۤـاَهۡلَ
الۡـكِتٰبِ لَا تَغۡلُوۡا فِىۡ دِيۡـنِكُمۡ وَلَا تَقُوۡلُوۡا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الۡحَـقَّ‌ؕ اِنَّمَا الۡمَسِيۡحُ عِيۡسَى ابۡنُ
مَرۡيَمَ رَسُوۡلُ اللّٰهِ وَكَلِمَتُهٗ‌ ۚ اَ لۡقٰٮهَاۤ اِلٰى مَرۡيَمَ وَرُوۡحٌ مِّنۡهُ‌ فَاٰمِنُوۡا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ‌ ۚ وَلَا
تَقُوۡلُوۡا ثَلٰثَةٌ‌ ؕ اِنۡتَهُوۡا خَيۡرًا لَّـكُمۡ‌ ؕ اِنَّمَا اللّٰهُ اِلٰـهٌ وَّاحِدٌ‌ ؕ سُبۡحٰنَهٗۤ اَنۡ يَّكُوۡنَ لَهٗ وَلَدٌ‌ ۘ لَهٗ مَا
فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الۡاَرۡضِ‌ ؕ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيۡلًا ۝ لَنۡ يَّسۡتَنۡكِفَ الۡمَسِيۡحُ اَنۡ
يَّكُوۡنَ عَبۡدًا لِّلّٰهِ وَلَا الۡمَلٰۤـئِكَةُ الۡمُقَرَّبُوۡنَ‌ ؕ وَمَنۡ يَّسۡتَنۡكِفۡ عَنۡ عِبَادَتِهٖ وَيَسۡتَكۡبِرۡ
فَسَيَحۡشُرُهُمۡ اِلَيۡهِ جَمِيۡعًا ۝ فَاَمَّا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ فَيُوَفِّيۡهِمۡ
اُجُوۡرَهُمۡ وَيَزِيۡدُهُمۡ مِّنۡ فَضۡلِهٖ‌ ۚ وَاَمَّا الَّذِيۡنَ اسۡتَنۡكَفُوۡا وَاسۡتَكۡبَرُوۡا فَيُعَذِّبُهُمۡ
عَذَابًا اَلِيۡمًا ۙ وَّلَا يَجِدُوۡنَ لَهُمۡ مِّنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيۡرًا ۝ يٰۤـاَيُّهَا النَّاسُ قَدۡ
جَآءَكُمۡ بُرۡهَانٌ مِّنۡ رَّبِّكُمۡ وَاَنۡزَلۡنَاۤ اِلَيۡكُمۡ نُوۡرًا مُّبِيۡنًا ۝ فَاَمَّا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا
بِاللّٰهِ وَاعۡتَصَمُوۡا بِهٖ فَسَيُدۡخِلُهُمۡ فِىۡ رَحۡمَةٍ مِّنۡهُ وَفَضۡلٍ ۙ وَّيَهۡدِيۡهِمۡ اِلَيۡهِ صِرَاطًا
مُّسۡتَقِيۡمًا ۝

अब अगली आयात एक तरह से इस सूरह का “हर्फ़े आख़िर” हैं।

आयत 170

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ قَدۡ جَآءَكُمُ الرَّسُوۡلُ بِالۡحَـقِّ مِنۡ رَّبِّكُمۡ فَاٰمِنُوۡا خَيۡرًا لَّـكُمۡ‌ؕ

“ऐ लोगो! तुम्हारे पास आ चुका है रसूल ﷺ हक़ के साथ, तो अब तुम ईमान ले आओ, यही तुम्हारे लिये बेहतर है।”

बल्कि आखरी अल्फ़ाज़ का सही तर तर्जुमा यह होगा कि “ईमान ले आओ, इसी में तुम्हारी खैरियत है।” इस आयत के एक-एक लफ़्ज़ में बहुत ज़ोर और जलाल है और अब बात बिल्कुल दो टूक अंदाज़ और हत्मी तौर पर की जा रही है। यानि अब तुम यह नहीं कह सकते कि अल्लाह की तरफ़ से कोई रहनुमाई नहीं की गयी, हमें कुछ पता नहीं था, हम पर बात वाज़ेह नहीं हुई थी। हमारे आखरी नबी ﷺ के आ जाने के बाद तुम्हारा यह बहाना अब ख़त्म हो गया।

وَاِنۡ تَكۡفُرُوۡا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ‌ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيۡمًا حَكِيۡمًا ۝

“और अगर तुम लोग कुफ़्र पर अड़े रहोगे तो (अल्लाह का क्या बिगाड़ लोगे?) आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है वह अल्लाह ही का है, और अल्लाह अलीम भी है, हकीम भी।”

आगे अहले किताब से जो ख़िताब है उसके मुख़ातिब ख़ास तौर पर ईसाई हैं, जो हज़रत मसीह (अलै०) की अक़ीदत व मोहब्बत में हद से गुज़र गये थे।

आयत 171

يٰۤـاَهۡلَ الۡـكِتٰبِ لَا تَغۡلُوۡا فِىۡ دِيۡـنِكُمۡ وَلَا تَقُوۡلُوۡا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الۡحَـقَّ‌ؕ

“ऐ अहले किताब, अपने दीन में गुलु (मुबालग़ा) ना करो, और अल्लाह की तरफ़ कोई शय मंसूब ना करो सिवाय उसके जो हक़ हो।”

तुम आपस के मामलात में तो झूठ बोलते ही हो, मगर अल्लाह के बारे में झूठ गढ़ना, झूठ बोल कर अल्लाह पर उसे थोपना कि अल्लाह का यह हुक्म

है, अल्लाह ने यूँ कहा है, यह तो वही बात हुई: बाज़ी-बाज़ी बारीशे बाबा हम बाज़ी!

اِنَّمَا الۡمَسِيۡحُ عِيۡسَى ابۡنُ مَرۡيَمَ رَسُوۡلُ اللّٰهِ

"देखो मसीह ईसा (अलै०) इब्ने मरयम तो बस अल्लाह के रसूल (अलै०) थे"

वह अल्लाह की तरफ़ से भेजे गये एक रसूल (अलै०) थे और बस! उलूहियत (divinity) में उनका कोई हिस्सा नहीं है, वह ख़ुदा के बेटे नहीं हैं।

وَكَلِمَتُهٗ ۚ اَلۡقٰهَاۤ اِلٰى مَرۡيَمَ وَرُوۡحٌ مِّنۡهُ

"और वह उसका एक कलमा थे, जो उसने इल्क़ा किया मरयम (अलै०) पर और एक रूह थे उसकी तरफ़ से"

यानि हज़रत मरयम (अलै०) के रहम में जो हमल हुआ था वह अल्लाह के कलमा-ए-कुन के तुफ़ैल हुआ। बच्चे की पैदाइश के तबई अमल में एक हिस्सा बाप का होता है और एक माँ का। अब हज़रत मसीह (अलै०) की विलादत में माँ का हिस्सा तो पूरा मौजूद है। हज़रत मरयम (अलै०) को हमल हुआ, नौ महीने आप (अलै०) रहम में रहे, लेकिन यहाँ बाप वाला हिस्सा बिल्कुल नहीं है और बाप के बगैर ही आप (अलै०) की पैदाइश मुमकिन हुई। ऐसे मामलात में जहाँ अल्लाह की मशीयत से एक लगे-बंधे तबई अमल में से अगर कोई कड़ी अपनी जगह से हटाई जाती है तो वहाँ पर अल्लाह का मख़सूस अम्र कलमा-ए-कुन की सूरत में किफ़ायत करता है। यहाँ पर अल्लाह के "कलमे" का यही मफ़हूम है।

जहाँ तक हज़रत मसीह (अलै०) "رُوۡحٌ مِّنۡهُ" क़रार देने का ताल्लुक़ है तो अगरचे सब इंसानों की रूह अल्लाह ही की तरफ़ से है, लेकिन तमाम रूहें एक जैसी नहीं होतीं। बाज़ रूहों के बड़े-बड़े ऊँचे मरातिब होते हैं। ज़रा तसव्वुर करें रूहे मुहम्मदी ﷺ की शान और अज़मत क्या होगी! रूहे मुहम्मदी ﷺ को आम तौर पर हमारे उलमा "नूरे मुहम्मदी ﷺ" कहते हैं। इसलिये कि रूह एक नूरानी शय है। मलाइका भी नूर से पैदा हुए हैं और इंसानी अरवाह भी नूर से पैदा हुई हैं। लेकिन सब इंसानों की अरवाह बराबर नहीं हैं। हुज़ूर ﷺ की रूह की अपनी एक शान है। इसी तरह हज़रत ईसा (अलै०) की रूह की अपनी एक शान है।

فَاٰمِنُوۡا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ ۚ وَلَا تَقُوۡلُوۡا ثَلٰثَةٌ ؕ

"पस ईमान लाओ अल्लाह पर और उसके रसूलों पर, और तसलीस (तीन ख़ुदाओं) का दावा मत करो।"

اِنۡتَهُوۡا خَيۡرًا لَّكُمۡ ؕ

"बाज़ आ जाओ, इसी में तुम्हारी बेहतरी (ख़ैरियत) है।"

यह मत कहो कि उलूहियत तीन में है। एक में तीन और तीन में एक का अक़ीदा मत गढ़ो।

اِنَّمَا اللّٰهُ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ؕ سُبۡحٰنَهٗۤ اَنۡ يَّكُوۡنَ لَهٗ وَلَدٌ ۘ

"जान लो कि अल्लाह तो बस एक ही है इलाहे वाहिद है, वह इससे पाक है कि उसका कोई बेटा हो।"

لَهٗ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الۡاَرۡضِ ؕ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيۡلًا ۟

"आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है सब कुछ उसी का है, और अल्लाह काफ़ी है बतौरे कारसाज़।"

आयत 172

لَنۡ يَّسۡتَنۡكِفَ الۡمَسِيۡحُ اَنۡ يَّكُوۡنَ عَبۡدًا لِّلّٰهِ وَلَا الۡمَلٰۤـئِكَةُ الۡمُقَرَّبُوۡنَ ؕ

"मसीह (अलै०) को तो इसमें हरगिज़ कोई आर (घृणा) नहीं है कि वह बने अल्लाह का बंदा और ना ही मलाइका-ए-मुक़र्रबीन को इसमें कोई आर है (कि उन्हें अल्लाह का बंदा समझा जाये)।"

मसीह अलै० को तो अल्लाह का बंदा होने में अपनी शान महसूस होगी। जैसे हम भी हुज़ूर ﷺ के बारे में कहते हैं: وَنَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَ رَسُوْلُهٗ। तो

अबदियत की शान तो बहुत बुलन्द व बाला है, रिसालत से भी आला और अरफ़ा। (यह एक अलैहदा मज़मून है, जिसकी तफ़सील का यह मौक़ा नहीं है।) चुनाँचे हज़रत मसीह अलै० के लिये यह कोई आर की बात नहीं है कि वह अल्लाह के बन्दे हैं।

“और जो कोई भी आर समझेगा उसकी बन्दगी में और तकब्बुर करेगा तो अल्लाह उन सबको अपने पास जमा कर लेगा।”

وَمَنْ يَّسْتَنْكِفْ عَنْ عِبَادَتِهٖ وَيَسْتَكْبِرْ فَسَيَحْشُرُهُمْ اِلَيْهِ جَمِيْعًا

आयत 173

“पस जो लोग ईमान लाये होंगे और उन्होंने नेक अमल किये होंगे तो उनको तो उनका पूरा-पूरा अज्र भी देगा और उन्हें मज़ीद भी देगा अपने ख़ास फ़ज़ल में से।”

فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ فَيُوَفِّيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ وَيَزِيْدُهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ

ऐसे लोगों को उनके अज्र के अलावा बोनस भी मिलेगा। जैसे आप किसी काम करने वाले को अच्छा काम करने पर उजरत के अलावा ईनाम (tip) भी देते हैं। अल्लाह तआला अपने ख़ज़ाना-ए-फ़ज़ल से उन्हें उनके मुक़र्रर अज्र से बढ़ कर नवाज़ेगा।

“और जिन्होंने (अबदियत के अन्दर) आर महसूस की थी और तकब्बुर किया था तो उनको वह दर्दनाक अज़ाब देगा”

وَاَمَّا الَّذِيْنَ اسْتَنْكَفُوْا وَاسْتَكْبَرُوْا فَيُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا

“और वह नहीं पाएँगे अपने लिये अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हिमायती और ना कोई मददगार।”

وَّلَا يَجِدُوْنَ لَهُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا

आयत 174

“ऐ लोगो! आ चुकी है तुम्हारे पास एक बुरहान तुम्हारे रब की तरफ़ से”

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَاۗءَكُمْ بُرْهَانٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ

यह क़ुरान मजीद और रसूल अल्लाह ﷺ दोनों की तरफ़ इशारा है। क़ुरान और मुहम्मद ﷺ मिल कर बुरहान होंगे। तआरुफ़े क़ुरान के दौरान ज़िक्र हो चुका है कि किताब और रसूल ﷺ मिल कर बय्यिना बनते हैं, जैसा कि सूरतुल बय्यिना (आयात 1 से 3) में इरशाद हुआ है। आयत ज़ेरे मुताअला में उसी बय्यिना को बुरहान कहा गया है।

“और हमने तुम्हारी तरफ़ रोशन नूर नाज़िल कर दिया है।”

وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكُمْ نُوْرًا مُّبِيْنًا

यहाँ चूँकि नूर के साथ-साथ लफ़्ज़ इन्ज़ाल आया है इसलिये इससे मुराद लाज़िमन क़ुरान मजीद ही है।

आयत 175

“पस जो लोग अल्लाह पर ईमान लाएँगे और उसके साथ चिमट जाएँगे”

فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَاعْتَصَمُوْا بِهٖ

यकसू हो जाएँगे, ख़ालिस अल्लाह वाले बन जाएँगे, मुज़बज़ब नहीं रहेंगे कि कभी इधर कभी उधर, बल्कि पूरी तरह से यकसू होकर अल्लाह के दामन से वाबस्ता हो जाएँगे।

“तो उन्हें वह दाख़िल करेगा अपनी रहमत और अपने फ़ज़ल में, और उन्हें हिदायत देगा अपनी तरफ़ सिराते मुस्तक़ीम की।”

فَسَيُدْخِلُهُمْ فِيْ رَحْمَةٍ مِّنْهُ وَفَضْلٍ ۙ وَّيَهْدِيْهِمْ اِلَيْهِ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا

وَّيَهْدِيْهِمْ اِلَيْهِ यानि अपनी तरफ़ हिदायत देगा। उन्हें सीधे रास्ते (सिराते मुस्तक़ीम) पर चलने की तौफ़ीक़ बख्शेगा और सहज-सहज, रफ़्ता-रफ़्ता उन्हें अपने ख़ास फ़ज़्ल व करम और जवारे रहमत में ले आयेगा।

आयत 176

يَسْتَفْتُوْنَكَ ۭ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِي الْكَلٰلَةِ ۭاِنِ امْرُؤٌا هَلَكَ لَيْسَ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَهٗٓ اُخْتٌ
فَلَهَا نِصْفُ مَا تَرَكَ ۚ وَهُوَ يَرِثُهَآ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهَا وَلَدٌ ۭ فَاِنْ كَانَتَا اثْنَتَيْنِ فَلَهُمَا
الثُّلُثٰنِ مِمَّا تَرَكَ ۭ وَاِنْ كَانُوْٓا اِخْوَةً رِّجَالًا وَّنِسَاۗءً فَلِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۭ
يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اَنْ تَضِلُّوْا ۭ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ١٧٦ۧ

इस आखरी में फिर एक इस्तफ़ता (formal legal) है। आयत 12 में क़ानूने विरासत के ज़िमन में एक लफ्ज़ आया था كلاله, यानि वह मर्द या औरत जिसके ना तो वालिदैन ज़िन्दा हों और ना उसकी कोई औलाद हो। उसके बारे में बताया गया था कि अगर उसके बहन-भाई हों तो उसकी विरासत का हुक्म यह है। लेकिन वह हुक्म लोगों पर वाज़ेह नहीं हो सका था। लिहाज़ा यहाँ उस हुक्म की मज़ीद वज़ाहत की गयी है। आयत 12 के हुक्म को सिर्फ़ अख्याफ़ी बहन-भाइयों के साथ मख़सूस मान लेने के बाद इस तौज़ीही हुक्म में कलाला की विरासत का हर पहलु वाज़ेह हो जाता है।

आयत 176

يَسْتَفْتُوْنَكَ ۭ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِي الْكَلٰلَةِ ۭ

"(ऐ नबी ﷺ) यह आप ﷺ से फ़तवा माँग रहे हैं। कहो कि अल्लाह तुम्हें कलाला के बारे में फ़तवा दे रहा है।"

اِنِ امْرُؤٌا هَلَكَ لَيْسَ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَهٗٓ اُخْتٌ فَلَهَا نِصْفُ مَا تَرَكَ ۚ

"अगर कोई शख्स फ़ौत हो गया और उसकी कोई औलाद नहीं (और ना माँ-बाप हैं) और उसकी सिर्फ़ एक बहन है तो उसके लिये उसके तरके में से निस्फ़ है।"

ऐसी सूरत में उसकी बहन ऐसे ही है जैसे एक बेटी हो तो उसे तरके में से आधा हिस्सा मिलेगा।

وَهُوَ يَرِثُهَآ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهَا وَلَدٌ ۭ

"और वह मर्द (भाई) उस (बहन) का मुकम्मल वारिस होगा अगर उस (बहन) की कोई औलाद नहीं।"

यानि अगर कलाला औरत थी जिसकी कोई औलाद नहीं, कोई वालिदैन नहीं तो उसका वारिस उसका भाई बन जायेगा, उसकी पूरी विरासत उसके भाई को चली जायेगी।

فَاِنْ كَانَتَا اثْنَتَيْنِ فَلَهُمَا الثُّلُثٰنِ مِمَّا تَرَكَ ۭ

"फिर अगर दो (या दो से ज़्यादा) बहनें हो तो वह तरके में से दो तिहाई की हक़दार होंगी।"

وَاِنْ كَانُوْٓا اِخْوَةً رِّجَالًا وَّنِسَاۗءً فَلِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۭ

"और अगर कई बहन-भाई हों तो एक मर्द के लिये दो औरतों के बराबर हिस्सा होगा।"

यानि भाई को बहन से दोगुना मिलेगा। अलबत्ता यह बात अहम है कि आयत 12 में जो हुक्म दिया गया था वह अख्याफ़ी बहन-भाइयों के बारे में था। यानि ऐसे बहन-भाई जिनकी माँ एक हो और बाप अलैहदा-अलैहदा हों। उस ज़माने के अरब मआशरे में तादादे अज़वाज के आम रिवाज की वजह से ऐसे मसाइल मामूलात का हिस्सा थे। बाक़ी ऐनी या अलाती बहन-भाइयों (जिनके माँ और बाप एक ही हों या माँएं अलग-अलग हों और बाप एक ही हो) का वही आम क़ानून होगा जो बेटे और बेटी का है। जिस निस्बत

से बेटे और बेटी में विरासत तक़सीम होती है ऐसे ही उन बहन-भाइयों में होगी।

يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اَنْ تَضِلُّوْا ط وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَیْءٍ عَلِیْمٌ ۱۷۶ ع

"अल्लाह वाज़ेह किये देता है तुम्हारे लिये मबादा कि तुम गुमराह हो जाओ, और अल्लाह हर चीज़ का इल्म रखने वाला है।"

तआरुफ़े क़ुरान के दौरान मैंने बताया था कि क़ुरान हकीम की एक तक़सीम सात अहज़ाब या मंज़िलों की है। इस ऐतबार से सूरतुन्निसा पर पहली मंज़िल ख़त्म हो गयी है।

فالحمد للہ علی ذٰلک!

* * *